पजाबी की प्रतिनिधि कहानियाँ

प्रतिनिधि साहित्य माला

(Representative Literature Series)

इस माला में हिन्दी तथा अन्य भाषाओं के अग्रगण्य साहित्यकारों के प्रतिनिधि कहानी नाट्य तथा काव्य साहित्य का सकलन-सम्पादन किया जा रहा है। हिन्दी में इस प्रकार का यह प्रथम प्रयास और योजना है। ये ग्रन्थ प्रत्येक पुस्तकालय वाचनालय और सस्था की शोभा बढ़ाएँगे।

स० योगेन्द्रकुमार लल्ला श्रीकृष्ण	हिन्दी लेखिकाओं की प्रतिनिधि कहानियाँ	10 00
स० पृथ्वीनाथ शास्त्री योगेन्द्रकुमार लल्ला	बगला की प्रतिनिधि हास्य कहानियाँ (सचित्र)	10 00
स० श्रीकृष्ण मनमोहन सरल	प्रतिनिधि हास्य कहानियाँ (सचित्र)	प्रेस मे
स० डा० महीपसिंह	पजाबी की प्रतिनिधि कहानियाँ	10 00
स० फिराक गोरखपुरी	उर्दू की प्रतिनिधि प्रेम कविताएँ (कामरूप)	7 50
स० अर्श मलसियानी	उर्दू की प्रतिनिधि हास्य कविताएँ (सचित्र)	7 50
स० श्रीकृष्ण मनमोहन सरल अरुण	प्रतिनिधि ऐतिहासिक कहानियाँ	8 00
स० श्रीकृष्ण अरुण मनमोहन सरल	प्रतिनिधि हास्य एकाँकी	10 00
स० श्रीकृष्ण योगेन्द्रकुमार लल्ला	प्रतिनिधि सामूहिक गान (रगीन)	4 00
स० श्रीकृष्ण योगेन्द्रकुमार लल्ला	प्रतिनिधि बाल सामूहिक गान (रगीन)	3 00
स० श्रीकृष्ण योगेन्द्रकुमार लल्ला	प्रतिनिधि बाल एकाँकी (सचित्र)	6 00
स० जयप्रकाश शास्त्री	भारत की प्रतिनिधि लोक कथाएँ	15 00
स० श्रीकृष्ण योगेन्द्रकुमार लल्ला	प्रतिनिधि रगमचीय एकाँकी	प्रेस मे
स० श्रीकृष्ण योगेन्द्रकुमार लल्ला	प्रतिनिधि हास्य व्यग्य कविताएँ	प्रेस मे
स० कुन्दनिका कापडिया नीरज	गुजराती की प्रतिनिधि कहानियाँ	प्रेस मे
स० डा० नवलबिहारी मिश्र श्रीकृष्ण योगेन्द्रकुमार लल्ला	प्रतिनिधि वैज्ञानिक कहानियाँ	प्रेस मे
स० डा० एस० एस० गुप्ता	मराठी की प्रतिनिधि हास्य कहानियाँ	प्रेस मे

आत्माराम एण्ड सस, दिल्ली

पंजाबी की प्रतिनिधि कहानियाँ

(पजाब के सामाजिक ग्राम्य तथा राजनीतिक जीवन पर पजाबी के प्रमुख लेखकों की कहानिया जो पजाबी कथा-साहित्य की अमूल्य निधि है)

सपादक
डा महीपसिंह
हिन्दी विभाग
श्रीगुरु तेगबहादुर खालसा कालेज
देवनगर नई दिल्ली ५

१९७०



आत्माराम एण्ड सस
दिल्ली नई दिल्ली जयपुर लखनऊ चण्डीगढ

PUNJABI KI PRATINIDHI KAHANIAN
(Representative Punjabi Stories)
Edited by Dr MAHIP SINGH
Price Rs 10 00

प्रकाशक रामलाल पुरी संचालक
आत्माराम एण्ड संस
कश्मीरी गेट दिल्ली ६ ।

शाखाएं हौज खास नई दिल्ली ।
चमानी मार्केट चौड़ा रास्ता जयपुर ।
१७ अशोक मार्ग लखनऊ ।
विश्वविद्यालय क्षेत्र चंडीगढ़ ।

मूल्य रुपए १० ००

मुद्रक राष्ट्रवाणी प्रिण्टर्स,
मन्दर थाना रोड
दिल्ली ६ ।

पजावी कहानी विकास की मजिले

पजाव की धरती कहानी के लिए शायद इस देश म सर्वाधिक उवरा भूमि है। तभी तो आज पजाबी क अतिरिक्त हिंदी, उर्दू और अग्रेजी भाषाओ म लिखन वाल कथाकारा म पजाव निवासी लखका का खासा बोलवाला है। यशपाल, उपेन्द्रनाथ अश्क, चद्रगुप्त विद्यालकार सुदशन कृष्णचद्र, राजेद्रसिह बेदी, अहमद नदीम कासमी हसन मटो बलवतसिंह मुल्कराज आनद और खुशवतसिंह जसे बहुत स लेखका ने भारतीय कहानी को समृद्ध बनान म अपना महत्त्वपूरण योग दिया है। वस्तुत पजाब के जन-जीवन म लोक कथाओ का अपना विशिष्ट स्थान है। हीर राझा, सोहनी महीवाल, ससी-पुन्नू, मिर्जा साहिबा आदि प्रेमकथाओ और उन पर लिखे गए किस्सा काव्या की पजाव और पजाबी म एक एसी परम्परा है जो अन्य प्रदेशो म दुलभ सी है।

शताब्दियो तक पजाव युद्धो की भूमि रहा है। जिस भूमि के निवासियो को रात की बची हुई रोटियो का आने वाली सुबह तक के लिए भरोसा नही था वहा के साहित्य म शास्त्र पक्ष की अपेक्षा लोक पक्ष का अधिक विकसित होना स्वाभाविक ही था। आधुनिक पजाबी साहित्य की विभिन्न विधाओ की समुन्नत स्थिति म इस ऐतिहासिक सत्य की छाया आज भी दिखाई देती है।

कहानी की साहित्यिक विधा को जिस रूप म हम आज पहचानते हैं उसका विकास आधुनिक युग के नवोत्थान के साथ सभी भारतीय भाषाओ म लगभग एक साथ ही हुआ। सुविधा की दृष्टि स पजाबी कहानी के इतिहास को तीन काल-खडो म बाँटा जा सकता है—

सन् १६०१ से १६३० तक पहला दौर
सन १६३० स १६५० तक दूसरा दौर
सन १६५० से आज तक तीसरा दौर

भाई वीरसिंह (सन् १८७२ १६५७) को आधुनिक पजाबी साहित्य का जन्मदाता माना जाता है। उन्होने सिख इतिहास के आधार पर कुछ उपन्यासो एव कहानियो की रचना की। यद्यपि ऐतिहासिक प्रसगो पर आधारित व कहानियाँ आज की कहानी की परिकल्पना म पूरा नही उतरती तथापि इस बात से इनकार नही किया जा सकता कि उन्होंने अपनी निबन्ध शली की उन कहानियो द्वारा पजाबी साहित्य का अपने समय म एक नवीन और अलौकिक शली प्रदान की थी।

इस दौर का दूसरा महत्त्वपूरण नाम भाई मोहनसिंह वद (सन १८८१ १६३६) का है। भाई मोहनसिंह ने पजाबी पाठका का परिचय अन्य भाषाओ म लिखी जा

रही कहानियो से करवाया। उन्होंने हिंदी, उर्दू और अंग्रेजी से बहुत सी कहानियों का पजाबी अनुवाद किया और समाज सुधार की प्रवृत्ति को साहित्य सृजन की प्रमुख प्रवृत्ति के रूप मे प्रतिष्ठित किया। पजाबी म कहानी-सग्रहो के प्रकाशन का भी भाई मोहनसिंह स ही प्रारम्भ हुआ। उनकी अनूदित और मौलिक कहानियो के तीन सग्रह 'रग बिरगे फूल (१६२७), हीरे दिआं कणिआं (१६२७) और 'किस्मत दा चक्कर' (१६३४) प्रकाशित हुए।

चरनसिंह शहीद का नाम इस दौर के लेखको म अपना एक विशिष्ट स्थान रखता है। पजाबी म हास्य और व्यग्य की कहानियो के व जन्मदाता थ और उन्होंने इस माध्यम स सामाजिक बुराइयो पर बडी गहरी चोट की। चरनसिंह शहीद न योरोपीय भाषाओ की कहानियो का अध्ययन किया था अत वह प्रभाव उनकी रचनाओ पर दृष्टिगत होता है। उनकी बहुत सी कहानियो का कल्पित हास्य पात्र बाबा बरयामा उस युग के पजाबी पाठको की गहरी जान पहचान का पात्र बन गया था। उनकी कहानियो का एक सग्रह हस्सदे हजू (हसते आंसू) प्रकाशित हुआ था जिसकी भूमिका म लेखक न बडे विश्वास स लिखा था कि य कहानियाँ आने वाली पीढी का माग दशन करेंगी।

इसी समय पजाबी म अनेक मासिक पत्रो का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ। प्रीतम (१६२३) 'फुलवाडी (१६२४) किरती (१६२६) और हस आदि पत्रो के प्रकाशन से पजाबी म एक नई साहित्यिक चेतना का विकास हुआ। इन पत्रो के लिए बहुत सी कहानियाँ लिखी गइ। इन कहानियो के लिखने वालो म लालसिंह 'कमला अकाली,' ज्ञानी हीरासिंह दद, सोहनसिंह जोश ज्ञानी गुरमुखसिंह मुसाफिर', बलवतसिंह चतरथ, अमरसिंह और कसरसिंह कवल आदि के नाम विशेष रूप से लिए जा सकते है।

कला और विषय की दृष्टि स उपयुक्त लेखको की कहानियाँ अपने पूववर्ती लखको से आगे बढ चुकी थी। सामाजिक और धार्मिक सुधारो की ओर इगित करने के साथ ही य कहानियाँ उभरती हुई राजनीतिक चेतना का सदेश भी दे रही थी। इस दृष्टि से उस दौर के तीन लेखको ज्ञानी हीरासिंह दद ज्ञानी गुरमुखसिंह मुसाफिर और सोहनसिंह जोश का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

सन १६२८ म उर्दू लिपि मे प्रकाशित पजाबी पत्र पजाबी दरबार के प्रकाशन स कहानी लेखको का एक और वग सामने आया। उनम सर्वाधिक महत्व का स्थान जोशवा फजलदीन का है। उनकी कहानियो के सग्रह अरबी अफसान' और इखलाकी कहानियाँ अपने समय म बडे लोकप्रिय हुए थ।

उसी समय रूसी हिंदी बगला और मराठी की भी बहुत सी कहानियो का पजाबी म अनुवाद हुआ। अमरसिंह ने चव न्जिआ कलिआ शीषक से टालसटाय की कुछ कहानियो का एक सग्रह प्रकाशित कराया। मुल्कराज ने प्रेमचद की और सोहनसिंह जोश न बगला और मराठी की कहानियो के पजाबी अनुवाद प्रस्तुत किय।

पजाबी कहानी के दूसरे दौर का प्रारम्भ नानकसिंह और गुरबख्शसिंह क प्रवेश स होता है। पजाबी कथा साहित्य म नानकसिंह का आगमन एक युगान्तरकारी घटना

थी। नानकसिंह अपने प्रारम्भिक लेखन काय म प्रेमचद से प्रभावित हुए थे। परन्तु उनकी कल्पना शक्ति ने उपन्यास को कहानी की अपेक्षा अधिक गहराई और अपनत्व से अपनाया। नानकसिंह उपन्यासकार के रूप म जितने सफल और लोकप्रिय हुए उतने कहानीकार के रूप म नही।

नानकसिंह की पहली कहानी 'रखडी सन १६२७ म प्रकाशित हुई। वह भारतीय पुनर्जागरण का युग था। सामाजिक कुरीतियो से मुक्त होने का प्रयास हमारी सामाजिक गतिविधियो का प्रेरणा स्रोत बना हुआ था और साहित्य की रचना इस विशिष्ट उद्देश्य की पूर्ति के लिए ही हो रही थी। नानकसिंह की कहानियो म यह सुधारवादी स्वर बहुत प्रबल रहा। साम्प्रदायिक एकता, छुआ छूत विधवाओ और वेश्याओ की समस्या अनमेल विवाह जमीदारो के अत्याचार आदि विभिन्न सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक प्रश्नो को उन्होने अपनी कहानियो म छुआ।

पजाबी के गद्य-लेखन को गुरबख्शसिंह ने सबसे अधिक गति दी और उसके स्वरूप को खूब सजाया-सँवारा। युद्धो से आक्रान्त रहने पर भी पजाब की धरती से प्रीति का पौदा कभी नही कुम्हलाया। शौर्य और प्रणय के गीत पजाबी जीवन म साथ साथ उभरते रहे हैं। परन्तु वीर गीत जहा पजाब के विभिन्न सम्प्रदायो के वीर-पुरुषो की प्रशस्ति म लिखे होने के कारण उस विशिष्ट वर्ग तक ही सीमित रहे वहा प्रणय गीत इन विभेदो से ऊपर उठकर पजाब मात्र के जन जीवन म लोकप्रिय हुए।

भाई वीरसिंह से लेकर नानकसिंह तक पजाबी जीवन के उस शौर्य पक्ष का ही एक प्रकार म पुनर्जागरण हुआ था। परन्तु प्रीति पक्ष के पुनरुद्घाटन का श्रेय गुरबख्शसिंह को है। सन १६३३ मे उन्होने प्रीतलडी का प्रकाशनारम्भ किया, जो आज भी पजाबी का सर्वाधिक लोकप्रिय मासिक पत्र है। प्रीतलडी का प्रकाशन आधुनिक पजाबी साहित्य के लिए एक बडी महत्वपूर्ण घटना थी।

गुरबख्शसिंह के कथनानुसार उन्होने अपनी पहली कहानी 'प्रीतमा सन १६१३ म लिखी थी परन्तु उनकी कहानियो का प्रथम सग्रह प्रीत कहाणिया सन १६३८ मे प्रकाशित हुआ था।

गुरबख्शसिंह पजाबी के प्रथम लेखक है जिनकी रचनाओ पर विदेशी प्रभाव सबसे पहले स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर हुआ। अपने जीवन के आरम्भिक वर्ष उन्होंने अमरिका म व्यतीत किये थे। वहाँ के जीवन का गहरा प्रभाव लेकर वे भारत म आए। स्त्री स्वातन्त्र्य और स्त्री-पुरुष के शाश्वत प्रेम सम्बन्धो पर सामाजिक बन्धनो का विरोध उनकी प्रारम्भिक रचनाओ के मुख्य स्वर बने।

गुरबख्शसिंह और नानकसिंह ने पजाबी कहानी को आधुनिक आवश्यकताओ के अनुकूल बनाने म बडा महत्त्वपूर्ण काय किया था। हर्ष की बात है कि पजाबी के ये दोनो वयोवृद्ध लेखक आज भी लिख रहे है। समय की बदलती हुई मान्यताओ की ओर से इन्होने कभी अपने आपको विमुख नही किया। सुधारवाद से प्रगतिवाद और प्रगतिवाद से मानवतावादी दृष्टिकोण की ओर इनकी लेखनी सदैव सजग रूप से अग्रसर होती रही है।

परन्तु कहानीकारों की जिस पीढ़ी ने पंजाबी कहानी को पश्चिमी कला शिल्प के स्तर तक लाने का काम किया उनमें संतसिंह सेखों, सुजानसिंह और करतारसिंह दुग्गल उल्लेखनीय हैं। सेखों ने अपना लेखन कार्य अंग्रेजी से प्रारम्भ किया और फिर वे पंजाबी में लिखने लगे। पश्चिमी देशों में लिखी जाने वाली कहानी का उन्होंने सूक्ष्मता से अध्ययन किया था। यह वह समय था जब भारत की सभी भाषाओं का साहित्य प्रगतिशील आन्दोलन से प्रभावित हो रहा था। बौद्धिक धरातल पर यथार्थवादी चित्रण, शोषित और दलित वर्ग के प्रति सहानुभूति तथा धार्मिक एवं नैतिक रूढ़ियों के प्रति विद्रोह का जो स्वर गूंज रहा था कहानियों में वह प्रभावशाली ढंग से व्यक्त हुआ। सेखों की कहानियों में जहाँ एक ओर मार्क्सवादी विचारों से प्रभावित वर्ग-संघर्ष का चित्रण हुआ वहीं दूसरी ओर फ्रायड के विचारों का प्रभाव भी दृष्टिगत हुआ। सेखों की अनेक कहानियों में दमित यौन भावना का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण हुआ है।

सेखों का पहला कहानी-संग्रह समाचार सन १९४३ में प्रकाशित हुआ था। उसके पश्चात उनके तीन चार संग्रह और प्रकाशित हो चुके हैं।

प्रगतिशील खेमे के दूसरे प्रमुख लेखक सुजानसिंह हैं। अपने लेखन-जीवन के प्रारम्भ में वे नानकसिंह से प्रभावित लगते थे और सामाजिक जीवन की बुराइयों की ओर उनका वही सुधारवादी दृष्टिकोण था, परन्तु धीरे धीरे वे द्वन्द्वात्मक भौतिकवादी सिद्धांत से प्रभावित हुए और पूंजीवादी समाज व्यवस्था के विरुद्ध उन्होंने प्रगतिशील दृष्टिकोण अपनाया।

निम्न मध्यम वर्ग एवं निम्न वर्ग के पात्रों के चित्रण में सुजानसिंह को अद्भुत सफलता मिली है। किसानों, मजदूरों तथा एक विशिष्ट प्रकार की समाज-व्यवस्था में पिसते हुए आर्थिक दृष्टि से विपन्न और धार्मिक दृष्टि से त्याज्य लोगों की समस्याओं का कलात्मक चित्रण सुजानसिंह की कहानियों में मिलता है।

सुजानसिंह का पहला कहानी संग्रह दुख-सुख सन् १९४१ में प्रकाशित हुआ था। उसके पश्चात् उनके ५ ७ संग्रह और प्रकाशित हो चुके हैं।

पंजाबी कहानीकारों में करतारसिंह दुग्गल का नाम पंजाबी भाषा की सीमाओं से बाहर सर्वाधिक लोकप्रिय है। दुग्गल ने पंजाबी कहानीकारों में सबसे अधिक कहानियाँ लिखी हैं, शिल्प और कथ्य की दृष्टि से सबसे अधिक प्रयोग किये हैं, अपने लेखन को सतत गतिशील रखा है और सबसे अधिक ख्याति अर्जित की है। दुग्गल मनोवैज्ञानिक कहानी लेखक हैं। मनोवैज्ञानिक कहानी लेखक तो लगभग सभी होते हैं परन्तु मनोविज्ञान की सूक्ष्मतम गहराइयों में प्रविष्ट होकर वहाँ से निकाले गए मोतियों के प्रकाश से कहानी को जगमगा देना दुग्गल को बहुत अच्छी तरह आता है।

दुग्गल का पहला कहानी संग्रह सवेर सार सन् १९४१ में प्रकाशित हुआ था। अब तक उनके लगभग एक दर्जन कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं।

इसी दौर के लेखकों में प्रो० मोहनसिंह, देवेन्द्र सत्यार्थी, नौरंगसिंह आदि के नाम भी उल्लेखनीय हैं। प्रो० मोहनसिंह पंजाबी के प्रतिष्ठित कवि हैं परन्तु उन्होंने कुछ बहुत ही अच्छी कहानियाँ लिखी हैं। उनकी कहानियों में पात्रों का मनो

कथानिक विश्लेषण बनी सूक्ष्मता से हुआ है। प्रा० मोहनसिंह की कहानियों का झुकाव मुख्यत सूक्ष्म प्रणयानुभूति और उभरती हुए या दमित काम भावना की ओर रहा है। उनकी कहानियों का एक संग्रह सन् १९४२ म 'निक्की निक्की वाशना' के नाम स प्रकाशित हुआ था। 'निक्की निक्की वाशना,' 'कुत्ता,' 'पीरवरन' 'मा' आदि , कहानियों न पजाबी म अपना विशिष्ट स्थान बनाया है। परतु प्रो० मोहनसिंह के अन्दर का कहानीकार अधिक आग नहा बढा। कहानी लेखन म अच्छी सफलता प्राप्त करके भी व अपन कवि म ही अधिक डूब रहे हैं।

दवद्र सत्यार्थी न पजाबी, हिन्दी और उर्दू म समान ख्याति प्राप्त की है। लोक गीतों क क्षेत्र म सत्यार्थी ने जो काम किया ह वह सर्वविदित है और इस प्रकार स्वाभाविक रूप स उनकी कहानियां लोक गीतात्मक वातावरण से भरी हुई हैं। पजाबी के कथानक-हीन, वातावरण प्रधान कहानियों के प्रारम्भ का श्रेय दवद्र सत्यार्थी को ही है। उनका पहला कहानी संग्रह 'कुगपोश' सन् १९४१ म प्रकाशित हुआ था। अब तक उनके पजाबी म ५ ६ कहानी-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं।

सन् १९४७ पजाब पजाबी और पजाबियों के लिए—वह वर्ष था जब उन्ह अपने जीवन क व क्रांतिपूर्ण दिन देखने पड जो उथल पुथल और सघर्षों स भर इतिहास म भी इससे पहले कभी देखन म नहा आए थे। पजाब की भूमि टुकडो म बँट गई पजाब की जनता का बहुत बडा भाग निराश्रित हुआ और अपनी जीविका के लिए उस इधर-उधर बिखरना पडा। परन्तु पजाबी भाषा की दृष्टि से इसकी प्रतिक्रिया बिल्कुल भिन्न हुई। पजाबी भाषा को, प्रदेश म (यद्यपि वह कट कर बहुत छोटा हो चुका था) वह स्थान प्राप्त हुआ जो इससे पहले उसे कभी प्राप्त नही हुआ था और यह एक विडम्बना ही है कि यदि पजाब का विभाजन न होता तो उस यह स्थान प्राप्त होना सदिग्ध ही रहता।

विभाजन के पश्चात् भी उसे यह स्थान सरलता स प्राप्त नही हुआ। पजाब और सघर्ष शायद सहोदर हैं इसलिए सघर्ष वहा के जीवन म इस तरह रचा मिचा है कि उस अलग करके पजाब की कल्पना ही नहा की जा सकती। पजाबी भाषा को अपन ही घर म अपन लिए सम्मानपूर्ण स्थान प्राप्त करन क लिए गत १५ १६ वर्षों म निरतर सघर्ष करना पडा है और कुछ निहित तत्त्वों न दुर्भाग्यवश उसकी प्रतिद्वन्द्विता उस भाषा स ही खडी कर दी जिसके स्नेहपूर्ण अपनत्व म उस व छूटी हुई मंजिलें बडे अल्प समय म ही तय करनी थी, जिन्ह अन्य भाषाएँ बहुत पहले ही तय कर चुकी थी।

पजाब के राजनीतिक-साम्प्रदायिक दलों न जहा बड-बडे नारे लगाकर उस स्थिति को बनान के नाम पर बिगाडने का ही काम किया वहा पजाब क साहित्यकारों न अपन गौरव क अनुरूप उन सभी विवादों स दूर रह कर अपने को रचना त्मक सृजन म ही लगाए रखा और सभवत उसी का परिणाम है कि आज पजाबी साहित्य अपन चतुर्मुखी विकास की ओर आश्चर्य उत्पन्न करने वाली गति स बढ रहा है।

विभाजन के पश्चात् और विशेष रूप से सन् १९५० से पंजाबी कहानी बहुत तेज़ी से आगे बढ़ी है। पंजाबी कहानीकारों ने बहुत सजग होकर नए-नए धरातलों का स्पर्श किया और अनुभूति के विविध पक्षों पर उन्होंने स्पृहणीय कहानियाँ लिखीं। इन १५ वर्षों में इन कहानीकारों की दो-तीन पीढ़ियाँ हमारे सम्मुख आ चुकी हैं। कवयित्री अमृता प्रीतम ने इन्हीं वर्षों में कथा-जगत् में अपना स्थान बनाया। यद्यपि उनकी कहानियों के दो संग्रह विभाजन के पूर्व ही प्रकाशित हो चुके थे परन्तु कथाकार के रूप में उनकी प्रतिष्ठा इन्हीं वर्षों में विशेष रूप से बनी।

करतारसिंह दुग्गल, कुलवन्तसिंह विर्क, महेन्द्रसिंह सरना, सन्तोखसिंह धीर, हरीसिंह दिलबर, लोचन बख्शी, देवेन्द्र आदि अनेक कहानीकार सन १९५० तक पंजाबी में अपना स्थान बना चुके थे। प्रभजोतकौर, अमरसिंह, जसवंतसिंह कंवल, सुरेन्द्रसिंह नरूला, दिलीपकौर टिवाना, गुरवीर, महेन्द्रसिंह जोशी, हरनामदास सहराई, सुरजीतसिंह सेठी, गुरदेव पुन्नू आदि अनेक लेखक इन्हीं वर्षों के आसपास पंजाबी में स्थापित हुए और इन्हीं दिनों उनके कहानी-संग्रह भी प्रकाशित हुए।

बलवन्त गार्गी और गुरदयालसिंह फुल्ल कहानीकारों के रूप में जाने जाने से पहले ही नाटककार के रूप में पंजाबी में प्रतिष्ठित हो चुके थे। परन्तु जब इन्होंने कहानी क्षेत्र में अपनी प्रतिभा का प्रयोग किया तो उन्हें वहाँ भी अद्भुत सफलता प्राप्त हुई। हिन्दुस्तान टाइम्स द्वारा आयोजित सार्वभाषिक कहानी प्रतियोगिताओं में इन दोनों नाटककारों की कहानियाँ पुरस्कृत हुईं।

प्रो० सन्तसिंह सेखों, डॉ० गोपालसिंह, डॉ० जीतसिंह सीतल, डॉ० सुरिन्द्रसिंह उप्पल, डॉ० गुरचरनसिंह और गुरमुखसिंह जीत पंजाबी में समालोचक के रूप में चिर परिचित हैं परन्तु ये सब कहानीकार भी हैं और इस क्षेत्र में इनकी सफलता किसी से कम नहीं है। इसी प्रकार अमृता प्रीतम, प्रभजोतकौर और गुरवार सूनन कवि हैं, परन्तु अपनी काव्यात्मक भाषा और कल्पनामयी अनुभूति से इन्होंने पंजाबी कहानी को सजाने का प्रयत्न किया।

का ढोल बजाकर कभी दूसरी प्रवृत्ति के लेखकों को पंजाबी में नजरअंदाज नहीं किया गया। पंजाबी में प्रगतिवादी लेखन सेखों सुजानसिंह से आगे बढ़कर नवतेज, जसवंतसिंह कंवल, सुखबीर अमरसिंह, हरनामसिंह नाज आदि लेखकों के हाथों और अधिक निखरा और जन जीवन की विषमताओं को उसने अधिक सूक्ष्म और कलात्मक ढंग से व्यक्त किया।

करतारसिंह दुग्गल से मनोविश्लेषणात्मक प्रवृत्ति का पंजाबी में प्रचलन हुआ। इस प्रकार की कहानियों ने जहां मानव-मन की अनेक परतों को उधेड़ा वहां दमित यौन भावना का विशेष रूप से सूक्ष्म विश्लेषण किया। कुलवंतसिंह विर्क, महेन्द्रसिंह सरना, गुरचरनसिंह, देवेन्द्र, हरकिशनसिंह और बूटासिंह आदि कहानी लेखकों ने बड़ी सफल यौनप्रधान कहानियां लिखी हैं।

इसी प्रकार नारी जीवन की विषमताओं, उसकी सामाजिक पारिवारिक स्थिति, पग पग पर ठुकराया और पीड़ित उसका प्रेमपूरित हृदय और नये मूल्यों के प्रति उभरता हुआ उसका सचेतन भाव पंजाबी की स्त्री लेखिकाओं ने अपनी अनुभूति के गहरे तादात्म्य से प्रस्तुत किया है। अमृता प्रीतम, दिलीपकौर टिवाना, हरिंदरकौर गरेवाल, प्रभजोतकौर, अजीतकौर, राजेन्द्रकौर और राज वर्दी आदि की कहानियां इस दृष्टि से उल्लेखनीय हैं।

पंजाबी कहानी में ग्रामीण जीवन और नगर जीवन के विविध पहलुओं पर सुन्दर कहानियाँ लिखी गयी हैं। सेखों, हरीसिंह दिलबर, जसवंतसिंह कंवल, संतोखसिंह धीर, गुरदयालसिंह और गुलजारसिंह संधू ने जहां ग्रामीण जीवन की विविध पहलुओं से भरी हुई झांकियां प्रस्तुत की हैं वहां बलवंत गार्गी, गुरनामसिंह तीर, सुरजीतसिंह सेठी, सुखबीर, अमरसिंह, वेदप्रकाश शर्मा और कुलदीप ने नगर जीवन के विविध वर्गों (विशेष रूप से मध्यम वर्ग) की विषमताओं को चित्रित किया है।

भारत की किसी भी भाषा में अभी तक आधुनिक युद्धों की भूमिका पर अच्छी कहानियां नहीं लिखी गयी। पिछले दिनों चीनी और पाकिस्तानी आक्रमण की पृष्ठभूमि में जो कहानियाँ लिखी गयी उनमें अनुभूति का खोखलापन बहुत स्पष्ट था। इसका कारण भी हमसे छिपा नहीं है। दोनों महायुद्ध भारत की मुख्य भूमि से असम्बद्ध रहे। भारतीयों ने उस विभीषिका के सम्बन्ध में केवल सुना ही है, उसका प्रत्यक्ष अनुभव नहीं किया है और जिन भारतीयों ने सैनिक के रूप में इन युद्धों में भाग लिया उनमें सृजनात्मक प्रतिभा वालों का अभाव ही रहा। परन्तु पंजाबी में तरलोक मंसूर ने युद्ध की पृष्ठभूमि पर बहुत अच्छी कहानियां लिखी हैं। तरलोक मंसूर स्वयं भारतीय सेना के एक अधिकारी हैं और सृजनात्मक प्रतिभा से युक्त हैं।

पंजाबी कहानियों के इस संग्रह में इस बात का ध्यान में रखने का प्रयास किया गया है कि पंजाबी कहानी की सभी धाराओं का, जहां तक संभव हो, प्रतिनिधित्व प्राप्त हो जाय। बहुत से ऐसे लेखकों की कहानियाँ भी इस संग्रह के लिए नहीं ली जा सकीं जिनको इस क्षेत्र में पर्याप्त प्रसिद्धि प्राप्त हो चुकी है और जिनका योगदान महत्त्वपूर्ण है। साथ ही कुछ ऐसे लेखकों की कहानियाँ संग्रह में ले ली गयी हैं जो

विषय-सूची

भाभी मैना

गुरबख्शसिंह, १८९५

गुरबख्शसिंह को आधुनिक पंजाबी गद्य का जन्मदाता माना जाता है। रोचक और हृदयग्राही शैली में उन्होंने गद्य की विभिन्न विधाओं पर अपनी प्रतिभा का चमत्कार दिखाया है। आधुनिक पंजाबी कहानी के विकास में उनका योग बहुत महत्त्वपूर्ण है। अपने व्यापक मानवीय दृष्टिकोण और प्रगतिशील विचारधारा के कारण वे आने वाली पीढ़ी के कहानी लेखकों के लिए सदा प्रकाश-स्तम्भ का काम करते रहे हैं।

गुरबख्शसिंह की विभिन्न विषयों पर लगभग ५० पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। इनमें प्रीत कहानियाँ, अनोखे ते इकल्ले, वीणा विनोद, नाग प्रीत दा जादू, प्रीतां दे पहरेदार, शबनम और भाभी मैना आदि लगभग एक दर्जन कहानी संग्रह हैं।

इस संग्रह में उनकी बहुचर्चित कहानी 'भाभी मैना' को संगृहीत किया गया है।

शहर की एक गली में दो आमने-सामने के घरों के बीच में मुश्किल से तीन साढ़े तीन गज़ का फ़ासला होगा। पहली छत पर उन घरों की खिड़कियाँ भी आमने-सामने खुलती थीं। एक में से सामने दीवार पर टँगा हुआ बड़ा शीशा दिखता था। और चीज़ें इस कमरे में थोड़ी ही थीं। एक चारपाई, दो चार पुस्तकें, कंघी, तेल और दीवार पर एक दो चित्र, टोकरी में दो चार कपड़े।

यह एक छोटा-सा कमरा था और इसमें सिवाय एक स्त्री के और कोई सूरत कम ही देखने में आती थी। यह स्त्री कभी कसीदा काढ़ती, कभी पुस्तक पढ़ती, कभी

ऊँघती हुई बैठी रहती। और कभी गली म सामने खड़ी होकर बातों म देर तक बातें करती रहती। यह दिन म कई बार कपड़े बदलती थी और घरवालों का ख्याल था कि इस बात से उसका पागलपन और भी बढ़ गया है।

उसके बाल लम्बे भी बहुत थे। जब वह मुँह पर उनकी लम्बाई फैलाती तो उस के चेहरे का कुछ पता न चलता। अँधेरे म वे बाल चमकते हुए दिखाई देते।

वह जवान थी। सुन्दर नक्शों वाली। उसकी आँखों का रंग सामने की खिड़की में से दीख नहीं सकता था। उसके चेहरे पर एक मिठास और उदासी झलकती।

वह अपनी खिड़की म बैठी देर तक आँसू बहाती रहती। कभी किसी ने उसे खिड़की म से सिर निकाल कर बाहर झाँकते हुए नहीं देखा था। पर गली वालों को उसके वहाँ बैठने का आभास जरूर होता था और कभी कोई उधर वहाँ से गुजरते हुए उसे आवाज भी दे लेती थी। और वह बड़े मीठे लहजे म उसका जवाब भी दिया करती थी।

जब वह कमरे म न होती तो खिड़की बन्द हो जाती थी। पर सर्दियों म शाम के समय और गर्मियों म दोपहर के समय यह खिड़की जरूर खुलती थी। तब वह खिड़की म बैठी हुई होती और कभी कभी गली म झाँक लिया करती थी।

रोज एक छोटा सा लड़का बस्ता लिये गली का मोड़ मुड़ रहा उसे दिखाई देता था। वह काम छोड़कर खिड़की म से उसे देखती रहती। वह लड़का भी कभी कभी ऊपर देखता और फिर अपने घर म चला जाता। उसके सीढ़ियाँ चढ़ने की टुप-टुप की आवाजें स्त्री के कानों म पड़ती। वह कभी उस घर म नहीं गई थी। पर उसे उन सीढ़ियों की गिनती याद थी। हर सीढ़ी पर पड़ रहे पाँवों की उनकी आवाज के साथ कई बार उसने अपनी छाती से घोटा था।

दूसरे घर मे कोई दरवाजा खुलता वह देखे बिना ही महसूस करती कि सामने की बैठक के अन्दर कोई गया है।

बस्ता एक तरफ रख कर वह लड़का कुछ देर अपनी खिड़की खोलकर सामने की खिड़की की ओर देखता। स्त्री उस तरफ नहीं देखती थी पर उसे पता होता कि किसी की दो आँखें उसे देख रही है जिसका रास्ता वह रोज़ देखा करती थी। और अगर किसी दिन लड़के को स्कूल से आते हुए देर हो जाती तो दूसरे लड़कों से वह पूछना चाहती थी काका क्यों नहीं आया? पर उसने कभी नहीं पूछा था।

काका बैठक का दरवाजा बन्द कर ऊपर कमरे म आ जाता था।

काफी दिन इस प्रकार बीत गए। काका अब तेरह वर्ष का होने लगा था। उस की दिलचस्पी सामने की खिड़की मे कुछ ज्यादा बढ़ गई थी। एक दिन उसने अपनी माँ से पूछा हमारे घर सभी आते है। पर सामने के घर से कभी कोई नहीं आया।

यह एक ही जैनियों का घर हमारी गली म है। यह लोग मास से परहेज़ करते है। इसलिये हम से दूर ही रहते है।

'और क्या यह घर म बाहर भी नही निकलत ?"

निकलते हैं। पर यह एक दु खी परिवार है। मौत ने इस घर को तबाह कर दिया है। एक ही एक बटा रह गया था, उसकी शादी हुई, पर दो ही साल म वह मर गया। मौत क बाद एक बच्चा हुआ, वह भी साल भर बाद मर गया। अब दोनो विधवायें रोने धोने को रह गई है।"

वह किस का बच्चा था ?"

"मैना का जिसे तुमने कई बार खिडकी म बैठे हुए देखा होगा।'

यह हर समय खिडकी म क्यो बैठी रहती है ?"

यह लोग जवान विधवाओ की बहुत रखवाली रखते हैं। और फिर घर म काम ज्यादा ह नही।

मा कभी यह औरत मुझे मिले तो इसे क्या कह कर बुलाऊँ ?"

कौन—मैना ? वह तुम्हारी भाभी है। उस का घरवाला तुम्हारा गली के रिश्त म भाई होता था। बहुत अच्छा लडका था।'

यह मैना कैसा नाम है ?'

तुम्हें अच्छा नही लगा ?'

नही अच्छा लगा है। पर मैंने पहले कभी ऐसा नाम नहीं सुना। मैना वही होती है न जो मामा जी क यहा पिंजरे म बन्द है और बहुत मीठी बातें करती है ? तोता इतना अच्छा नही बोलता।

'हा वही।

मा मुझे एक मैना ले दोगी ?

अपने मामा जी को कहना।'

कुछ दिनो बाद उसकी बैठक म एक पिंजरा टगा हुआ था। जब काका ऊपर जाता तो पिंजरा साथ ही ले जाता।

अपनी मैना को उसने बोलना सिखाया, 'भाभी मैना खिडकी म बैठी है।' खिडकी वाली मैना ने उससे कभी बात नही की थी पर उसे बहुत अच्छा लगता था जब पिंजरे म की मैना कहती भाभी मैना खिडकी म बैठी है।

सर्दियो की रात म भाभी मैना अपने कमरे म सोती थी। परीक्षा नजदीक होने पर काका भी बैठक म ही सोने लग गया था। भाभी मैना को कई बार उसकी सासो की आवाज सुनने महसूस होती। वह देर तक बिस्तर पर बैठी सुनती रहती।

उसकी उम्र अब पच्चीस वर्ष की हो गई थी। वह दिल म कहा करती थी—'अगर कभी मुझे इस बच्चे से बोलने की आजादी मिल जाए। कभी म इसे स्कूल से आते समय खिडकी म से बाहर सिर निकाल कर देख सकूँ, इस से बातें कर सकूँ और जब कभी बीमार हो मैं इसके घर जाकर इसके पास बैठ सकूँ।

फिर खुद ही कहती—मुझे कौन इतनी आजादी देगा ? मैं इसी कमरे म बूढी हो जाऊगी। मेरे बाल मेरी सास क बालो की तरह झड जाएँगे। काका शादी कर लेगा। यह खिडकी फिर इस तरह खुली नही रहेगी। फिर मैं किस की प्रतीक्षा म

अँधेरे जीवन के सब दिन और लम्बी रातें काट सकूँगा ?

यह सोचते हुए उसके दिल में कुछ हुआ। वह बिस्तर पर से उठकर खिड़की में आई। रात चाँदनी थी। खुली खिड़की में से हल्का-सा प्रकाश काका के मुँह पर पड़ रहा था। वह गहरी नींद में सोया हुआ था। उसका माथा सज था। मैना के मन में एक उबाल सा उठा— मैं उसके पास पहुँच जाऊँ? मैं उसे जगाऊँगी नहीं। दूर से उसका मुख चूम कर वापस आ जाऊँगी।

पर वह फासला इतना छोटा नहीं था। और न ही उसमें इतना हिम्मत थी कि गली फाँदकर उस घर में जा सके। वह बिस्तर पर लेट गई। कुछ देर के बाद आवाज़ आई 'भाभी मैना'... वह चौंककर फिर उठी। पर यह पिंजर की मैना की आवाज़ थी। काका उसी प्रकार सोया हुआ था।

उसी समय मैना की सास किसी काम से जाग उठी थी। उसने मैना के कमरे में कुछ आहट सुनी थी। साथ ही उसने जैसे 'भाभी मैना' भी सुना था। उसने मैना को आवाज़ दी। मैना अन्दर से झट बोल उठी। सास का शक पक्का हो गया।

'तुम सोई नहीं थी? रात आधी से ऊपर बीत गई है।'

'यूँ ही आँख खुल गई थी।'

सास कमरे में आई। उसे सामने की खिड़की में कोई सोया हुआ दिखा। मर्द का चेहरा।

'तुम किससे बातें कर रही थी?'

'किसी से भी तो नहीं।'

सास ने फिर सामने की खिड़की की ओर देखा। फिर वह चली गई। काका यद्यपि अभी बच्चा था और अपनी उम्र से छोटा लगता था पर था तो वह मर्द। विधवाओं का क्या काम कि बच्चों को भी इस प्रकार देखें।

मैना उसे स्कूल से आते समय देखा करती थी। काका भी आता तो पहले ऊपर बैठक में जाता और खिड़की खुली रखता था। वह पिछले साल से कम साल बड़ा भी लगता था।

इन चीजों की ओर से आँखें बन्द नहीं की जा सकती थीं। यही छोटी छोटी बदलियाँ कभी घटाएँ बन जाती हैं।

आज जब काका स्कूल से आया तो मैना की खिड़की बन्द थी। रात के समय भी वह बन्द थी।

यह खिड़की जैसे काका के जीवन का एक भाग बन गई थी। अब उसका खेल में दिल नहीं लगता था। माँ से पूछने का कोई फायदा नहीं था क्योंकि उस घर से उनका अधिक सम्बन्ध नहीं था।

आज रात अँधेरी थी। मैना की खिड़की के साथ खसर मसर की आवाज़ आई जैसे कोई अलग अलग चाबियाँ लगाकर ताला खोल रहा हो।

फिर आहिस्ता से खिड़की खुली। मैना ने उठकर दरवाज़े में से घर की आहट ली। फिर गली में देखा। फिर काका की साँस सुनी। वह सोया हुआ था। उस अँधेरे में कुछ

दिख नहीं रहा था, पर मैना को जैसे सब कुछ साफ दिख रहा था।

दूसरे क्षण उसे एम लगा जैसे वह उसके बिस्तर पर बैठी हुई थी। और उसक वाना म उगलिया फर रही थी, और फिर उसे जगा रही थी। मैना के वानो म उसकी अपनी आवाज़ पडी! "काका, काका"

वह अभी भी सोया हुआ था। वह उसे वह रही थी— 'कावा, तुम्हारी भाभी मैना। एक पल के लिये उठो। बस एक बात करो। फिर बस

काका हडबडा कर उठा।

मैना को बहुत शम आई। उम अब पता लगा कि वह अपन मन म नहीं, बल्कि मुह से बोल रही थी और काका जाग उठा था। अगर कोई और भी जाग पडा हो।

काका अपनी खिडकी म आकर बठ गया। उस भी खिडकी म बठी मैना अधेरे म महसूस हो रही थी। उसने कई बार भाभी मैना म मिलना चाहा था। वह बहुत उदास रहता था कि खिडकी क्या बन्द हो गइ ह।

भाभी मैना भाभी मैना!

हा काका मर अच्छ काका पर जरा हौल बालो।

तुम इतन दिन कहा चली गई था?

मरा कमरा हवालात बना दिया गया है। इस खिडकी को ताला लग गया ह।

वह क्या?

उस दिन तुम्हारी मैना न मुझे बुलाया था। मैं उठी थी। मैंने सोचा तुम हो। मरी सास भी उसी समय उठ बैठी थी। उसन सोचा मैं तुमसे बातें कर रही हूँ।

तो क्या हो गया? मा न कहा था तुम मेरी भाभी हो।

'बहुत कुछ हो गया काका। फाटकों को ताले लग गए। इसलिए अब मैं यहा स चली जाऊँगी। इस घर म यह मेरी अतिम रात है। मैं तुमसे मिल कर जाना चाहती थी। तुम किसी स बताओगे तो नहीं?''

'नहीं बताऊँगा। पर तुम क्या जा रही हो? न जाओ। मैं बडा हूँगा। मेरी शादी होगी। मैं अपनी पत्नी को तुम्हारे घर भेजूगा वह तुम्हे बुलाएगी तुम उसे मिलने आना। फिर तो कोई कुछ नहीं कहेगा। तुम न जाओ।'

पर तुम अभी बहुत छोटे हो। तुम्हारी शादी दूर है। इतने वर्ष इस घर म किस तरह बिताए जाएँगे जब कि मुझे तुम्हारी ओर देखना भी बन्द कर दिया गया है।

तुम कहाँ जाओगी? म वहाँ तुम्हे मिलने आऊगा।

नहीं काका। जहा म जा रही हूँ वहाँ कोई मद मेरे साथ बात नहीं कर सकेगा।

तुम वहाँ न जाओ।

'मेरे लिए और कोई रास्ता बाकी नहीं रहा। मैंने पुजारिन बनने का फैसला कर लिया है।

पुजारिन!

जैनी स्त्रियों की तरह, जिनके सिर पर बाल नहीं होते और मुँह पर पट्टी बँधी होती है।

न भाभी मैना, तुम कभी यह न बनना। मुझे उनसे बहुत डर लगता है।

काका, मेरे लिए और कोई राह नहीं रही ... और उसने काका को उसका प्यार करो। यह मेरी निशानी रखना। गुरु रूठ गया। अब बाहर गलकर मर जाना पड़ेगा।

और मैना की बातें बन्द हो गईं। ताश में बाजी घूमना छोड़ काका ने सुना। सारी रात वह सो न सका।

दूसरे दिन जब वह स्कूल से आया तो उसकी माँ ने उसे बताया कि मैना चली गई थी। रोज सास लड़ती थी और तंग करती थी। वह घर से निकल गई है और लिखकर छोड़ गई है कि वह पुजारिन बनने जा रही है।

पर माँ, वह यहाँ पुजारिन नहीं बन सकती?

नहीं। जिसे पुजारिन बनना हो, उसे अपना शहर छोड़ कर किसी दूसरे शहर के विहार में जाना पड़ता है। वे लोग उसके बारे में पूछताछ करते हैं। और अगर उसके बारे में भरोसा हो जाए तो उसकी पूरी रक्षा करते हैं, अच्छा खिलाते हैं, अच्छे कपड़े पहनने को देते हैं और कुछ दिन जो वह चाह करने देते हैं। फिर उसके सिर के बाल काट देते हैं। उसके बाद वह न अच्छा खा सकती है, न पहन सकती है और न मर्दों से बात कर सकती है।

भाभी मैना कहाँ गई होगी?

पता लग जाएगा। शायद रावलपिंडी गई हो, जहाँ इनका विहार है। वहाँ तुम्हारी मौसी रहती है। अगर वहाँ गई होगी तो जाकर देख आना। जब कोई पुजारिन बनती है तो शहर में बहुत रौनक होती है।

सारी गली में मैना की बातें होती थीं। बड़ी अच्छी औरत थी। उसके बाल कितने सुंदर थे। उसे जान से प्यारे थे। अब वह काट दिए जाएँगे। फिर उसने एक एक बाल को उखाड़ना होगा। बेचारी!

मैना रावलपिंडी ही गई थी। काका अपनी मौसी के पास चला गया। उसकी मौसी मैना को देख कर आई थी। उसने बहुत सुन्दर कपड़े पहने हुए थे। गहने भी। यह गहने उसे लोगों ने उधार दिए थे। मौसी हर रस्म पर जाती रही और आकर बताती रही कि उस पर बहुत रूप चढ़ा हुआ है। फिर एक दिन उसने बताया कि कल मैना को डोली में बैठाकर शहर में फिराया जाएगा। उस पर फूल फेंके जाएँगे, गुलाब जल छिड़का जाएगा।

काका अपनी भाभी को देखने के लिए बहुत बेचैन था। उसने उसे एक ही तरह के लिबास में देखा था। उस लिबास में भी वह बहुत सुन्दर लगती थी। गहने उसे कैसे लगते होंगे? उसने उसे हँसते हुए कभी नहीं देखा था। मौसी बताती थी कि उसकी मुस्कराहट देखने वालों का दिल मोह लेती थी।

उसका दिया रूमाल, जो उसने उस रात को उसके कमरे में फेंका था, काका की जेब में था। उसे उसने सम्भाल कर रखा हुआ था। वह उसे रोज देखता था। उस पर लिखा हुआ था बड़े प्यार वाला का — उसकी भाभी की ओर से।

दूसरे दिन दोपहर के बाद उसकी मौसी ने बताया कि मैना की डोली निकलेगी। वह सभी बाजारों में घूमेगी। उसे हर कोई देख सकेगा।

उसने मौसी के बाग में से बहुत से फूल तोड़कर रूमाल में बांधे। और जब उसके चौक में से डोली गुजरी तो वह घर वालों से कुछ अलग हो कर खड़ा हो गया। वह देखकर वापस जाना नहीं चाहता था। वह डोली के साथ साथ जाना चाहता था।

बैंड बज रहा था। जैनी लोग डोली पर से रुपये पैसे फेंक रहे थे। डोली में मैना गहनों से लदी हुई बैठी थी। उसका चेहरा यद्यपि और ही तरह का लगता था पर उसमें उसके पहले चेहरे की काफी झलक थी। काका को उसकी हँसती हुई सूरत का अपना उसकी उदास आँखें ज्यादा अच्छी लगती थीं।

वह जब समझता था कि मैना का उस की ओर ध्यान है तो वह फूल फेंक देता था। वह हाथ जोड़ती थी पर वह हाथ उसके लिए नहीं जुड़ते थे। इतनी भीड़ में वह छोटा सा उसे कैसे दिख सकेगा—वह सोचता था।

एक मोड़ पर डोली अचानक उसके बहुत नजदीक आ गई। वह उस समय फूल फेंकने ही वाला था। मैना ने उसे देखा और पहचान लिया। उसकी अधखुली आँखें पूरी तरह खुल गईं। उसने ध्यान से देखा। फिर साहस करके उसने दोनों हाथ के लिए कहा।

'वह हमारी गली का बच्चा है। मुझ पर फूल फेंकना चाहता है पर पहुंच नहीं पा रहा। उसे एक क्षण के लिए मेरे पास ला दो।

यह रवैया अनोखा था पर पुजारिन बनने वाले की हर बात मानी जाती है। लाओ, तुम्हारे यह फूल मैं ले लूँ। तुम बड़ी दूर से आए हो।

काका बहुत खुश हुआ। भाभी मैना ने उसे देख लिया था बुलाकर हाथों को छूकर फूल ले लिए थे। रूमाल भी वापस नहीं लिया था। उसने सोचा भाभी निशानी रखेगी।

जलूस विहार पर पहुंच गया। लोग चले गए। मैना और कुछ स्त्रियाँ विहार पर चढ़ गईं। सीढ़ी पर पाँव रखते समय पहले मैना ने देखा, काका सामने की दुकान के पास खड़ा था।

ऊपर जाने पर बड़े पुजारी के सामने मैना को खड़ा किया गया।

क्या तुमने अपने मन में निश्चय कर लिया है? पुजारी ने पूछा।

जी महाराज कर लिया है।

कपड़े गहने तुम्हें सब उतारने पड़ेंगे। और फिर जीवन में तुम इन्हें अंगीकार नहीं कर सकोगी।

जी महाराज, मुझे इनकी कोई चाह नहीं।

'तुम यहां कुछ खाओगी और पियोगी जो हमारी श्रेणी के नियमानुसार होगा।'

"जी महाराज, मुझे अच्छे भोजन की चाह नहीं।'

"मर्दों का छूना तो एक तरफ उनका ख्याल भी इस धर्म में पाप है जिस धर्म को तुम चुन रही हो।

मैना ने लम्बा सांस लिया और उस को जेब में कावा का रूमाल खुलता हुआ प्रतीत हुआ और रूमाल के सिरे जैसे छोटी छोटी बाहें बनकर उसके गिर्द लिपट गए। आखिर उसने कुछ सम्भल कर उत्तर दिया हां महाराज यह भी मैंने परवान कर

अब तुम उस कमरे में जाकर यह कपड़े उतार दो और जो कपड़े तुम्हें दिए जाएँ पहन लो। फिर तुम्हें अपने सिर के बाल काटने होंगे। उसके बाद तुम्हें तुम्हारी माता बताएगी कि किस प्रकार एक एक बाल को खींच कर निकाला जाएगा।

बालों को काटने की बात सुनकर वह अपनी आह न रोक सकी और बड़ा हौसला करके बोली पूज्य पिताजी मुझे बाल रखने की आज्ञा नहीं दे सकते?

यह किस प्रकार हो सकता है? पुजारी ने हैरान होकर कहा।

मैं जानती हूँ यह मेरी अनोखी मांग है। पर अगर आप मान लें तो मैं आप को कभी किसी शिकायत का मौका नहीं दूँगी। मैं आप की ऐसी सेविका बनूंगी कि सारी जाति आश्चर्य करेगी।

पर यह नहीं हो सकेगा। क्या तुम्हें पहले नहीं पता था?

'मुझे पता था। पर अब जब बाल कटाने का मौका आया है तो मुझे लग रहा है जैसे मेरे यह बाल जीवित हों। यह मेरी जान में से उगे हुए हैं। जब मैं इनमें कंघी फिराती थी तो यह झटके से मेरी टांगों को छूते थे। इनके छूने में पता नहीं क्या बात थी। कई वर्ष मैंने सिवाय इन के किसी से बात नहीं की। हे परमपूज्य एक बार अनहोनी करके देखिए आप को अपने फैसले पर पछताना नहीं पड़ेगा।

पुजारी का दिल पसीज सा गया पर उसने सोचा कि पुजारिन के बाल देख कर लोग क्या कहेंगे?

आखिर उसने कहा नहीं तुम्हारी यह बात मानी नहीं जा सकती।

फिर पांच मिनट के लिए मुझे अकेले में अपने मन को समझा लेने दीजिए मैना ने मन पक्का करके कहा।

हां जाओ सामने जाकर सोच लो।

मैना उठी और हौसले से पग रखती हुई सामने छत के सिरे पर जाकर बैठ गई। उसने वहां से नीचे बाजार की ओर देखा।

कुछ देर बाद मैना उठी।

यह स्त्री अनोखी है। मैंने कई स्त्रियों को पुजारिनें बनाया है। पर इस की हर बात हैरान करने वाली है। अगर यह पुजारिन बन गई तो बड़ा नाम पैदा करेगी। बड़े पुजारी ने कहा।

पर यह वह गई कहां है? दूसरे पुजारी ने घबरा कर कहा।

बड़े पुजारी ने भी देखा। मैना ने अपना उड़ता दुपट्टा हवा में घुमाया। जुड़ा खुल गया।

बाल टांगों को छूने लगे। हल्की-हल्की हवा में वे लहराने लगे।

'कितने लम्बे!'

'ओह!' सभी उठकर सीढ़ियों की ओर भागे। उस समय मैना छत पर नहीं थी।

सभी नीचे पहुंचे। बाजार में हाहाकार मची हुई थी। काका मैना के सिरहाने बैठा था। उसने मैना के बिखरे हुए बाल माथे पर से एक तरफ हटाए। काले बालों में कहां-कहां सिन्दूर की तरह खून चमक रहा था। काका की आंखों से आंसू बह रहे थे और वह मैना की आंखों में देख रहा था। वह आंखें खुली थीं। पहले उन का रंग उसने कभी नहीं देखा था। वे उस काली रात जैसी थीं जिसमें रात मैना ने उसे जगाया था, पर उस रात की गहराई में कोई सूरज डूबा हुआ था। तभी अंधेरे में भी वह उन्हें देख सकता था। वे आंखें अब भी उतनी ही काली और उतनी ही चमकदार थीं। वे खुली हुई थीं। पर इस समय उनमें कोई सूरज नहीं था।

जर्जर खपरैल की एक स्लेट

नानकसिंह, १८९७

पंजाबी साहित्य में नानकसिंह का वही स्थान है जो हिन्दी में प्रेमचन्द का है। पंजाबी में आधुनिक कथा साहित्य का प्रारम्भ नानकसिंह से ही माना जाता है। लोकप्रियता की दृष्टि से पंजाबी में जो स्थान नानकसिंह को प्राप्त है वह किसी दूसरे लेखक को नहीं।

नानकसिंह आज भी अबाध गति से लिख रहे हैं। उनके लगभग तीन दर्जन उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं। अनेक उपन्यास हिन्दी तथा अन्य भाषाओं में अनूदित हो चुके हैं। कुछ वर्ष पूर्व उन्हें 'इक म्यान दो तलवारां' नामक उपन्यास पर साहित्य अकादमी का पुरस्कार प्राप्त हुआ था।

नानकसिंह के 'हंजुआं दे हार', 'मिद्धे होए फुल', 'तस्वीर दे दोवें पासे', 'ठंडीआं छावां' आदि अनेक कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं।

इस संग्रह में उन की एक नई कहानी संग्रहीत की गयी है।

बस से उतरते ही उसने मुझसे पूछा, बंगला चाहिए? और उत्तर में मैंने कहा, बंगला नहीं कमरा चाहिए।

डलहौजी मेरे लिए कोई बेगाना शहर नहीं था। लगातार कई वर्षों से यहां आना होता है। इस जगह के चप्पे चप्पे से परिचित हूं। आम तौर पर मैं पहुंचते ही किराए का मकान नहीं ले लेता। पहले एक दो दिन किसी दोस्त के यहां ठहर जाता हूं और सुविधा से कोई मनचाहा ठिकाना ढूंढ लेता हूं। परन्तु उस व्यक्ति का दुरा-

मिज़ाज ने और उसकी मधुरतापूर्ण बोल-चाल ने मुझ पर जैसे जादू कर दिया। उसने अपना नाम बताया मंगू।

डलहौज़ी को यदि मैं स्त्री के रूप में कल्पना करूँ तो कहना पड़ेगा कि इसको मैंने दोनों हालतों में देखा है। पहले नव-वधू के रूप में फिर एक विधवा की तरह।

सच पूछें तो डलहौज़ी का सौन्दर्य और सुहाग अंग्रेज़ों के साथ ही चला गया। मुझे वह दिन भी याद है जब डलहौज़ी पर्वत की चहल पहल अपने शिखर पर पहुँची थी। सैलानियों की भीड़ का यह हाल होता था कि सदर बाज़ार से लेकर बकरोटा तक कंधे से कंधा टकराता था। कोठियाँ, फ्लैटों और होटलों के कमरे ठसाठस भरे होते थे। इस पर्वत पर पहुँचकर जिसको रहने के लिए मनचाही जगह मिल जाती उसके लिए उसकी किस्मत जाग पड़ी हो। हाउस वाले खूब जी भर सैलानियों का खून चूसते थे। छोटे से छोटे कमरे का किराया भी पाँच-सात रुपए रोज़ से कम नहीं होता था। कोठी वालों का दिमाग तो सातवें आसमान पर होता था। रद्दी-से रद्दी कोठी का मासिक किराया होता था डेढ़-दो हज़ार और वह भी सारा पेशगी।

किन्तु यह तो तब की बात थी जब डलहौज़ी साहब लोगों और मेम साहबों का समर हिल था। अब तो वहाँ यह हाल है कि बड़ी-बड़ी आलीशान कोठियाँ और होटलों में उल्लू बोलते हैं। किराए घटते घटते आठ-दस रुपये तक पहुँच गए हैं। फिर भी कोई ग्राहक नज़र नहीं आता।

मकान मालिकों का दुर्भाग्य में अब भी कुछ कमी थी तो उसको पूरा कर दिया है निष्कासी जायदाद ने। सन सैंतालीस से पूर्व मुसलमान मालिकों की जो कोठियाँ हज़ारों रुपये सीज़न पर चलता था अब वहाँ कोठियाँ पन्द्रह-बीस रुपये मासिक पर उठ रहा था। इतना सस्ता किराया होने हुए भी किराएदार मुश्किल से मिलता था।

जिस समय का मैं ज़िक्र कर रहा हूँ वह शायद १९६७ या १९६० का साल था। उस समय डलहौज़ी का नाम ही नाम रह गया था। लगभग सब प्रतिशत मकान खाली पड़े रहते थे। अंग्रेज़ चले गए थे। देश में हुए विभाजन के फलस्वरूप लोग अभी तक भारत में नहीं आए थे। इस लिए जो कुछ भी मन कहा जितना भी किराया लेना चाहा जो भी शर्तें कहीं मंगू का बस एक ही उत्तर था तथास्तु।

मंगू ने बताया कि वह अपने मालिकों की कोठियों की चौकीदारी के अतिरिक्त उनके लिए किराएदार खोज देने में भी थोड़ी-बहुत मदद करता है। मेरा सामान उठवाकर वह मुझे मोती टिब्बे की एक कोठी के सामने ले आया। कहने लगा यह कोठी बिल्कुल आपके ही मतलब की है। एकदम एकान्त स्थान। ऊपर सामने रावी का नज़ारा दीखता है।

स्थान मेरी पसंद का था परन्तु कोठी की हालत खस्ता थी। साल पस्ता भी उस वर्षों से उसकी मरम्मत की ओर किसी ने ध्यान नहीं दिया। पर्वतीय मकानों की उमर वैसे ही कम होती है। यहाँ वर्षा और तूफ़ान में अच्छे अच्छे मकानों के छप्पर उड़ जाते हैं। फिर भी यहाँ भीतरी भाग की दशा इतनी बुरी नहीं थी। पर प्रश्न यह था कि सारी कोठी का लेकर मैं क्या करूँगा? मुझे तो केवल एक कमरे

की जरूरत थी। पर मगू था कि मेरी किसी भी बात को सुनता ही नहीं। बोला, अजी आप जितनी जगह चाह ले लें। बाकी कमरे रहने दें। और किराया जितना दिल चाहे दे दें।

पर दिल चाहे की भी तो कोई सीमा होनी चाहिए थी। दिल तो आदमी का चाहता है कि सब कुछ मुफ्त म मिल जाए। आखिर जितना भी किराया मैंने उसमें कहा वह मान गया। मैंने शान्तिपूर्वक कोठी के एक कमरे म सामान रखवा लिया।

मुझे मगू बडा ही अच्छा आदमी लगा। वह मेरे लिए पानी लाता मकान की सफाई करता रोटी भी पका देता और यदि आवश्यकता पड़ती तो कपड़े भी धो देता। इतना ही नहीं वह हर समय कोठी की मरम्मत भी करता रहता। अड़ोस पड़ोस की कोठियों से वह फूलों के पौधे भी न जाने कब ले आता और उनको लगाने म लगा रहता। उस पर हमेशा यह चिंता सवार रहती कि कहीं किराएदार किसी बात पर नाराज होकर चला न जाए।

उस व्यक्ति म मैंने सभी गुण देखे थे। पर उस म एक सब से बडा अवगुण भी था। वह यह कि वह बहुत लालची था। किराया पेशगी लेने की कोई बात नहीं थी। पर उसने बडी युक्तियों से कह-सुनकर मुझसे कुछ-न-कुछ पेशगी ले ही ली। इतने पर ही बस न करके वह हर दूसरे चौथे दिन मुझे घेर लेता कोठी का टैक्स देना है जी। मालिक की ओर से मनीआर्डर आने ही वाला है। बस कल नहीं तो परसों आपको लौटा दूँगा। ऐसी बात कह कहकर वह मुझसे अगले से अगले महीने का किराया भी ले जाता। परन्तु न उसका कल परसों आया और न ही उसने कभी कुछ लौटाया। कई बार तो वह कम्बख्त एक या दो रुपए की फरमाइश कर देता। मैंने मन म कई बार संकल्प किया कि बस अब उसको एक पैसा नहीं दूँगा चाहे रो रोकर मर जाए। किन्तु न जाने उसकी बोली और बरताव म कैसा आकर्षण था कि जब भी वह कुछ मांगता मुझसे इनकार न किया जाता।

एक दिन जब मैं सवेरे उठा तो बाहर कुछ शोर सुनाई पडा। बरामदे म जाकर देखा तीन चार आदमी मगू को घेरे बुरी तरह फटकार रहे थे। पूछने पर मालूम हुआ कि मगू उनके बगीचों से कुछ पौधे चुरा लाया है। यह मगू की पहली चोरी नहीं थी। इससे पूर्व भी उनके काफी पौधे चोरी हो चुके थे।

मगू की इस दशा पर मुझे दया भी आई और क्रोध भी। भला बेवकूफ से कोई पूछे कि कोठी किसी की रहने वाला कोई और वह किस लिए पाप का भागी बनता है?

मैंने मिन्नत खुशामद करके मगू का पीछा छुड़वाया। वे लोग मेरे लिहाज पर वापस चले गए। बाद म मैंने मगू को खूब लताड़ा। उसने कहा नहीं सरदार जी लोग बेकार मुझे परेशान करते हैं। खाली पड़ी कोठियों म से भला दो चार पौधे ले ही लिए तो कौन सा प्रलय हो गया। वह ही सूख मर जाएँगे। उन बंगलों म कोई किराएदार भी तो नहीं है।

मूर्ख मैंने उसे फटकारा किराएदार हो या न हो चोरी आखिर चोरी है

है। फिर तुमसे ही किसने कहा कि मुफ्त म पाप की गठरी सिर पर उठा। अरे, मालिका को जरूरत होगी तो खुद ही पाथे लगवा लेंगे।"

कहन लगा 'सरदार जी मालिका की बात कुछ नहा। मुझे इस बात का डर है कि कहा आप उदास होकर चले न जाएँ।"

मैंन कहा "अच्छा अगर चला भी गया ता और कोई आ जाएगा।'

'अरे, यहा कौन आ जाएगा? आधा सीजन बीत गया है। आपन ही आकर दरवाजा खुलवाया है। नही तो सारा सीजन खाली पडा रहना।'

अरे जा इस बात की जितनी चिन्ता मालिका को नहा तुझे है।"

मगू फिर नही बोला। मैंन भी और फटकारना उचित नही समझा। सोचा नौकर वफादार हो तो ऐसा।

एक रात अचानक ही इतन जोर की वर्षा हुई कि जल-थल एक हो गए। आधी रात जब मेरी आख खुली ता बिस्तर का काफी हिस्सा भीगा हुआ था। बत्ती जलाकर देखा ता छत कई जगह मे चू रही थी। पास के स्टोर रूम म जाकर देखा, वहा भी काफी सामान भीग रहा था। बडा क्रोध आया उस मगू के बच्चे पर, जिसने चार सौ बीस करके यह निकम्मी जगह मेरे सिर मढ दी थी। मगू स भी अधिक क्रोध आया अपनी अक्ल पर। डलहौजी म जहाँ मकानो को आजकल कुत्त भी नही पूछत, मर लिए यही स्थान रह गया था। दिल चाहता था कि मगू का गला पकड-कर घोट दू।

सामान को एक जगह स दूसरी जगह पर रखा। चारपाई इधर से घसीट कर उधर की। इसी काम म लगा हुआ था कि मुझे किसी के छत पर चलन की आवाज सुनाई दी। भय सा लगन लगा। सोचा मगू को जाकर जगाऊँ। कोठी के ही पिछले कमर म वह सोता था। टाच लेकर उसक कमर म पहुचा। मगू का बिस्तर खाली था।

क्या मगू ही छत पर चल फिर रहा था? जैसे ही सामन की दीवार पर मेरी दृष्टि पडी कि मैंन मगू का छत स उतरते हुए देखा। उसके सिर पर पत्थर की दो चार स्लटें और हाथ म हथौडी थी। सर्दी म उसका शरीर काप रहा था। आश्चर्य चकित रह गया मैं। इतनी सख्त ठड बीच-बीच म ओलो की बौछार और यह कम्बख्त नग बदन छत पर चल फिर रहा था। मेरा सारा गुस्सा पानी हो गया।

आते ही मेरे सामने दासी की तरह खडा हो गया। सर्दी के मारे पूरी बात उसक मुह से निकल नही रही थी। बोला, 'आपको बहुत कष्ट हुआ होगा, सरदार जी! मुझे क्या पता था इस तूफान का। आजकल तो पानी बहुत कम बरसता है।

मगू पर बरसने क लिए मैने मन म जितना कुछ इकट्ठा किया था उसकी विनम्र वाणी क सामन वह सब कुछ बह गया। मैं केवल इतना ही कह सका अरे, पगले तेरी यह स्लेटें कब तक टिकेंगी वहाँ? यह तेज बौछार उन्हे उडा ल जाएगी।

वह उसी प्रकार गिडगिडाया आज की रात किसी प्रकार निकल जाए। कल

मैं किसी कारीगर को लाकर इसकी पक्की तरह मरम्मत करा दूँगा।

भीतर जाकर देखा। मगू का कोठा बहुत परिश्रम से साफ हो गया था। छत अब उतना नहीं चू रही थी। दूसरे दिन वह फिर आ धमका सरदारजी कुछ दाम आनी है माँगने हूँ। मालिक की ओर से मनीआर्डर अभी तक नहीं आया। पाँच रुपये देने की कृपा करें तो कोई कारीगर बुला लाऊँ।

उसकी इस तरह की माँग से हृदय बड़ा क्षुब्ध हुआ। एक बार तो इच्छा हुई कि उसके कान की खिड़कियाँ खोल दूँ। क्या मेरे पास कोई पैसा जमा कर रखा है उसने? परन्तु जब उसकी आँखों में याचना के गहरे भाव देखे तो कुछ कह न सका। नाक सिकोड़ कर मैंने उसे पकड़ा ही दिया।

और फिर मैं मगू को सुबह से शाम तक छत पर चढ़ा देखता रहा। न कोई कारीगर आया न मजदूर। और एक दिन मगू की इस मालिक परस्ती का भेद भी खुल गया। दोपहर को बरामदे में बैठा कुछ लिख रहा था। तभी म्युनिसिपैलिटी का एक चपरासी आकर पूछने लगा सरदारजी मगतराम कहाँ है?

कौन मगतराम? मैंने प्रश्न किया।

जी कोठी का मालिक। उसके नाम नोटिस आया है प्रापर्टी टैक्स का।

मैंने उत्तर दिया पर यहाँ तो नहीं रहते कोठी के मालिक। हाँ चौकीदार मगू है जो कहीं इधर-उधर गया होगा।

चपरासी हँस पड़ा तो आप नहीं जानते सरदारजी। वही मगू तो है कोठी का मालिक। यह नोटिस ले लीजिए और उसे दे दीजिएगा।

मुझे चपरासी की बात पर विश्वास न आता यदि मैं उस नोटिस का यह वाक्य न पढ़ लेता— लाला मगतराम लैंड लार्ड डलहौजी।

मैंने चपरासी से कहा अरे भाई वह बड़ा कंजूस है।

मैं और कहता कि चपरासी बोला कंजूस नहीं बदनसीब। इस कोठी के सिर पर मगतराम का कुनबा कभी ऐश किया करता था। अब तो इसकी मरम्मत और टैक्स का खर्च भी नहीं निकलता। चपरासी ने ठंडी साँस भरी डलहौजी चली गई सरदारजी अंग्रेजों के साथ ही। अब तो बस नाम ही रह गया है इसका।

डलहौजी की बदली हुई तसवीर तो पहले ही देख चुका था अब मगू की बदली हुई तसवीर मेरी आँखों के सामने आ गई। मैंने पूछा भला यह हाल है तो वह इसे बेच क्यों नहीं देता?

चपरासी ने उत्तर दिया ‘बेचे बिचारा किसको? जायदाद का मूल्य तो आबादी से होता है सरदारजी ईंट पत्थरों से नहीं।

और एक लम्बी साँस लेकर वह चुप हो गया।

वल्हड़वाल

गुरमुखसिंह मुसाफिर, १८९९

नानी गुरमुखसिंह मुसाफिर पजाब के एक राजनीतिक नेता के रूप म बहुत अधिक विख्यात हैं। वे गत अनेक वर्षों म ससद क सदस्य हैं और कई वर्षों तक पजाब प्रदेश कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष रहे हैं। परन्तु उनके राजनीतिक व्यक्तित्व से कहीं अधिक प्रभावशाली उन का साहित्यिक व्यक्तित्व है। कविता और कहानी, दोनो ही क्षेत्रो म उन्हे सफलता प्राप्त हुई है।

मुसाफिर की रचनाओं म स्वतन्त्रता सग्राम और उभरती हुई राजनीतिक चेतना का बड़ा प्रभावशाली चित्र मिलता है। पजाब के ग्रामीण जीवन म भी उनका गहरा तादात्म्य है। इस सग्रह म उन की एक ऐसी ही कहानी सग्रहीत की गयी है।

अनेक कविता सग्रह तथा अन्य साहित्यिक कृतियो के अतिरिक्त उनके वखरी दुनिया सस्ता तमाशा आल्हणे दे बोट आदि अनेक कहानी सग्रह प्रकाशित हुए हैं। हाल म ही उनका एक कहानी सग्रह हिन्दी म भी प्रकाशित हुआ है।

पूरा प्रकाश अभी नहीं हुआ था। दिन और रात का मिलाप हो रहा था। करमा ने अपनी खाट घसीट कर मसासिंह की खाट के साथ मारी। मसासिंह चाक कर उसी आंखों म गहरी नींद थी। वह करवट बदल कर फिर सो गया। अब करमा ने उसे बांहों से पकड कर झकझोरा। वह ऊघाई लेते हुए एक बार करवट लेकर फिर

उलटा लेट गया। 'अभी तुझे ढोर के साथ जाना है' हरी की तनिक आँख लगी हुई है मेरे साथ बात करले। करमो की बात सुनकर अर्द्ध निद्रा में ही मर्सासिंह ने हुंकारा भरा तनिक सुस्ता तो लेन दे करमो।'

एक वर्ष और पूरे सात दिन हो गये हैं आज एक-एक तिथि मैंने गिन रखी है उंगलियों पर जिस दिन से घर से उजड़ कर ठोकरें खा रहे हैं। अलग बैठकर बात करने का अवसर ही नहीं मिला। प्रातः काल तुझे इस ढोर के साथ चला जाना हुआ, अन्धेरा होने पर आधी रात को आना और आकर थके टूटे लेट जाना। आज हवा कुछ धीमी थी सारे लोग एक सिरे से दूसरे सिरे तक सो रहे थे। मेरे दिल में आया तुझे जगाकर सारी रात बात कर लूं। बात करने की चिन्ता करके मुझे तो आज नींद भी नहीं आई। परन्तु पहले तुझे नहीं जगाया मैंने कहा सारे दिन का थका हुआ है। अब तनिक मेरी बात सुन ले। है है, सुन रहा है, कर मैं बात?

हां हाँ कर बात करमो मेरे कान तेरी बातों की ओर ही हैं। उलटे लेटे हुए मर्सासिंह ने कहा। करमो ने मर्सासिंह का कंधा झकझोर कर कहा हमें नहीं ऐसे मजा आता बात करने का। तू इधर मुंह कर रोशनी में तेरा चेहरा देखे भी काफी देर हो गयी है।

ले देख ले चेहरा आज फिर सारा दिन देखती रह आज तो मेरा मन भी बेईमान हो रहा था। हरो को जगा कर ढोर के साथ भेज दो वहां करना ही क्या है? वहाँ पास बैठकर पशुओं को देखती रहेगी और करना ही क्या है। बाढ़ ने फसल तो छोड़ी नहीं। जो कुछ बचा भी है वह भी दाना-दाना मिट्टी में लथपथ हो गया है। पशु उन्हें खुशी से खाते ही नहीं। फसल से अधिक यह सूखी घास पशु अधिक पसन्द करते हैं। जा जगा दे हरो को फिर हम दोनों जी भर कर बात करेंगे। मेरा भी आज जाने का मन नहीं कर रहा है। कितनी देर हो गयी है मुसीबत पर मुसीबत आ रही है।

मर्सासिंह बातें करता करता अंगड़ाई लेकर पहले खाट पर उठ कर बैठ गया, फिर उसने दाएं हाथ का सहारा लेकर बाएं हाथ को करमो के हाथ पर आहिस्ता आहिस्ता फेरते एक उंगली से पकड़ कर उसको अपनी ओर खींचते हुए कहा आ ना यदि अभी बात करनी है तो आ जा मेरे पास आ जा।

मर्सासिंह समझ गया था कि हरो को ढोर के साथ भेजने की बात करमो को पसन्द नहीं थी इसीलिए उसने अभी बात कर लेने के लिए कहा था।

करमो ने चारों ओर नजर डाली। हरो की खाट के नीचे बैठे कुत्ते के अतिरिक्त अभी सारे लोग सोए पड़े थे। करमो ने अपना दायाँ बाँह आगे को। मर्सासिंह ने दाएं हाथ का सहारा दिया। करमो ने कुत्ते को ओर देखा। कुत्ते ने अपना मुंह समान पर रखकर आँखें बन्द कर रखी थीं। एक आवाज से करमो के कान खड़े हो गए। वह रम्मा ताई का भागा जा रही भैंस की आवाज थी। खेतों से आस-पास की झुग्गियों के बस ऐसे मारे लोग सो रहे थे।

माँ भैंस भाग सा हरो अपनी खाट से उठकर आवाज देता हुई भैंस की ओर

भागी। करमा ने अपनी खाट घसीट कर हरो की खाट के साथ कर ली, जहाँ कि पहले थी। मसासिंह कुछ देर अपनी बाहों में आँखें और माथे को ढके लेटा रहा। अब उसकी आँखों में कोई नींद नहीं थी। एक बार चोर दृष्टि से उसने करमा की ओर देखा। करमा हरो को देख रही थी जो कि भैंस को कील से बाँधकर करमा की ओर आ रही थी। अब हरो करमा के पास पहुँची तो करमा मसासिंह को कह रही थी— अब तो बिलकुल ही दिन निकल आया है और मसासिंह उत्तर दे रहा था इस समय रोज़ ही दिन निकल आता है आज नया थोड़ा ही निकला है।

मेरी बात तो बीच में ही रह गयी।' करमो के मुँह से सुन कर मसासिंह ने कहा—'हरो को जाने दे ढोरों के साथ।'

'यह बात नहीं करनी। करमा की न पर मसासिंह चुप हो गया।

अच्छा, आज मैं दोपहर ही वापिस आ जाऊँगा। तो फिर कर लेना जो बात करना चाहे। मसासिंह ने बाहर की रसोई का ग्रास लस्सी से अन्दर फेंकते हुए कहा। करमा ने सुबह होते ही कुछ बाजरा पीसा फिर पकाया। हरो ने लस्सी बनाई। अब मसासिंह को सुबह का नाश्ता खिलाते हुए करमा ने पुन बात की शृंखला को जोड़ा। मसासिंह ने दोपहर आने की बात दोहराई। हरो मटकी उठा कर छाया में रखने लिए उठी तो करमा ने अपना मुँह मसासिंह के कानों के निकट करके जल्दी-जल्दी कोई बात कही। ध्यान करमा का हरो की ओर था। मसासिंह ने करमा की बात का उत्तर देते हुए कहा, 'ये औरतों के काम हैं। चली जा—मायके मां से सलाह कर ले। गोभी सती तेरी दोनों भाभियाँ बड़ी समझदार हैं। जिसके घर में दोनों उनके पगले भी सयाने। सम्पन्न घरों की थीं, आगे ब्याह भी सम्पन्न परिवार में हुआ, अपने आप सयानियाँ हो गयीं। चली जा आज ही चली जा। रात को उनके पास रहना और सुबह वापिस आ जाना। करमा ने मसासिंह की बात सुन कर कहा— बात तनिक आहिस्ता से करो तुम्हारी तो ढोल पीटने की आदत ही हो गई है।

नहीं नहीं इसमें भला ढोल पीटने की क्या बात है तुझे अपनी लड़की के सम्बन्ध के लिए मायके सलाह करने के लिए जाना है इसमें शर्म की बात ही क्या है।

मसासिंह की बात सुनकर करमा ने कहा हरो को पता नहीं लगना चाहिए कि हम उसकी ही बात कर रहे हैं इसीलिए तो तेरे कान में बात की थी और इस लिए ही तो मैं मुँह अधर ही उठी बैठी थी। तुझे तो किसी बात की समझ ही नहीं।

हरो भूरी के दूसरी ओर कुत्ते के साथ खेल रही थी। मसासिंह ने कहा करमा फिर तू अभी चली जा, रात को वापिस आ जाना आज फिर ज़रूर बैठ कर बातें करेंगे तू उधर से भी सलाह कर आएगी। फिर हरो के हाथ पीले करने के लिए कोई निर्णय करेंगे। रात को काफी देर से, जब हरो सो जाएगी सभी लोग सो जाएँगे केवल तू होगी और मैं। सच करमा आदमी बाहर से होकर आए तो बातें करने और मिलने का मज़ा भी बड़ा आता है।'

तो भला मुझे कहीं विलायत से वापिस आना है। परन्तु अब जाऊँ कैसे? पहले कुछ खर्चे की व्यवस्था तो हो। बापू वाले दिन अब नहीं रहे। हाय राम, चना

का कोठा भरा रहता था अब तो मुट्ठी भर का भी नहीं है। किसके मोहताज हो गए हैं। रहना था पर नहीं अन्न की बोरी नहीं यह भी कोई ज़िन्दगी है? तनिक जोर की हवा चले तो यह झुग्गी उड़ कर पता नहीं कहाँ चली जाए। आगे कहता करमो के आँसू बहने लगे। मायके की भी उसे याद आ गई। कहने लगी तुम जिन्हें अपने कहते हो पता नहीं उनका क्या हाल है। यह भी भाग का विनाश है सुना है उधर भी बड़ी बाढ़ आई है। क्या पता वे भी हमारी तरह छप्पर बैठे हों।

करमो तुझे इस तरह दुखी देख कर मेरा दिल भी दुखी होने लगता है। फिर भी ठीक है यदि उधर बाढ़ आई है तो गाड़ी सूखी नहीं आएगी। हरो की बात का तो उलझाव बना ही करना। आज रात तक तो तू पैदल भी चली जाएगी। यहाँ से अमृतसर तक आठ आने भाड़ा गुरदासपुर तक दस। पता लगा है अब सियालकोट तक मोटर जाती है। छः आने वहाँ तक के समझ लो। आगे सैदोवाल तक तो पैदल ही चलना होगा। मस्तासिंह ने बात करते करते अपनी तहमद के किनारे से गाँठ का नोट खोला। पता नहीं कितने दिन से संभाल कर रखा हुआ था। बहुत मैला था और काफी घिस गया था। हरो आ गई। दोनों को फिर चुप होना पड़ा। भैंस पुनः अपना रस्सा तोड़ने का काम कर रही थी। मस्तासिंह ने रस्सा और दात्री हाथ में उठा कर चलने की करी। करमो ने घास डालने वाली टोकरी झुग्गी में से उठा कर मस्तासिंह को पकड़ाने के बहाने फिर बात करने का अवसर निकाल लिया।

उमर तो हरो की इतनी नहीं पर जवान लगती है। मेरी यह चिंता मन से हट जाए तो अच्छा है। आजकल कोई भरोसा नहीं घर घाट जो कोई न हुआ।

हाँ हाँ मैं तेरी चिंता को समझता हूँ। मेरी बात मानो और अभी चली जाओ। पर वैसे हरो तो अभी मुश्किल से तेरह की होगी। जिस वर्ष बहुत बाढ़ें आई थीं न वह जब अम्ब नगल बह गया था रावी बल्हड़वाल से चार मील दूर बहती थी हरो तीन साल की होगी उस समय मुझे यह बात याद है। ऐसे महसूस होता है जैसे कल की बात हो।

ठीक है पर लड़कियों के बढ़ने का पता नहीं लगता तेरह वर्ष में ही देखता नहीं मेरे से भी ऊँची लगती है।

पर यदि कोई सम्बन्ध बन गया तो गुजारा कैसे करेंगे? मेरे पास नकद तो यही पाँच ही है जो मैंने तुम्हें दे दिये हैं। या बीस फौजासिंह से लेने हैं। वह कहता था इस बार मक्की बेच कर तुम्हारा निपटा दूँगा। पर मक्की तो दाना पड़ने से भी पहले समाप्त हो गई। अब उससे भी मिलने की कोई आशा नहीं करमो। ये दिन भी हमें देखने थे। छः सात हजार की आबादी। सारे इलाके में सबसे बड़ा गाँव था। अब तो सारी कोई डेढ़ हजार की आबादी रह गई होगी। इस आबादी का भी कोई पता नहीं। ऐसे अभियुक्त वाली हालत है जिसको फाँसी का आदेश हो चुका हो। नदियों के फेर से बचने के लिए भारी साधना की आवश्यकता होती है। पर करमो हमारे वे कुएं बाग और कोठे तो अब वापिस नहीं मिलेंगे। पता नहीं कितनी देर इन खेतों

के आस-पास झुग्गियों में रहना हमारे भाग्य में लिखा है। करमो बातों ही-बातों में मैं किस तरफ चला गया? असल बात सोचने की यह है कि यदि हाथ-पल्ले कुछ न हुआ तो हरो का वक्त कैसे निकलेगा? फसल भी बाढ़ की भेंट हो गई। हरो के नहर का सहारा भी जिसे तू बना रहा है लगभग टूटा ही पड़ा समझना चाहिए। यह नहर ही अब हमारे प्राण निकालने का कारण बन रहा है।"

बातों में लगे मसासिंह और करमो झुग्गी से काफी दूर निकल आए। दाती, खुरपा रख कर मसासिंह हरी घास पर बैठ गया। धूप चमक रही थी। चारों ओर नजर दौड़ाई तो आस पास दूर तक लोगों के ढोर चर रहे थे। बल्हडवाल का यह किनारा जिस ओर रावी बह रही थी सामने दिखाई दे रहा था। दूर-दूर तक लोग चलते फिरते दिखाई देते थे। मसासिंह ने चारों ओर देख कर उच्छ्वास लेते हुए कहा 'करमो इन्हीं स्थानों पर हम कितनी कितनी देर बैठते थे। मां तुम्हें रोका करती थी बापू भी मना करता था नई बहू आई है, इसे नाश्ता देकर खेतों की ओर मत भेजा करो। करमो तू कितने जोश और प्यार से भागी हुई आती थी। मैं तेरे लिए अजनाले से जूता लाया था। तू एक दिन पहन कर आ गई। तुझे याद है कि तू पत्थर पर से फिसल कर गिर पड़ी थी। मैंने तुझे उठाया। बापू देखता था, मैं पसीना पसीना हो गया था। तेरी रेशमी सलवार घुटने पर से फट गई थी करमो, तेरे घुटने पर रगड़ भी लग गई थी। घर गए तो माँ ने मुझे डांटा था। तीन-चार दिन तुझे खाना देकर नहीं भेजा। एक दिन मां को साधारण-सा बुखार हो गया तुझे फिर खाना लेकर आने का अवसर मिल गया। याद है करमो तुझे अरे मेरा करमो।

भूली यादों की याद में मसासिंह एक बार अपने आप को भूल गया। उसने करमो को आलिंगन में लेने के लिए बाहें फैलाईं पर उसके अपने ही हाथ फिर वापिस छाती तक आ गए। दूर से आते हुए कुछ व्यक्तियों को देखकर करमो उठ कर खड़ी हो गई थी और दूर निकल गए अपने ढोर की ओर देख रही थी। 'बहुत देर हो गई है हरो को आजकल कभी इतनी देर मैंने अकेला नहीं छोड़ा। वह भी सोचती होगी मैं कहाँ चली गई। करमो की बात सुनकर मसासिंह ने कहा, 'हां जा मैं अभी अभी थोड़ी-सी घास काटकर आता हूँ। फिर तुझे मनवाल भेजूंगा। अब काफी देर हो गई। रात को तो तू वापिस नहीं आ सकेगी। अच्छा, कल ही आ जाना।

इतनी बात कह मसासिंह ने फिर बात छेड़ दी सच करमो वह सामने वाला स्थान था जहां से तू फिसल कर गिर पड़ी थी।

करमो वापिस आकर फिर बैठ गयी। हाँफती हुई बोली, पर उस समय तो यह आसाढ़ और सावन की धूप भी बड़ी शीतल होती थी। ऊँची-ऊँची फसलों की छाया नदी की ओर से ठंडा शीतल पवन चलता था मक्की-बाजरा चारों ओर इतना ऊंचा होता था कि कहीं आदमी को देख भी नहीं सकता था।

'बापू रोटी के चार ग्रास मार कर लस्सी का कटोरा पीकर दूसरी ओर मक्की काटने चला जाता था और हम दोनों कितनी कितनी देर यहाँ बैठे-बैठे बातें करते रहते थे। एक बार माँ ने पड़ोसियों के लड़के शमी को तेरा पता लाने भेज दिया

अब तक खाना खिला कर वापिस क्यों नहीं आयी।

हाँ, मुझे सब कुछ याद है, पर उस समय इतनी तो चिन्ता नहीं थी न। साथ ही उस समय आपस का प्यार भी बाकी था। हम घर की सुख जानते थे। अब घर की याद में लम्बे रहे हैं। उठकर इस सुख सौदे के लिए भी न समय है और न स्थान।

हाँ, ठीक है करमा, मुझे उस समय कोई चिन्ता नहीं थी। पर माँ को तेरी चिन्ता थी।

मसासिंह की बात सुन कर करमा ने कहा, "अब बहुत हो गयी है। आज जरूर जल्दी आना, गंगावाल की सलाह करेंगे।"

"करमा और दिन रुक हो जायें। पता लगा है कि सरकार बाढ़ पीड़ितों के लिए कुछ कर रही है, उस वक्त ही इस की समस्या हल करने की बात सोचेंगे।"

करमा दस कदम दूर जा चुकी थी। वहीं से उसने जोर से कह दिया, "पर जरूर जल्दी आना, अभी सलाह होगी दस सेर। सरकार के कुछ करने की बात मैंने भी सुनी है। पर पातशाह के मामले और दरियाओं के फेर, कुछ आप ही हिम्मत करना चाहिए।"

मसासिंह ने काम करने के लिए दाँती उठाई, कमर की तहमद ठीक कर वह पत्थर पर रखने लगा तो उसे एक किनारे में गाँठ-सी महसूस हुई। पता नहीं किस समय वह पाँच का नोट करमा ने उसकी तहमद के किनारे में बाँध दिया था। मसासिंह आज शीघ्र ही घर आ गया था परन्तु करमा के गंगावाल जाने की सलाह अभी स्थगित कर दी गयी थी।

भीनी-भीनी खुशबू

मोहनसिह, १९०५

प्रा० मोहनसिह पजाबी के शीर्षस्थ कवियो म है। पजाबी की आधुनिक कहानी के निर्माण म भी उनका महत्त्वपूर्ण योगदान है। सन् १९४२ म अपनी कहानियो क पहले सग्रह के प्रकाशन के साथ उन्होने पजाबी क गिने चुने कहानीकारो म अपने आप को प्रतिष्ठित किया था।

कहानी लेखन म पर्याप्त सफलता पाकर भी प्रा० मोहनसिह न कहानी लेखन म विशेष रुचि नही दिखाई। परन्तु थोडी सी कहानियाँ लिखकर ही उन्होन इस विधा म अपना स्थान सदा के लिए सुरक्षित कर लिया है।

रेशमा और नवा दाना बहनें सारा दिन बनफशा तोडती रही थी। उनका पिता सतार मुहम्मद एक बडा जमीदार था। चाहे पहाड पर जमीन बहुत थोडी होती है फिर भी उसकी खुद की पाच-सात बीघा जमीन थी। हल चलाने के अलावा उसने नभिआगली पहाड का ठेका लिया हुआ था। यू तो एबटाबाद से लेकर कोह मरी तक के सब पहाडो पर बनफशा उगता है पर इस पहाड जितना बनफशा कही नही होता। वर्ष म करीब साठ-सत्तर मन बनफशा अकेले इस पहाड से उतरता है। अप्रल और मई के महीने सतार मुहम्मद के आँगन म बनफशे की छोटी छोटी पहाडिया लग जाती हैं। जब बनफशा सूख जाता तो उसको बैलगाडियो पर लादकर वह रावलपिंडी ले जाता जहाँ सौ सवा-सौ रुपये फी मन के हिसाब से वह बिक जाता।

सतार मुहम्मद डूगन का रहने वाला था जो नभिआगली से तीन मील नीचे एक छोटा-सा गाँव होता है। पक्का नमाजी और खुदा परस्त होने से उसने गाव म एक

छोटी-सी मसजिद बनाई हुई थी। हालांकि उसने एक मुल्ला भी रखा हुआ था फिर भी वह सुबह तड़के उठ कर नहाने के लिए हमाम गरम करता मसजिद में झाड़ू लगाता। कई बार नमाजियों के दरवाजे ठोक ठोक कर उन्हें घर से सवेरे लाता। ग्रीष्म ऋतु में तो मसजिद में अच्छी चहल पहल रहती किन्तु सर्दियों में जब बर्फ गिरती तो लोग कई कई दिन घरों से बाहर निकल न निकलते पर सतार मुहम्मद मस्जिद में ही नमाज पढ़ता। लोगों ने अपनी खिड़कियों में से कई बार उसे बर्फ पर आसन बिछाकर नमाज पढ़ते देखा था। कई बार तो नमाज पढ़ते पढ़ते बर्फ उसकी बाहों और पीठ पर जम जाती थी।

खुदा परस्त होने से सारा गाँव सतार मुहम्मद की इज्जत करता था। पर लोगों को सबसे अच्छा वह इसलिए लगता था क्योंकि उसने बनफ्शा का ठेका लेकर सारे गाँव को रोजगार ढूँढ दिया था। सुबह तड़के ही औरतें झोलियाँ बाँध कर बनफ्शा चुनने निकल जातीं और संध्या समय करीब सात-आठ आने की कमाई कर वापस आ जाती।

रेशमाँ और नेका भी बनफ्शा चुनने निकल जाती यद्यपि उन्हें इस मेहनत की कुछ खास आवश्यकता नहीं थी। उनका पिता भी इस बात को पसन्द नहीं करता था कि उसकी बेटियाँ आम काम करने वालियों की तरह पहाड़ों में चक्कर लगाएँ। कई दफा जब वह सुबह सवेरे झोलियाँ बाँधकर बनफ्शा चुनने के लिये निकलती तो सतार मुहम्मद उनका रास्ता रोककर प्यार से कहता कहाँ चली ये पागल लड़कियाँ! तुम्हें इस समय जाने से क्या मतलब? अल्लाह ने बहुत दिया है। आराम से बैठ कर खाओ। जब वे न रुकतीं और लाड से किनारा-सा होकर बाहर निकल जातीं तो वह खामोश रह जाता और कुछ समय पश्चात् जरा रोष से उनकी माँ से कहता रेशो की माँ तुझे जो कहा है कि मेरे से लड़कियों का कुछ न कहलाया कर। अन्दर ही समझा-बुझा लिया कर लड़कियों को। मुँह से रोकना मना करना बुरा लगता है पर तुझे किसी बात की समझ हो तब न।

नेकाँ की उम्र बारह वर्ष की थी और उसकी समझ में नहीं आता था कि गाँव की सब लड़कियाँ बनफ्शा चुन तो वह क्या न चुने? मालूम नहीं उसका पिता उसे क्यों रोकता था हालांकि वह अपनी उमर की लड़कियों में सबसे ज्यादा बनफ्शा चुनती थी। बनफ्शे के गीत भी उसके बराबर कोई नहीं जानती थी। अभी कल ही माड़ीए बनफ्शे जदए नाजुक वाला गाना सुनकर हसनो बुआ ने उसका मुँह चूम लिया था। शायद उसका पिता इसलिये रोकता होगा कि कहीं पहाड़ से फिसलकर वह मर न जाय। एक बार जब पहाड़ की ढलान पर अपनी बकरी के पीछे सरपट दौड़ रही थी तो उसका पिता आवाज दे देकर पागल सा हो गया था। उसकी आवाज में कितनी घबराहट और याचना थी यह सोचकर नेका काँप उठती। पर वह आज तक गिरी तो कभी न थी। उसने अपनी माँ से भालू की भी बहुत बातें सुनी थीं। पर वह तो अपनी लड़की को उठा ले जाते हैं। इसलिए वह अपनी बहिन के साथ बनफ्शा तोड़ने जाती थी।

रेशमाँ की उम्र कोई सत्तरह वर्ष की थी। उसे मालूम था कि उसका पिता क्या उसे रोकता है, फिर भी उसका दिल पहाड़ो की ऊँची चोटियों की ओर भागने को करता था। नीची जगह और चीज़ें उसे भाती न थी। अपना छोटा-सा गाँव और उसके छोटे-छोटे घरों से न मालूम क्यों वह ऊबती जा रही थी। दिन-ब-दिन उसे गाँव की गलियाँ तंग-तंग महसूस होती। रात को सोते समय जब उसकी नज़र छत की ओर जाती तो उसे वह बहुत नीची लगती और फिर उसे अपने पिता की अमीरी पर नाज़ होने लगता। वह कई बार सोचती भला इन छतों की क्या आवश्यकता थी? शायद सर्दी से बचने के लिये पर उसे तो कभी सर्दी नहीं लगी थी। न मालूम क्यों गाँव के बड़े-बूढ़े सिलों पर बैठ कर चरखों पर ऊन कातते रहते थे।

ऊन से शायद वह कम्बल। क्या इन सबकी ज़रूरत है? वह तो सिर्फ सलवार कमीज़ से ही सर्दियाँ काट देती थी। उनका पिता न मालूम क्यों गरम पानी से स्नान करता था। उसको तो ठण्डे पानी में हाथ मारने में आनन्द आता था। उसने कई बार बर्फ के गोले बना-बनाकर गालों से लगाए थे, गालों पर मले थे। कुछ गरमी-सी निकलती थी बीच-बीच में चिंगारियाँ भी। और उनका सफेद-सफेद रंग कितना सुन्दर लगता था! वह लोमड़ी के समान उंगलियों से बर्फ खोद-खोदकर नीचे से सफेद दूध जैसा बर्फ निकालकर गोले बनाती थी। उसकी माँ यूँ ही कहती थी कि बर्फ मुँह पर न लगाया कर गाल फूट जायेंगे। हूह! उसके गाल तो कभी न फूटे थे। अभी पिछले वर्ष ही फज़ल बढ़ई की लड़की ने बताया था कि बर्फ मलने से रंग गोरा हो जाता है। भला वह क्यों न अपना मुँह गोरा करे। फज़ल की लड़की तो सारे बदन पर बर्फ मलती थी। तभी तो वह बर्फ जैसी सफेद हो गई थी। वह कहती थी तू भी सारे बदन पर बर्फ मला कर। एक बार जबरदस्ती उसने बर्फ की मुट्ठी भर कर रेशमाँ के गले में से नीचे बहा दी थी। कुछ गुदगुदी सी हुई थी। पर उसके कुछ समय बाद ही फज़ल की लड़की का ब्याह हो गया और वह ससुराल चली गई। पिछले दिनों जब वह आई थी तो उसने बताया था कि उसकी ससुराल का गाँव पहाड़ की चोटी पर था। वह भी किसी पहाड़ की चोटी पर बसने वाले गाँव में ही विवाह करवाएगी। उसका अपना गाँव तो बहुत नीचा था। नाच-ही-नाच नीचे-ही-नीचे जैसे कोई कुआँ हो। उसको सब नीची जगहों की चीज़ों से नफरत थी। वह ऊपर चढ़ना चाहती थी ऊपर पहाड़ों की ओर बर्फ से ढँकी चोटियों की ओर। इसलिए वह नेका को लेकर बनफशा चुनने जाया करती थी।

आज रेशमाँ और नेका दोनों बहनें सारा दिन बनफशा ढूँढती रही थीं। नेका की झोली फूलों से भरी हुई थी पर रेशमाँ की झोली में यूँ ही घास-फूस थे। आज उसका दिल काम में न लगा था। वह कुछ उदास-सी थी। आमतौर पर वह पहाड़ की चोटी पर खुश रहा करती थी पर आज ऊँची चोटी पर चढ़कर भी उसका दिल नहीं लगा।

शाम छः बजे के करीब उन्होंने नीचे उतरना शुरू किया। नभिआगलो की सड़क पर एक नीले रंग की कार आकर खड़ी हो गई। उसमें से एक अंग्रेज़ और उसकी

मम निकलकर नीचे घाटी का नजारा देखने लगे। बीच ग्रप्रल के दिन थे। बर्फ पिघल चुकी थी। कहीं कहीं किसी जगह कोई ढेर रह गया हो चाहे। बाकी धरती का चप्पा चप्पा हरा भरा हो उठा था। रेशमाँ ने देखा कि गाँव की लडकियाँ मेम-साहब से कुछ माँगने के लिए चक्कर लगा रही है। रेशमाँ ने आज तक किसी मुसाफिर से कुछ न माँगा था। वह छोटे माँ बाप की बेटी तो नहीं थी पर गाँव की लडकियाँ तो चलाने के दिनों में सडक का किनारा भी न छोडती थी। फजल की लडकी ने एक बार किसी से अंग्रेजी साबुन की बट्टी ले ली थी। एक बार उसने वह साबुन रेशमाँ को भी मला था। बहुत अच्छी खुशबू आती थी उसमें।

आज उसका दिल भी किसी से कुछ माँगने को करता था। उसने नेकाँ से सलाह की और दोनों जल्दी जल्दी सडक की ओर उतरने लगी। पर उनके पहुँचने से पहले ही मेम और साहब मोटर पर बैठ कर गुम हो गये।

सडक पर पहुँचकर रेशमाँ मानो थक सी गई। उसने नेकाँ को कुछ समय तक सुस्ताने को कहा। दोनों बहनें सडक से पाँच-सात कदम नीचे उतरकर एक पत्थर पर बैठ गई। सन्ध्या धीरे धीरे उतर रही थी और अप्रैल का महीना होने से हवा भी ठंडी होती जा रही थी। उनका गाँव मानो उनके पाँवों में बिछा हुआ था।

रेशमा पत्थर पर चुपचाप लेटी हुई थी। नेकाँ उसे कई बार घर चलने को कह चुकी थी पर वह मानो कुछ सुनती ही न थी। एक-दो बार अकेली चल जाने का भय दिखा कर नेकाँ घर की ओर चल भी दी पर पन्द्रह बीस कदम जा कर फिर हँसती हुई वापिस आ जाती और झोली में से फूल निकाल निकालकर रेशमा के मुँह और सीने पर मुट्ठी भर भर कर मारने लगती। रेशमा जरा न हिली। न वह उदास थी और न खुश, न आशावान और न निराश। उसकी आँखों में न नफरत थी न मुहब्बत, न शोखी न थकावट। मानो उसकी आँखों के सब रंग पिघल कर एक हो गए हों। उसके समस्त शरीर का भी यही हाल था।

वह बनफशे की भीनी खुशबू की लहरों के साथ आँख खोलती बन्द करती। नेकाँ ने इससे पहले कभी उसे इस हालत में नहीं देखा था। वह हार कर रेशमा के पास बैठ गई और फूलों की सारी झोली उस पर उलट कर बोली 'ये ले, अगर थोडे फूलों के डर से घर नहीं चलती तो मेरे सारे फूल ले ले।'

कुछ समय बाद जब रेशमा ने करवट बदली तो क्या देखती है कि उससे दस पन्द्रह कदम हट कर दो मुसाफिर सडक के किनारे बैठे हैं। उनके नजदीक कोई लारी या मोटर न थी। हाँ कुछ दूर पर दो मजदूर पीठ पर बँधे हुए सूटकेस और बिस्तर से सहारा लिये सुस्ता रहे थे। दोनों मुसाफिर नवयुवक थे। लगता था जैसे वे एबटाबाद से काश्मीर तक पैदल ही यात्रा कर रहे थे। नथिआगली की छः मील सीधी चढाई चढकर वे बहुत थक गए थे। उनमें से एक लम्बा और बेडौल सा था पर दूसरा मध्यम कद का बहुत सुन्दर जवान था। रेशमाँ लगातार उसकी ओर देखती रही। कुछ समय पश्चात् जवान ने सिर से टोपी उतार कर घुटनों पर रख ली और बालों में गोरी-गोरी उँगलियाँ फेरी। हवा उनकी ओर से इस तरफ आ रही थी।

खुशबू का एक तेज झोंका उडकर रेशमां और नेका तक पहुंचा। नेका की इस ओर पीठ थी। उसे अभी तक उनकी उपस्थिति का ज्ञान न था पर खुशबू सूंघते ही उसने मुडकर देखा और फिर रेशमां की ओर पलट कर आंखें फैलाकर आश्चर्य प्रकट किया।

बस तो रेशमा रोज ही बनफ्शे की खुशबू में रहती थी, पर उस लडके की ओर से आ रही खुशबू की और ही लहर थी। युवक ने भी करवट बदली और उसकी नजरें रेशमा पर पडी। वह बहुत थका होने के कारण बहुत समय से आंखें बन्द किए लेटा था। रेशमा ने मानो फिर से उसमें ताकत पैदा करदी। उसकी आंखें नींद में जाग हिरन जैसी छलांगें भरने लगी।

रेशमा ने धीरे से नेका के कानों में कहा, "आ, इनसे खुशबू मांगें।

"ठीक है आ।'

जा फिर माग।"

मैं अकेली नही जाती।

क्या नही जाती ? वे कोई तुझे खा तो नही जायेंगे ?'

'तू क्यो नही जाती ?'

'मैं बडी हू वे मुझे नही देंगे। तू छोटी है, तुझे दे देंगे।'

"भई मैं तो नही जाती। मुझे तो उनसे डर लगता है। क्या मालूम वे मार मार के भगा दें।

'हू ! डरपोक कही की !

'डरपोक हूँ तो डरपोक सही मैं तो नही जाती। कुछ समय के लिए दोनो बहनें चुप हो गई। नेका बनफ्शे के फैले हुए फूल एकत्रित करने लगी और रेशमा युवक की ओर देखती रही। उसने भी दो-चार बार रेशमा की ओर देखा। लम्बा युवक अभी आंखें बन्द किए उल्टा लेटा हुआ था।

ना ना नेका की बच्ची ! डर लगता है क्या ?'

तू क्यो नही जाती ? तुझे डर लगता है ?"

रेशमा उठ कर बैठ गई और नेका बनफ्शे की झोली संभालकर खडी हो गई।

आ दोनो चलें।

अगर उन्होंने न कर दी तो ?

हम कौन पूरी शीशी मांगने वाली हैं ! कहेंगे थोडी-थोडी बालो में लगा दें।

युवक ने उनकी बातें सुन ली थी। वह मुस्कराकर बोला 'खुशबू लेनी है ? आओ दूँ।

उसके सफेद दांत शाम के धुंधलके में रेशमां को बहुत सुन्दर लगे। वह भी हँसी उसके भी दांत सफेद दूध के समान थे। पर युवक देख न सका। वह अपने सिरहाने तह करके रखे हुए कोट की जेबें टटोल रहा था। इतने में दोनो बहनें उसके पास पहुंच गई। युवक ने जेब में रूमाल निकाल कर रेशमां के हाथ में थमा दिया। उसमें से एक मजाव सी भीनी भीनी सुगन्ध उठ रही थी। रेशमां ने रूमाल दो बार नेका की नाक से लगा कर स्वयं सूँघा। फिर उसे खोलकर रेशमां ने रूमाल को लपेट कर एक बार

फिर सूंघा। सुगंध बहुत अच्छी थी पर युवक के बालों से आई खुशबू जैसी लहर इसमें न थी। उसका दिल किया कि जवान के बालों पर नाक रख कर सूंघे। पर यह कैसे संभव था?

इतने में दूसरा भी जाग उठा। नेकां गांव की ओर मुड़ गई और रेशमां भी। युवक भी उठकर रेस्ट हाउस की चढ़ाई चढ़ने लगा। दो तीन कदम चलकर रेशमां ने मुड़कर देखा, युवक भी मुड़कर उसकी ओर देख रहा था। रेशमां मुड़कर युवक की ओर बढ़ने लगी और नेकां के कान में बोली, "नेकां, ज़रा खड़ी रह। मैं और थोड़ी खुशबू ले आऊं।"

"और क्या करेगी? चल चलें। रात घिरती आ रही है।"

"रूमाल से तो खुशबू अब तक उड़ गई होगी। पूरी शीशी अगर दे दे तो!"

"दे चुका पूरी शीशी!"

"कसम अल्लाह की मेरा दिल कहता है दे देगा।"

इतने में युवक भी मुड़कर उनके समीप आ गया और कहने लगा, "अगर तुम्हें खुशबू पसंद आई है तो मैं शीशी भी दे सकता हूं पर वह सूटकेस में बंद है। अगर बंगले तक चलो तो मैं निकाल दूंगा। यहां सड़क पर कौन सामान खोलकर बैठेगा?"

रेशमां ने नेकां की ओर देखा पर वह न जाने क्या सोचकर दो-तीन कदम गांव की ओर चल पड़ी और बोली, "मैं तो घर जा रही हूं। रेशमां तुझे लेनी है शीशी तो जा ले आ।" इतना कहकर वह गांव की ओर उतरने लगी और युवक डाक बंगले की चढ़ाई चढ़ने लगा। उसका लम्बा साथी और कुली बहुत आगे निकल गए थे। रेशमां उसके पीछे पीछे चढ़ती गई पर थोड़ी दूर जाकर रुक गई। उसका दिल कांप रहा था। युवक ने पीछे मुड़ कर उसके कंधे पर हाथ रखा। वह फिर चढ़ाई चढ़ने लगी।

नेकां ने दो-तीन बार बिस्तर में उठकर द्वार की ओर नज़र घुमाई पर रेशमां अभी तक न आई थी। नेकां के दिल में आया कि मां को सब बात बता दूं पर फिर थोड़ी देर और इन्तज़ार करने के ख्याल से वह लिहाफ में मुंह छिपा कर लेट गई। बाहर बारिश हो रही थी, शायद इसलिए ही रेशमां रुक गई होगी। उसका पिता भी अभी मस्जिद से वापिस नहीं आया था। वह आमतौर पर नमाज़ पढ़ कर रात को दस बजे तक वापिस आता था। खाने का काम वह पहले ही समाप्त कर जाता था।

नेकां की मां अभी तक काम काज में लगी हुई थी। करीब दस बजे वह पशु वगैरह बांधकर [illegible] जमा कर और छोटा मोटा काम करके अन्दर आई। नेकां हाथ पैर पसार कर लिहाफ को कुछ ऊंचा करके लेटी हुई थी ताकि उसकी मां समझे कि दोनों बहनें सो रही हैं। पर आम्ना ने पास आ लिहाफ खींच कर कहा, "आ रेशमां, उठ खाना नहीं खाना क्या?" पर रेशमां को वहां न पाकर वह घबरा गई, घबराई हुई बोली, "कहां गई है? इतनी बड़ी होकर भी मां से मसखरी करती है!"

इतने में इकबाल मुहम्मद भी मस्जिद से वापिस आ गया और बाहर बरामदे में हो

बोला—'ग्रा रशो की माँ, यह नजीर का लकडियाँ तो ग्रदर रख लेनी थी। सब भाग गई हैं।' यह कहकर वह ग्रन्दर ग्रा गया। नेका घबराकर उठ बठी ग्रौर डर से रुग्राँसी हो गई। 'क्या बेटा! क्या हुग्रा? तुझे माँ ने डाटा है क्या?' सतार मुहम्मद ने नेका को ग्रपने सीने से लगाते हुए पूछा, रेशमाँ तो नही तुझ से लडी? कहाँ है वह ठीक करू उसे?

ग्राइशा ग्रौर सतार मुहम्मद का खयाल था कि रेशमा ने नेकाँ को मारा है ग्रौर ग्रब डर से छुपी हुई है। उन्होने ग्राग पीछे देखा फिर बाकी के दो-तीन कमरो में, बाहर ग्राँगन में, ग्रौर फिर पशुग्रो के छप्पर में ढूँढा, पर वह कहा न मिली। फिर वह लालटेन लेकर बाहर चला गया। ग्राइशा का डर से सास रुक-सा गया। वह नेका के कमरे में ग्राई, नेका भी डर से गुम-सुम हुई बठी थी।

ग्राइशा ने दिलासा देते हुए पूछा, बेटा बता न क्या बात है? रेशमा को कहाँ छोड ग्राई है?

हम दोनो साथ ही बनफ्शा तोड कर ग्राई। रास्ते के पास ग्राकर रेशमा कहने लगी नेकाँ, जरा मेरा बनफ्शा पकड। म पेशाब करके ग्राती हूँ। मैंने बनफ्शा पकड लिया ग्रौर वह पहाडी के नीचे उतर गई।' नेका ने झूठ बोला, 'फिर मैं ग्रधेरा होने तक उसका इन्तजार करती रही। पता नही उसे क्या हुग्रा, फिर मैं ग्रकेली घर ग्रा गई।

'ग्ररे तूने ग्राते ही क्या न बताया? जीभ पर फोडा हो गया था, हाय-हाय जालिम!' ग्राइशा ने दुख से ग्रपना सिर हाथो में दबा लिया ग्रौर कितना समय यू ही बैठी रही। उसके दिल में कई तरह के विचार ग्राने लगे। फिसल कर किसी गड्ढे में तो नही गिर गई या कोई भालू खा गया। फिर उसे यह भी खयाल ग्राया कि ग्राजकल चराई का रास्ता चालू है कही किसी मुसाफिर के साथ न चली गई हो। पर नही-नही मेरी बेटी ऐसी नही हो सकती। उसने ग्रगले क्षण ही पश्चात्ताप किया। ग्राज तक किसी ने उसकी ग्राख ऊँची नही देखी। हो सकता है किसी ने जबरदस्ती की हो या यू ही फुसला लिया हो।

करीब ग्यारह बजे सतार मुहम्मद ढूँढता हुग्रा ग्रन्दर ग्राया। तेल समाप्त हो जाने के कारण लैप बुझ चुका था। उसने लैप एक ग्रोर रख दिया ग्रौर स्वय ग्राइशा के पास एक भरी हुई बोरी पर बैठ गया। माला उसके हाथो में काँप रही थी। काफी समय तक वह कुछ न बोला। कुछ समय पश्चात् ग्राइशा बोली नेका कहती है कि पहाडी के नीचे पेशाब करने उतरी तो फिर नही चढी।

सतार मुहम्मद ने ग्राकाश की ग्रोर मुह करके कहा "ग्रल्लाह! किसी खड्ड में गिर कर मर गई हो भालू ले गया हो मुझे कुछ शिकायत न होगी। पर मेरी इज्जत को दाग न लगा दिया हो। इसके बाद वह कुछ न बोला। ग्राइशा भी कुछ न बोला। नेकाँ भी खामोश रही। सतार मुहम्मद सारी रात बैठा माला फेरता रहा। ग्राइशा भी बैठी रही पर बीच-बीच में घुटनो में मुह रख कर रोती भी रही। नेकाँ ने सिर पर लिहाफ लपेटा हुग्रा था पर सारी रात ग्राखें खुली रही ग्रौर कान चौकन्ने रहे।

सुबह चार बजे के करीब नेकाँ ने मुंह पर से लिहाफ हटाया। उसको बाहर से हलकी सी आवाज आई थी। उसकी माँ ने घुटना पर सिर रखा हुआ था और बिना आँखें बन्द किये माला फेर रहा था। नकाँ ने आहिस्ता से जाकर द्वार खोल दिया। रेशमाँ अन्दर आ गई।

'पता दिया क्या ?'

नहीं।

रेशमाँ ने नकाँ को सीने से दबा लिया और बाहर आँगन में खड़ी रही। उसकी माँ ने भी खटका सुन कर सिर उठाया। सतार मुहम्मद ने भी आँखें खोलीं।

कहाँ रही लड़की ?

रेशमाँ चुप।

बोलती है कि नहीं ?

रेशमाँ चुप।

बोलती नहीं ? सतार मुहम्मद खड़ा हो गया। रेशमाँ चुप। सतार मुहम्मद चुप। आइशा चुप। नेकाँ चुप। सतार मुहम्मद ने पीछे हटकर डंडे को पकड़ा पर आइशा उसका हाथ पकड़ कर बोली 'अल्लाह का वास्ता है यह काम न करना। लड़की की हड्डी पसली टूट गई तो सारे गाँव में ढिंढोरा पिट जाएगा। फिर रेशमाँ की ओर मुड़कर बोली तू बोलती क्यों नहीं ? फिर गई थी कि किसी ने काट लिया था या बारिश करके नहीं आई कुछ बक दे। क्या हुआ था ? क्यों नहीं आई ?

बारिश आ गई थी अभी रेशमाँ ने वाक्य पूरा भी न किया था कि मुहम्मद ने लात खींच कर उसके सीने पर मारी रेशमाँ की बच्ची ! इसके लिए अलग बारिश हुई थी !' रेशमाँ की छाती से खून के फव्वारे छूटने लगे और साथ ही उसके कुरते से खुशबू उड़ उड़ कर कमरे में भरने लगी। खून क्या और सुगंध क्या ! पल भर के लिए आइशा हैरानी में खड़ी रह गई फिर दौड़ कर उसने रेशमाँ को गोदी में उठा लिया। सतार मुहम्मद सब बात समझ गया था। उसने लातों से रेशमाँ को पीटना शुरू किया बारिश के कारण नहीं आई तो नकाँ कैसे आ गई और यह खुशबू कैसी है सच न बताएगी ? न बकेगी कैसे न बकेगी ? सच न बताएगी तो मार डालूँगा।

आइशा ने अल्लाह का वास्ता डाल सतार मुहम्मद के आगे हाथ जोड़े। कहा अगर मर गई तो लाख की इज्जत खराब हो जाएगी। मेरी मानो मसजिद चले जाओ। नमाज का समय हो गया है। लोग कहेंगे क्यों नहीं आया पिछले चालीस वर्षों में तुमने एक दिन भी नमाज के बिना नहीं काटा। मसजिद जाओ, पीछे से दिलासा देकर सब पूछ लूँगी।

सतार मुहम्मद भरा हुआ मसजिद की ओर चल दिया। आइशा ने रेशमाँ की कुरता के बटन खोले छाती में इत्र की शीशी टूट कर चुभ गई थी और खून रुकने का नाम नहीं लेता था। आइशा रेशमाँ के सिर पर प्यार से हाथ फेरती हुई बोली बता दे बेटा अपनी माँ को सब कुछ बता दे। रेशमाँ ने नेकाँ की ओर ऐसे देखा मानो उसको सब कुछ बता देने की आज्ञा दे रही हो। आइशा को कुछ आशा हुई। वह बोली,

'नहीं बेटा, तू ही बता दे।' नहीं ने सारी बात बता दी। आइशा को अपनी जवानी के दिन याद आ गये। उसे याद आया कि कभी वह भी मुसाफिरों से चीज़ें माँगती थी, पर वह तो चीज़ें लेते ही एकदम भाग जाती थी। रेशमा के सिर पर एक लम्बा-सा प्यार देकर पूछा, 'पर बेटा, तू उसके पीछे क्यों चली गई थी ?

क्या करूँ ? मुझे यह भीनी भीनी खुशबू लेनी थी।" यह कहकर रेशमा ने अपनी आँखें माँ की गोद में छिपा ली।

हलवाहा

सन्तसिंह सेखों, १९०८

आंचलिक, मनोवैज्ञानिक और यथार्थवाद के क्षेत्र में सन्तसिंह सेखों की गणना पंजाबी के श्रेष्ठ साहित्यकारों में की जाती है। पाश्चात्य शिल्पविधि और यथार्थवादी भावभूमि से आधुनिक पंजाबी कहानी को प्रभावित करने वालों में सेखों का नाम सब प्रथम लिया जाता है।

'समाचार', 'कामे ते जोधे', 'बारांदरी', 'तीजा पहर' आदि प्रमुख कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। यह हीन कहानी सेखों की एक प्रतिनिधि रचना है।

अट्ठारह बरस की साहबो का जीवन निखर रहा था। प्रतिदिन उसके जगली माता पिता, चाचा-ताऊ उसका ब्याह कर देने के बारे में सोचते और कई बार इकट्ठे बैठकर इस बारे में परामर्श भी कर चुके थे। किन्तु साहबो को चचा-ताऊ के लड़कों में से कोई भी पसन्द नहीं था। उसके ताऊ का बड़ा लड़का चमीर दो बार कैद भुगत चुका था और चाहे वह सुन्दर और लम्बा-तगड़ा जवान था साहबो उसे कायर समझती थी। वह दोनों बार सेंध लगाता पकड़ा गया था। और इन नए आबादकार जाटों के लड़कों ने उसे एक दो बार मारा पीटा भी था। यदि वह कायर अथवा कम से कम फुसफुसा न होता तो क्या वह पीछा करने वालों को मारता पीटता नहीं और डरा धमका कर सेंध से भाग न निकलता? आबादकार सिखों के लड़के उसे कायर ही समझते थे। वे कहते थे इसके पास शरीर तो है लेकिन दिल नहीं। और साहबो दिल की गाहक थी शरीर की नहीं। शारीरिक दृष्टि से उसके पास खुद कोई कमी न थी पाँच फुट छः इंच लम्बी थी वह और मक्खन

पर पना उसका शरीर मक्खन सा ही सफेद और उसम भी अधिक कामल था।

और फिर साहबो पर इन जाट सिखा की छाप पडी हुई थी। य मुरब्बा दार थे। अग्रेज न नहरें निकाल कर इस साण्डवार म इन्ह ला बसाया था। साहबा क बाप-दादे उम्र यहां पीढियो से रहते थे। यदि उसके पिता पितामह बलवान होते तो क्या अपनी भूमि पर अन्य किसी को बसन देत ? साहबो तो सम्भवत इस तरह नहीं सोचती थी, हां उसने अपन पितामह चाचा ताऊ को इस तरह की शिकायतें करते सुना था। और फिर साहबो क पिता का इस गाँव म न अपना घर था और न ही धरती। उसके पास पशु गाय भैस तथा भेड-बकरियाँ बहुत था। वह किसी क अधीन होकर धरती नही जोतता था। वह अपनी गाय भैसो क घी स तथा बछड बेचकर, मक्खन आदि बेचकर अच्छा गुजर कर रहा था। रहन का घर उसे एक आबाद कार सिख गुरनामसिंह न ही दिया था। उस सिख न साहबो के पिता वहाब का अपना आधा अहाता द रखा था। क्योकि इस प्रकार वह स्वभावत वहाब के पशुओ तथा दूध क गोबर का स्वामी बन जाता था। साहबो का बाप, भाई मामा और शाहजादा, मल्लू और शुजा, गुरनामसिंह स कोई झेंप नही खाते थे और गुरनाम सिंह की पत्नी हरकौर साहबो की मां, आइशा क सामन हमेशा मिनमिनाती और मनुहार करती रहती थी। क्या हरकौर और क्या अन्य लोग इन जाटो म किसी को भी साहबो की मां क नाम का ठीक उच्चारण नहा आता था और वे सभी आइशा का एशा ही पुकारते थे। फिर भी साहबो इन जाटो को अधिक कुलीन सम झने पर विवश थी।

इन जाट सिखा की लडकिया म कोई भी तो साहबो जितना सुन्दर न थी। यह साहबा की स्वय सिद्ध बात नही थी सारे गाँव की स्त्रियाँ साहबो तथा उसकी माँ के समक्ष यह बात कहती थी। पडास क दो चार घरा की लडकियाँ स्वय साहबा की रूप माधुरी की प्रशसा करती रहती थी। उस जसी लम्बी-पतली लडकी उस गाँव म कोई न थी। और कितनी सुन्दर साहबो कपडो के भीतर थी इसका अनुमान साहबा क अतिरिक्त भला किसको हो सकता था ? साहबो चाहती थी कि वह इन जाट सिखो का अग उनके भाई चार की रूपरानी बन।

साहबो क घर स लगभग पाँच-छ कोस दूर के गाव स जगली अतिथि आया करता था। वह पचीस वष का सुडौल दीघकाय युवक था। उसका पूरा नाम शहाबुद्दीन था। सब कहते थे कि वह अपन गाव म एक मुरब्बे का मालिक है गुर नामसिंह वधावा सिंह, ईश्वर सिंह तथा किशन सिंह की भाँति। किन्तु साहबा को विश्वास नही होता था। यदि शहाबुद्दीन जगली को अग्रेजो को मुरब्बा देना होता तो साहबा के पिता चाचा-ताऊ म क्या दोष था शायद शहाबुद्दीन को अतिथि समझ कर ही ऐसा लोग कहत थे। कौन जान उसके गाँव के लोग भी यहाँ के जाट सिखो की तरह उस सामो कहकर पुकारते हो जसे उसे साहबो नही सामा कहकर पुकारते हैं। खैर यदि वह शहाबुद्दीन मुरब्बे वाला था भी तो इसम क्या। साहबो क पिता भाइयो ने तो कभी भी उसे साहबो के योग्य वर नही समझा था। शहाबु

के लिए घास लाने की अधिक आवश्यकता नहीं पड़ती। गाँवों और चरागाहों में पशुओं के चरने के लिए घास बाग भी बहुतेरी थी। और फिर निरंजन की माँ ने सदा भेजा था बेटा मामा के पास ही रहना दो चार महीने। वहाँ दूध का धन्न है तगड़ा होकर आना। दूध की अधिकता की बात सच तो निश्चय ही निश्चित रहा बात निरंजन को पता नहीं था किन्तु माँ की इस बात ने निरंजन के मामा के पास रहने की इच्छा को और भी दृढ़ कर दिया था। सच तो यह था कि जब तक साहबो उसकी आँखों में आँखें डालकर देखने को तैयार थी पर बाहर आते जाते लगाव चितवन देने को राज़ी थी तब तक निरंजन की आत्मा मामा के पास से चले जाने को तैयार न थी।

निरंजन रुक गया था और अब उसकी हँसी उदास थे। किन्तु न जाने क्या ब साहबो को अब भी प्यारा लग जा रहा था उसे अब भी पीली मोतिया पगड़ी औ लड़खड़ करती चादर वाला निरंजन ही दिखाई देता था।

साहबो ने एक दिन निरंजन को गोबर का टोकरा उठवाने के बहाने बुलवा लिया। पिछली रात पानी बरसा था और निरंजन और दूसरे हलवाहे हल जोतने न गए थे। और साहबो को वह मुँह अँधेरे ही गवखाने में मिल गया था।

—साहबो, अब तो मैं चला जाऊँगा—निरंजन ने उदास होकर फुसफुसाकर कहा।

—तो मुझे भी ले चल अपने साथ—साहबो ने साहस संचित करके कह ही दिया

इस प्रकार आधी हँसी और आधा प्यार थोड़े दिनों में ही अगाध प्रेम बन गया फिर साहबो और निरंजन की एक रात भाग निकलने की सलाह हो गई। गाड़ी मील पर रसाले वाला के स्टेशन से प्रातः चार बजे छूटती थी। उसी गाड़ी में उ चढ़ना था। और साहबो को स्वयं आकर कोठे पर परिवार से दूर अकेले पड़े निरंज को जगाना था।

वचन की बँधी साहबो आई और निरंजन को उसने कंधों से पकड़ कर धीरे झकझोर कर जगाने लगी। निरंजन ने ऊँ-ऊँ करके करवट बदली। साहबो ने दूस ओर होकर उसे फिर उसी प्रकार जगाना चाहा लेकिन निरंजन ने फिर करवट बद ली। साहबो ने एक दो बार फिर झकझोरा किन्तु निरंजन नहीं जगा। क्या करत साहबो निराश होकर अपनी चारपाई पर आ गिरी।

कुछ दिन उपरान्त एक दिन प्रातः सारे गाँव में समाचार फैल गया कि साह किसी के साथ भाग गई है। दूसरे दिन पता लगा कि वह चक के शहाबुद्दीन के सा जो वहाब के यहाँ प्रायः आता जाता था चली गई है उसकी साँडनी की पीठ प पीछे बैठकर। तीसरे दिन वहाब और उसके भाई-बंधुओं के परामर्श से साहबो त शहाबुद्दीन का ब्याह चक में ही हो गया।

बेचारा निरंजन! जाने उसे क्या हो गया कि जो भी मिलता है उस से रोक कहता है—मैंने समझा मामा खेत पर चलने के लिए जगा रहा है। और खिसियाना सा आगे बढ़ जाता है।

कञ्चन माटी

देवेन्द्र सत्यार्थी, १९०८

भारत की लगभग ४० भाषाओं विभाषाओं के तीन लाख से अधिक लोक-गीतों का संग्रह करने वाले देवेन्द्र सत्यार्थी हमारे देश के शीर्षस्थ साहित्यकारों में से हैं। उनकी पंजाबी, हिंदी, उर्दू तथा अंग्रेजी में लगभग ४० पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

सत्यार्थी की वातावरण प्रधान कहानियों में भारत के विभिन्न प्रान्तों में निरन्तर भ्रमण से प्राप्त अनुभव की व्याप्ति है और उनमें बहुविध पात्रों का चित्रण है। स्थानीय जीवन का रंग और लोक-गीतों में झांकती हुई जिन्दगी की झलक उनकी कहानियों में द्रष्टव्य है।

इसी प्रकार की एक कहानी इस संग्रह में संग्रहीत है।

प्रकाशित कहानी संग्रह—'कुंगपोश', 'सोना गाची', 'देवता डिग पिआ'।

कंचन मर जानी माटी खानी!—अरी ओ खबरदार जो तूने कभी माटी डाली मुंह में!—इधर देवयानी की मां की यह फटकार, और उधर कंचन नदी के नाव घाट की ओर से आती हुई बत्तखों की आवाज कें कें, कें कें! इधर डूबते सूरज की पीली धूप में बच्चे गा रहे हैं—

भूरी बत्तख! सफेद बत्तख!
मेरी बत्तख कहां गई?
बुढ़िया के घर
उठ बुढ़िया दरवाजा खोल

कच कच

मेरी कहानी आवाज़ा क इस पुल स गुजर सकती है। पर मैं न तो माहिया की कहानी सुना रहा हूँ न मक्खन माँझी की न प्रभात फेरी वाल वरागी बाबा की, न डाक बाबू सुनार हुसन की बीबी चमनजानो की। मैं तो दवयानी की नन्ही कचन क साथ जी बहला रहा हूँ जो मर पास ही तुतली जबान म गा रही है —

हला समन्दल दोमी चन्न
बोल मनी मछली तितना पानी।

क्या किसी ने मछली को भी तुतली जबान म गात सुना? कचन भी तो मछली है। झील की मछली या नदी की? शायद मन की मछली को सुनाया जा रहा है। और किसी न यह भी तो कहा है कि मछलियाँ बहुत दूर तक साथ देती है और कभी कभार बीच म ही छोड जाती है।

बाढ का पानी तो कभी का उतर चुका है और बस अब तो सूने आँसू बह रह है।

एक हाथ म माटी दूसरे म कहानी। और कहानी के बीज सदा माटी स फूटते ह। और कचन मेरी गोद स उतर कर भाग गई और घर के चमकी वाल दरवाजे स उसकी आवाज सुनाई दन लगी

महला वाल हतमताल
मती माँ ते लम्व वाल

कचन को गात देखकर मुझे एसा महसूस हुआ कि यह तो देवयानी ही ठोडी पर हाथ रखे अपने बचपन म लौटकर गा रही है।

कचन का कसे समझाऊ अरी तेरी माँ के बाल तो सचमुच लम्बे थे पर वह काली सीढियो वाली उस सफेद इमारत म तुझे जन्म दकर स्वय वहा से लौटकर न आ सकी।

दर असल यह उस गीली लकडी की कहानी है जो जलती तो है पर धुआ छोडती सी। कडवा धुआ।

मरी लडकी देवयानी। काश तुमन कचन नदी की इस गीली रत पर अपनी इस नन्ही मुन्नी कचन क पैरो के निशान देखे होत।

तिल्लिया बेनाल्ली त्या तल
थन्दा पानी पी मले

चर चर चर चर!—जस चिडिया इस बात स इनकार कर रही है कि वह ठडा पानी पीकर ही मरती आइ ह।

यह भरा पूरा घर बस एक देवयानी के न होने स कितना उजाड नजर आता है! और सामन की दीवार पर दवयानी की जो तसवीर लगी है शायद यह कलाकार का ही चमत्कार है कि जब मैं गम्भीर होकर उसे देखता हू तो वह मुस्कराने लगती है और जब म मुस्करा कर देखता हूँ तो वह पता नही क्या गम्भीर हो जाती है।

कचन की मोतियो की माला की सी मुस्कान मुझे दवयानी की उस नटखट हसी

की याद दिला देता है जब एक दिन रमन ब्रह्मचारी बचपन में उसे साँझ पड़े गाय वाला के नीचे कुचल जाने से बचा लाये थे। और अब मन में यह विचार आता है कि अगर रमन ब्रह्मचारी जीवन के किसी मोड़ पर मिल जाएँ तो मैं उन्हें सीने से लगा कर कहूँ कि जिस एक दिन आप जान पर खेल कर बचा लाए थे, उसे हम न बचा सके। पता नहीं वे रमन ब्रह्मचारी भी कहाँ होंगे।

मैं अपना सिर हाथों में थामे देवयानी की तसवीर देख रहा हूँ। और मुझे यह बात याद आए बिना नहीं रहती कि वह बचपन में कई बार मेरे साथ कुट्टी कर देती थी, जैसे अब कभी कभार कंचन कर देती है। वह तो जम कर लड़ाई कर बठती थी, जिसमें आँधी भी आती और तूफान भी। और देवयानी की माँ पक्ष बनकर हमारा मन करा देती जैसे अब वह कंचन के मामले में पंच बन जाती है।

मुझे तो देवयानी की याद भुलाए नहीं भूलती। जैसे वह मेरी पूरी दुनिया हो। चमनबाना मेरे मुँह से देवयानी की कहानी सुनत-सुनते कहती है यह कहानी तो कुम्हार के चक्र पर तैयार होने वाली सुराही की तरह है।

चमनबाना की अपनी कहानी भी तो किसी सुराही की तरह गीली माटी से ही तैयार हुई है। उसकी आप-बीती पर मैं जितना विचार करता हूँ उतना ही गम की भीत में उतर जाता हूँ कि वह अब तक माँ नहीं बन सकी।

एक बार चमनबाना को कब्र में उतारा जा रहा था जब मौत के फरिश्ते को अपनी भूल का पता चल गया। वह चमनबाना जिसे कब्र में जाना था वह तो कई बच्चों वाली चमनबानो थी कंचन नदी के उस पार। और जब गली की स्त्रियाँ कहा करती हैं कि यह हमारी चमनबानो जो कब्र से जिन्दा होकर चली आई तब तक कब्र में नहीं जा सकती जब तक इसकी गोद न भर जाए।

न जाने अँधेरे में कौन-सी किरण किस रंग में जली की कहानी लिख रही है। आज भी देवयानी का आटोग्राफ-बुक का वह पन्ना खुला पड़ा है जिस पर मैंने ही लिखना तो चाहा था कुछ और पर काँपते हाथों और डूबते मन से लिखा गया—नारी तो उस नदी के समान है जो माटी खाती तो है कहीं और, बिखरती है कहीं और। और यह माटी कहीं चमन को लहलहा दे, कहीं उसे खा जाए यह तो जलधारा के बसने निशान ही बता सकते हैं। बेचारी धरती माँ का भाग्य ही कुछ ऐसा है कि आँसुओं की नदी का यह भाग इस के भगीरथ के बेटे और पोता से तो क्या इस नदी के किनारे पर बसी हुई अनगिनत जातियों से भी अभी तक मिटाया नहीं जा सका।

इसमल देवयानी की आटोग्राफ बुक पर कुछ लिखने को जब मैंने कलम उठाई तो सोचा क्या न आज उपनिषद् की वही सुनहरी सूक्ति लिखकर देवयानी को सावधान कर दूँ—री इस जिन्दगी को सदा अमृत और स्मृति को विष समझना पर इसके विपरीत जो लिख गया उसकी स्याही भी अभी नहीं सूखने पाई थी कि

मुझे याद है। मैं चौंक पड़ा जब मैंने देखा कि देवयानी ने मेरा लिखा नारी तो काट दिया है और उसके ऊपर 'जिन्दगी' लिख दिया है। और साथ ही उसने कुछ ऐसी भंगिमा से मेरी ओर देखा, मानो वह कह रही हो—ना, अब देखो।

दरअसल मैं चौंका नहीं था। बल्कि देवयानी ने मेरी कलम काटकर अपनी ही जो कलम चला दी थी मैं तो उसी पर फूल उठा था।

शायद देवयानी ने मुझे यह पहला मौका दिया था कि जरा संभल कर मैं भी सोचूं, आखिर उसने मुझे कहाँ संभाला कहाँ सँवारा और वह कौन सी बात रही है कि मैं उसके या वह मेरे सदा से ही क्या दाएं क्या बाएं क्या आगे क्या पीछे बस सदा साथ ही लगी रही है? कुछ संभालती सी भी रही है कुछ संवारती सी भी और जब मैं कुछ लिखते लिखते थक सा जाता तो वह चाहे निकट खड़ी हो या कहीं दूर से ही बोल उठी हो—क्यों बस थक गए? आखिर जिन्दगी तो नदी की तरह है न। भला कभी आपने यह भी सोचा कि यदि नदी रुक जाए तो क्या होगा?

आज देवयानी के उस सवाल को याद करते हुए सोचता हूँ यदि सचमुच नदी रुक जाए तो इस तरह भी और उस तरह भी, किसी तरह भी ठीक नहीं है। उधर बाढ़ है तो इधर रेत ही रेत।

नदी रुकी हो पर उसके जल प्रवाह को भी कोई रोक सका है? वह उधर बह चाहे इधर।

पतझड़ भी कितने क्यों न आए हो, बसन्त भी तो उतने ही आकर रहे।

संकोच और भय के इस भंवर जाल के बावजूद ये प्यार की कहानियाँ तो आगे ही ही आगे चलती रही हैं।

फूलों की घाटी में दुःख की चट्टानें गिरती रहीं। पर फूल तो चट्टानों पर भी खिलते हैं।

पहलौठी की कंचन बिटिया को जन्म देकर देवयानी अगनाई की माटी से सदा के लिए विदा हो गई। मानो कंचन नदी का कोई टापू डूब गया हो या कंचनजंघा की उषा फिर से रास्ता भूलकर अंधकार में खो गई हो।

देवयानी की माँ गम में डूबी रहती है और उसके चेहरे की लिखावट यह कहती प्रतीत होती है—हाय उस माटी खानी को तो माटी ही खा गई।

मुहजोर नदी बही चली जाती है और मेरी आँखों में वह डूबन दिन की सी झाँकी घूम जाती है। मानो नाव घाट वाली श्मशान भूमि की ओर किसी की अर्थी जा रही हो और देवयानी किताब फेंक कर खिड़की में जा पहुंची हो और अर्थी को देखने में लीन हो गई हो। जग किसी को मारकर अर्थी में ढककर जाना और डोली में नई नवेली दुलहन का सलोना विदा उसकी नजर में एक बराबर हो।

मुझे याद है। उस रोज़ वाली मासियों वाली उस सफेद दमकन में देवयानी की आँखों में श्रद्धा की आभा थी और उसका सिर उसकी हथेलियों पर टिका था जब उसने घुमघुमाते स्वर में कहा—जब मुझे दौरा पड़ा तो उस समय किसी और ने नहीं इन्हीं मासियों ने मेरी देखभाल की थी जो रात भर जागती रहीं। और मैं पास बैठा सोचता रहा—देवयानी को चाय देते समय मासियों के हाथ क्यों काँप उठे थे। उसने घबरा कर उनको प्यार क्या दिया? और मेरे मना करने के बावजूद उसने उनका तकिया क्या नीचा कर लिया था?

श्रौर आज इतने दिना बाद मैं सद आह भरकर कहता हूँ—सोफिया, तुम यह क्यो नही बताती कि देवयानी का अंतिम बोल क्या था। कहानी की अगनाई म खडी होकर कुछ तो कहो, सोफिया। जूही की सुगध तो तुम्हें भी उतनी ही अच्छी लगती है जितनी दवयानी को लगती थी।

चर-चर चर चर! मानो चिडिया मेरे ही मन की बात पूछ रही हो—सोफिया, तुम खामोश क्यो हो?

चदन चौकी की गुडिया कचन के महेलपन की बाट जोहती रहती है। पर वह तो मन चहती गुडिया को उठाकर ही खिलौने से बनाए मदिर म बिठा देती है श्रौर जब खेल-खेल म वह मदिर भी गिर पडता है तो वह चकित-सी खडी रहती है। श्रौर मैं कलम कागज मज पर रख कर मन ही मन कहता हूँ—यह तो देवयानी ही गुडिया बनकर गोद मे खेलने को आ गई है। वही उभरी हुई, कुछ पूछती-सी बडी-बडी आखें। वही सुतवां नाक। वही मुस्कान—दिय की लौ की तरह काँपती सी। वही आँखो की भाषा, दुबकती सी चमकती सी। श्रौर वही लम्ब बाल। हाँ, एक फक जरूर है। उसे तो नीली साडी पसद थी, श्रौर उसकी इस कचन बिटिया के मन म फिराजी फाक बस गई है।

आज न जान कब से बठा सोच रहा हूँ कि कचन आए तो मैं उसे बतख की कहानी सुनाऊँ जो कचन नदी मे बार-बार चोच डुबाती रही, श्रौर आखिर अपना सपना गँवा बठी।

वह कहानी चमनबानो ने सुनी तो उसने हँसकर कहा—जब दुनिया से मेरी डोली उठेगी तो मैं यह कहानी हूरा को सुनाऊँगी जो जन्नत क दरवाज पर मरी राह देख रही होगी। श्रौर मैं उसकी बात पर मुस्करा भी न सका। श्रौर मैं लिखन के लिए कागज पर झुकते हुए यह सोच कर उदास हा गया कि गला के बच्च —चमनो ताई कब से आई—कहकर चमनबाना को क्या छेडत हैं! कचन तुतलाती जबान म कहती है—'चमनो ताई तबल छे आई!

चमनबानो खुश हाकर कहती—रग हसते भले, घर बसते भल। पर उसका सारा सुघडापा धरा का धरा रह जाता है, जब वह कचन के साथ बात करत करत सिसकियों म खा जाती है। श्रौर उस समय मुझे बरागी बाबा का ध्यान आए बिना नहा रहता जो किसी की कलाई पकड कर न तो रान के पक्ष म कुछ कहते ह न राने के विरुद्ध श्रौर सदा भटकती गाय को घेर कर घर लान क अदाज म मान ध्यान पर तान तोडते हैं।

जब बरागी बाबा हमारी खिडकी के सामने स दिल का गुबार निकालत स गुजर जाते हैं तो यू लगता है कि कबीर आज भी है

माटी कहे कुम्हार से तू क्या रौंदे मोहि।
इक दिन ऐसा आएगा मैं रौंदूगी तोहि।

मैं मन के कबीर से कहता हूँ—क्यो कबिरा क्या तुमने, बस अब तक इतना ही गुना है? माटी भी क्या किसी को रौंदती है? उस तो कचन नदी कहाँ से चाटकर,

दूर बहुत दूर जा बिखेरती है। मैंने चित्र बनाना भी सीख लिया है बाबा ! हू-ब हू वह देवयानी की डोली में बठकर वह राई तो नहीं थी पर पता नहीं उसने कसी परछाइ देखी कि वह कुछ सहम गई लाजवती के समान। अभी तो और न जाने कितने चित्र बनाऊंगा। एक में वह मुस्करा रही है तो दूसरे में वह कुछ विचार रही है। एक में उभर आई है तो दूसरे में कुछ डूब गई है।

कई बार मैं एक अनजाने से भय से काप उठता हू—खिडकी ब द कर दो देवयानी की मा। इसकी खट खट तो मेरा ध्यान भग कर रही है। और कभी रात को सोने पहरेदार की जागते रहो की सहमी सी आवाज से चौंककर मैं कहता हू—देवयानी की मा ! सवेरा होने से पहले शायद रात का पहरेदार अंधेरे में डूब जाएगा।

—यह किसकी परछाइ है देवयानी की मा ?

—कचन को अपनी छाती से लगा लो और उसे अपनी बाहों में भीच लो।

कहानी सुनते-सुनते कचन सो जाती है और जब जाग उठती है तो घर का कोना कोना टटोलती फिरती है। जैसे इस उधार से प्यार के बीच उसकी कोई असली चीज तो मिल ही न रही हो।

चौराहे में पहुच कर अचानक कोई आवाज सुनती सी कचन सोचती रह जाती है—मैं चमेली वाले दरवाज से चौराहे की ओर आई थी या चौराहे से घर की ओर।

पास से गुजरती बत्तखों की दर्दीली सी पुकार यह कहती प्रतीत होती है—बत्तख बनोगी हमारे साथ ? तो चलो हम तुम्हें अच्छी अच्छी कहानियां सुनाएगी। और धूल उड़ाती बत्तखें आगे ही आगे निकल जाती हैं।

दरवाजे से कचन की आवाज सुनाई देती है —

दिल्ली है दो ताल तोड़
वहा पड़ी दल्लम दी सान।

मानो मेरा अपना बचपन मेरा द्वार खटखटा रहा हो—दिल्ली है दो काले कोस वहा पडी दल्लम की चोट। क्या अब काल का वास्ता देकर सोफिया से कहू कि सोफिया अब तो यह बात छोडो ? दिल्ली है दो काले कोस दिल्ली है दो ताल तोड़

सोफिया तुम तो जूही की सुगध का वास्ता देने पर भी यह नहीं बताती कि उस रोज देवयानी कौन-सी आखिरी बात कहते कहते रुक गई थी।

कहीं वह यह तो नहीं कहना चाहती थी कि हम हर क्षण अपने को धोखा देते रहते हैं और हमारा कथित उस नवल की सी है जिसकी आधी देह एक निर्धन ब्राह्मण के घर में अतिथि-सत्कार के पुण्य प्रताप से कचन की तरह चमकीली हो गई थी और जो शेष देह को कचन बनाने की लालसा में जीवनपर्यन्त भटकता रहा।

मैंने कई बार चाहा कि कचन को नवल की कथा का अन्तिम भाग भी सुनाऊ कि किस प्रकार पूरे जतन के बावजूद पाण्डवों के महायज्ञ के पुण्य प्रताप से भी उसकी शेष देह कचन न बन सकी।

उन काली सीढ़ियों में उतरती-सी आवाज यह कहती महसूस होती है—आसुओं की नदी तो बस्ते पाव में चली आ रही है और हम तो अपनी नाव लेकर उस किना

न किसी घाट पर ही आ मिलते हैं, और मझधार म खो जाते है। क्या म तो कथा की आत्मा होती है। क्या आपने कभी अपनी कथा की आत्मा को भी देखा है?

और मैं अगनाई की ओर मुह किए पुकार कर कहता हूँ—अरे, सुनती हो दवयानी की माँ! यह तुम्हारी कचन तो माटी पर लेट कर माटी चाट रही है। अर नहीं, नहीं वह तो माटी पर लेट कर माटी का प्रणाम कर रही है।

क्या कहा तुमने? कभी मैंन भी अपनी आत्मा का देखा है।

मरी कथा की आत्मा तो मेरे सामने गुल आबाद की तरह मुस्करा रही है। कथा क घन जगल म कहा कहाँ पडाव डाला, जब आज की कचन की तरह न्ही मुन्नी दवयानी हमारे साथ थी। कितने कठ म समा गए। कितने फासल गद बन कर उड गए। जगल पहाड, मदान, नदियाँ, समुद्र। आज अमरनाथ तो कल कयाकुमारी। आज द्वारिका जी तो कल जगन्नाथपुरी। गगासरी जमनासरी अमरकटक। भाति भाति क प्रवासी। गीत-नृत्य, मेले त्योहार। कहीं चीटियो की तरह रेंगती बैलगाडियाँ, तो कहा झूमत झामते ग्रोडील हाथी। होठा पर बफ की तरह पिघलते गीत। इस यात्रा म दुख और भूख की कहानी भी साँस लेती रही—भुखिया के मारे बिरहा बिसरिगा भूलि गई कजरी कबीर! और कभी गुरुदव की अमर वाणी सुनने को मिली—कता अजाना रे जानाइले तुमि कतो घर दिले ठाई! (कितने अपरिचिता स तुमन मरा परिचय कराया कितने घरा म ठौर दिलाई!) और दवयानी के साथ रहन म एसा लगता था कि मैं ता यात्रा म भी घर का सा आनन्द ल रहा हूँ।

मछली को तो नदी ही तरना सिखाती है वह उल्टी धार तरे चाहे सीधी धार। पर इस घर से जो सुगध कुछ बरस पहले उड गई लौटती नहीं दीखती।

उन वानी सीढ़ियो मे उतरती सी आवाज यह कहती महसूस होती—कभी आपन यह भी सोचा कि यात्रा के पुण्य प्रताप स आपकी आधी कथा कचन हो गई, उस केवल का नेह के समान और जब यात्रा का आचल हाथ से छूट गया तो आप कथा के गाव घाट प हाकर रह गए, माना आपका विचार हो कि यहा की कथा-गोष्ठियो के पुण्य प्रताप म शेष कथा भी कचन हो जाएगी।

मैं मन ही मन झेंप कर कहता हूँ—मैंने कब चाहा था कि मेरी आधी कथा भी कचन हो जाए।

कलम खामोश है और सन्ध्या की घनी म अधेरा ही अँधेरा है। बत्तख तो तैरती हुई ही अच्छी लगती है जसे कलम लिखती हुई। और मैं लिखता ही रहता हूँ—आग की कहानी पीछे की कहानी।

सोफिया! तुम मुझे वह बात बता क्या नहा देता?

मुझे यह बात बताने का तो तुम्ह उतना ही पुण्य मिलेगा जितना देवयानी का कयादान करने मे मिला था या स्वय देवयानी को पहली बार सागर देवता को नारियल भेंट करन म।

तुम यह क्या गुनगुना रही हो सोफिया? तुम्हारे गीत की कसम! अब तो मुझे वह बात बता ही डालो।

यह किस के आँसुओं का गीत है? भूरी और सफेद बत्तखें एक साथ क क कर उठती हैं। क्या तुम उसी समय वह बात बताओगी, जब ये सारी बत्तखें खामोश हो जाएँगी।

कचन की आवाज को तो गम छू तक नहीं सका। चमनवाली उस रात के मछुओं की कहानी सुना रही है जो भोर होते ही घर लौट आते हैं।

कहानी न होती तो गीत अधा और बहरा ही नहीं गूगा भी रह जाता। काला फूल। सफेद फूल। तुम कौन सा फूल लेकर बात बताओगी सोफिया?

पहचान के लिए दूरी बहुत जरूरी है। कहा वह मर जाती माटी माना अपना पहचान कराने के लिए ही तो हम से दूर नहीं चली गई।

यह विचार चट्टान के सीने मे फटते बारूद की तरह मेरे दिल मे तूफान उठाता रहता है। और मन-ही मन कहता हूँ—क्या मेरी वह यात्रा टल न सकती थी?

अगनाई से देवयानी की माँ की आवाज सुनाई देती है—रोज दूर पार ऐसी लडकी जन्मे जैसी यह कचन है। तीन बार गिरी आज और चार नील पड गए कोई इससे पूछे—क्यो री बता मेरी क्या करेगी इन बत्तखो का?

—कचन की तो बात मे हीरे जडे है देवयानी की माँ! और तुम्हे यही शिकायत है कि यह एक जगह टिक कर क्यो नही बैठती। मैं कहता हूँ कचन इतनी सयानी है कि अकेली घर से दूर नही जाती। और नाव मे बैठने का तो इसे उतना ही शौक है

—जितना उस मेरी को था।—मानो बेदिली से ही देवयानी की माँ भराए हुए कठ से मेरा वाक्य पूरा कर देती हो।

मैं परेशान होकर नाव घाट पर जा बैठता हू तो मण्डल काका नाव बाधते हुए ज्ञान बघारते हैं—नाव खेते-खेते हाथ रह गए। मछलिया पकडते पकडते जाल टूट गए। लहरो का सीना दलते दलते नाव का पदा घिस गया और किनारा अब भी दूर है। नाव और काल मे यही तो अतर है। नाव चलती है तो लहरो पर आवाज होती है और काल चलता है तो एकदम दबे पाव।

—हा काका—मै श्मशान भूमि से लौटती स्त्रियो का विलाप सुनकर कहता हूँ —काल चलता है तो दबे पाव।

मेरे सिर के ऊपर से कोई पक्षी चीखता हुआ गुजर जाता है। मैं किसी को कैसे बताऊ कि मेरी कैफियत उस घायल पक्षी से किसी तरह कम नहीं जो सूनी दोपहर मे गिरता पडता उडने का जतन किए जा रहा हो।

मण्डल काका मानो कचन की आत्मा मे झाकते हुए कहते हैं—कचन ससुराल जाएगी तो बहुत सा दान दहेज पाएगी। इसकी बाहो के तिल यही तो कह रहे हैं।

मैं काका की बात अनसुनी करते हुए लाल माटी के ढलवा रास्ते पर फाख्ता को उडते देखकर कहता हू—जब देवयानी के कच्चे पक्के दिन थे तो उसकी माँ उसे समझाया करती थी कि पत्थर का निशाना बनाकर फाख्ता को घायल नहीं करना चाहिए। अब मैं किस से पूछू कि कहीं देवयानी ने किसी फाख्ता को तो नहीं मार डाला था?

हर कहानी को पतझड के जगल से गुजरना होता है सोफिया चुपके चुपके हो

सही पर उस दिन की बात जरूर बता डालो।

चर चर चर चर—मानो चिडिया मेरे कान म वह बात कहन को उत्सुक हो जो तुमने अब तक छिपा रखी है सोफिया।

कागज कलम मज पर रखकर मैं खिडकी मे बठे-बैठे चिडिया को वट ध्यान से देखने लगता हूँ।

कचन को अब चिडिया का बहुत ध्यान रहता है। कटोरी मे ठण्डा पानी भरकर चदन चौकी रख देती है और चिडिया चुपके से आकर पानी पीने लगती है और कचन टकटकी लगाए खडी रहती है। और मैं मन ही मन कहता हूँ—बात बन रही है।

चिडिया उडकर कचन के कधे पर आ बठती है, तो कचन उसे पकडने लगती है। और चिडिया उडकर मेरे कधे पर आ बठती है तो कचन मेरी ओर लपकती है। चिडिया फुर स उड जाती है और घोसले म जा बैठती है। और यह खेल इसी प्रकार देर तक चलता रहता है।

कभी-कभी तो एसा भी होता है कि कचन सोते सोते बडबडाती सी पूछती है—ठण्डा पानी पियोगी तिलिया?

यह कोई साधारण बात नही है सोफिया। चिडिया को कचन स उतना ही प्रम हो गया है, जितना कचन को चिडिया म। इसीलिए तो कचन हथेली पर ठाडी टेके वह प्यार से चिडिया की ओर देखती रही तो चिडिया उसके सिर पर आ बठती है। और कचन उसे पकडने का जतन न करते हुए चुप चाप बैठी रहती है। और देवयानी की माँ कहानी की अमनाई से झाँकती सी कुछ कहना चाहती है ता नन्ही मुनी कचन की मुस्कान लोक कथा की राजकुमारी की तरह बोलती सुपारी और हँसती लवग बन जाता है।

अब के कचन न पहली बार पाचवी दीवाली का पहला दिया जलाया ता मन-ही-मन मैंने कहा—दिय से दिया जलाने की तरह एक कहानी के दिय स दूसरी मुडर का दिया भी तो जलाया जा सकता है।

दीवाली से अगले दिन तुम हम मिलन आइ, तो मैंने कहा—सोफिया उस दिन भला उजाला भीतर आ रहा था या अधेरा बाहर की ओर जा रहा था।

—अच्छा तो सुनिय—तू न अनुकम्पा भरे स्वर म माना मेरे हठ से लग आकर कहना शुरू किया—देवयानी न यही कहा था कि कचन को यह पता न चलन देना कि वह बिना माँ की बिटिया है।

शायद वह कुछ और भी कह रही थी सोफिया! पर तुम अपने दुपट्टे स डब-डबाई आँखें पोछती हुई रोती कचन को चुप कराने की खातिर अपनी गोद म लेकर दूसरे कमरे म चली गई थी।

शायद देवयानी यही कहना चाहती थी कि वह केवल तीन वर्ष का अवकाश और चाहती है। और मानो यमराज के फसल मे उसने रजामन्दी जाहिर कर दी और कह रही हो—यह तो इस जग की रीत है। मेरे न होने के बावजूद कचन यहीं इसी

तरह बहती रहेगी और ये रेशम के कीड़े भी इसी तरह सुनहरे रुपहले जाल बुनते रहेंगे। नदी लेती है नदी देती है और कचन भी तो नदी है।

साफिया मुझे वह दिन याद है जब देवयानी की माँ तुम से कह रही थी—मैं क्या उस मरी की बातों में आ गई। न तो मैंने सात सुहागिनों से उड़द की दाल दलवाई जिससे पितरों के लिए बड़े पकाए जाते न मुझ कमजली को यह ध्यान रहा कि कचन नदी की माटी मँगवा लें जिसके बिना कुलदेवता की पूजा का फल नहीं मिलता। न कुएँ की पूजा की गई न नाव घाट की। इतना अशुभ एक ओर और वह मामूली सा शुभ दूसरी तरफ कि भाँवरें जरूर अग्नि देवता की साखी में ली गई। हाँ तो इतना अशुभ उस मामूली से शुभ को काट गया।

और उस रोज तुम्हारे जाने के बाद देवयानी की माँ को उदास छोड़कर मैं कचन का उखड़ा पाड़ नाव घाट पर जा पहुँचा।

वहाँ बैरागी बाबा मिल गए जो जल धारा की सीध में बगलों की डार को उड़ते देखकर बोले—ये तो भगवान के जीव हैं। जिस भगवान ने मछलियाँ खाने वाले ये बगुले भगत बनाए। यह और बात है कि अब तक न तो किसी मछली ने और न ही किसी बगुला भगत ने वैराग्य लेने का जतन किया रमन ब्रह्मचारी की तरह।

और अपना नाम बताकर बैरागी बाबा ने एक झटके से भूत और वर्तमान की खोई हुई कड़ियाँ किसी बाजीगर की तरह जोड़ दीं।

मैंने भर्राई हुई आवाज में कहा—क्षमा कीजिए बैरागी बाबा! आपका वरदान मेरे निर्धन हाथों में न समा सका। पर आपने अपने उस रूप की पहिचान इतनी देर में क्या कराई?

और मंडल बाबा अपने बेटे की बात ले बैठे—कल रात मैंने फिर दीपक की आत्मा को मसान लिए भटकते देखा। कचन नदी की उस मझधार में उसी जगह ठीक उसी जगह जहाँ आज से बीस-बाईस बरस पहले उसकी दुलहन डूब गई थी और फिर गम का ताव न लाते हुए छाती पर पत्थर बाँध कर वह नाव से कूद गया था।

कचन हमारे पास बैठी रेत पर अटपटी सी आकृतियाँ बना रही थी।

और कहानी की अँगनाई में चमनलाला का चेहरा उभरा। उसने कचन का प्यार करते हुए रोना शुरू कर दिया। और देवयानी की माँ के चकित होने पर स्वयं ही कहने लगा—हमारे डाक बाबू लोगों के घरों में खुशखबरी की चिट्ठियाँ बाँटते-बाँटते बूढ़े हो गए पर हमारे घर ऐसी किसी चिट्ठी का कोई डाक बाबू अब तक नहीं आया।

और जब कचन पूछती है—ताई क्या लाई? मैं क्या जवाब दूँ साफिया?

यह तो चमनलाला भी मानता है कि आँसुओं की नदी न हो तो इस गम की चट्टान को सिर पर उठाए कभी न भूल सकें। वह अक्सर देवयानी की माँ की ममता का रोना रोता—सुन रही हो देवयानी की माँ! देवयानी के ब्याह के मौके पर उसकी दादी की आत्मा जरूर कान पर गया होगा जिसको तुम लोगों ने ध्यान न दिया और वह बेचारा... और देवयानी की माँ ऐसा महसूस करने लगती है

माना वह वान स्वय उसी के हाथा पडा हो।

चमनबाना का हर समय कचन के साथ चिपके रहना तो मेरी समझ म नही आता। वह ता कचन को कई बाल सिखाती रहती है। और कचन तुतली जबान स कहती है—तमनो तार्ई तवल छे ग्राई, अल्ला मिया ती तित्थी लाइ।

मैं सोचता रह जाता हू कि चमनवानो अल्लाह मिया की कौन सी चिट्ठी लाई होगी।

देवयानी की माँ के पास बठी चमनवानो मौ मौ बनियाँ बनाती चली जाती ह और घूम फिर कर इस बात पर तान तोडती है—अगर कचन एक बार भी भूल स तमना ताई तबन छे ग्राई की जगह तमना ताई तवन को भाइ कह डाल, ता हमारे घर भी वह चिट्ठी जरूर आ जाय।

सवेरे-सवेर डाक बाबू मुनीर हुसन हमारे घर के सामन स गुजरत ह ता कचन का आवाज दिए बिना नही रहत। खिडकी क पास मुह लाकर वह वडा प्यारी आवाज म कहते हैं—हमारे घर यह चिट्ठी कब आएगी ? क्या, कुछ ता बाल, कुछ तो बोल।

चर चर चर चर ! माना चिडिया पूछ रही हो—कौन सी चिट्ठी ? कि कचन नदी को कही मानी खानी कहत है तुम्हारी तरह और कही इसे सदासुहागिन कहते हैं।

कचन मेरा हाथ छुटा कर भाग गई। और दरवाजे म उसका आवाज सुनाई देने लगी —

हाथी घोडा पालकी
जय तनैयालाल की
हाथी फिले दाम दाम
जिछना नाची उछता नाम
बदना बनाती आएँगे।
दुल्न मछान लाएँगे।

मैंने उसके पास जाकर कहा—कचन ससुराल जानी, मिठाई खानी, एस नही, एस बोलत हैं—बगुला बराता आएँगे जुगनू मशान लाएँगे।

बाहर स राज की तरह आवाज आई—हमार घर वह चिट्ठी कब आएगी ? क्या कुछ तो बाल, कुछ ता बोल।

डाक बाबू की आवाज भूरी और सफेद बत्तखो की आवाजा म डूब गई और वह डाकघर का ओर चल गए।

कचन ने हर रोज की तरह अपना सवाल दोहराया—दान बाबू त्या बाना ?

कहाना की अगनाई म तुम आज फूट फूट कर क्या रो रहा हो सोफिया ? मुझे मालूम है तुम्हारे आँसू अपनी ही आप-बीती के आँसू नहीं हैं।

आज सवेरे-सवेरे कचन न आकर कहा—मेला तितिलिया त्या नही दाराती

मन घोसल म चिडिया का उडान के लिए बाँहें फलाकर कहा—हुश !

चिडिया घोसल म न उडी तो मने घूमकर देखा, चिडिया ता फर्श पर पडी थी।

उभरा। ग्रौर फिर डाक बाबू ने कहा—वह चिट्ठी ग्रा गई जिसका मुझे इतजार था।

मैंने कहा—देवयानी की माँ, डाक बाबू के नाम चिट्ठी ग्रा गई। चर चर, चर चर! लो फिर ग्रा गइ चिडिया। जून बदली तो बोली भी बदली। बोली बदली पर कहानी नहीं बदली। कहानी तो खुद कचन माटी है। देवयानी कहा करती थी कि कहानी की भी ग्राँखें होती हैं। कभी कहानी हम देखती है, कभी हम कहानी को। ग्रौर देवयानी तो यह भी कहा करती थी देवयानी की माँ, कि कहानी के कान भी होते हैं जिसमे वह दूसरा की ही नही खुद ग्रपनी ग्रावाज भी सुनती रहती है। ग्राग हवा पानी क्या कहानी। कचन माटी खानी। नदी लेती है नदी देती है। नदी तो सदा बहती रहती है।

सतहो से परे

डा० गोपालसिंह, १९१७

भारत के राष्ट्रपति द्वारा राज्यसभा के लिए मनोनीत डा० गोपालसिंह पजाबी के शीर्षस्थ साहित्यकारो म है। उनकी लिखी रोमाचक पजाबी कवि, साहित्त दी परख पजाबी साहित्त दा इतिहास आदि आलोच्य पुस्तक पजाबी म बहुत महत्त्वपूर्ण उपलब्धियाँ मानी गयी है।

डा० गोपालसिंह का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण काय है गुरु ग्रन्थ साहिब का अग्रजी म पद्यबद्ध अनुवाद। इस महत्त्वपूर्ण काय के सम्पादन के कारण उन्ह अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त हुई है।

आलोचक और अनुवादक होने के साथ ही डा० गोपाल सिंह एक उच्चकोटि के कथाकार है यद्यपि उन्हान अपनी इस प्रतिभा का समुचित लाभ पजाबी का नही पहुचाया है। माया ते ब्रह्म उनकी अनूठी कहानियो का सग्रह है।

जब कभी मैं इस काफी हाऊस के समीप म गुजरता तो इसका झिलमिल करता रगीन वातावरण मुझे अपना ओर आकर्षित करता परन्तु मैं कभी अन्दर नही गया। वस्तुत आय अभी चार महीन ही हुए थ परन्तु यह समय यू गुजर गया था कि कुछ पता ही न चला था।

पहले तो मेरा हृदय किसी आन्तरिक प्रसन्नता और सम्पन्नता म परिपूर्ण था। परन्तु अब धीरे धीरे कुछ वचना का अनुभव होने लगा था। एकाकीपन खलने लगा था जीवन कुछ नीरस सा लगने लगा था। वस्तुत दिन भर शहर म भी मनुष्य कभी नितान्त एकाकी हो सकता है।

जनवरी का महीना था, सर्दी बहुत थी और बाहर थोड़ी थोड़ी वर्षा भी हो रही थी परन्तु मैंने मन में निश्चय कर लिया था कि आज शाम की चाय होटल में नहीं पिऊंगा और काफी हाउस अवश्य जाऊंगा। कुछ कदमों का फासला ही तो था। अभी वहां बैठे अधिक समय नहीं हुआ था कि मेरे सामने की सीट पर एक बहुत सुन्दर युवती आकर बैठ गई। देखते ही जैसे मेरे रग रग में बिजली कौंध गई हो। उसकी भूरी वाली आंखों तथा घुंघराले बालों से मैंने अनुमान लगाया कि वह अंग्रेज नहीं है। इस काफी हाउस में यूरुप के परदेसी लोग ही अधिक आते थे जैसे इतालवी स्पेनी फ्रांसीसी जर्मन, पोल स्विस इत्यादि।

इसीलिए यहां पर रौनक काफी थी। हर व्यक्ति दूसरे से बातचीत कर रहा था, चाहे वह दूसरे को जानता था या नहीं। जैसे इटली में पास बैठी लड़की का हाथ चूमना आवश्यक है वैसे ही हमारे देश में मुंह फेर लेना। लन्दन में दखल कर न मुसकराना अशिष्ट लगता है विशेष रूप से जब दूसरा आप से परिचित हो या आप की ओर टिक-टिकी बांध बार बार देख रहा हो जैसे वह लड़की कर रही थी। वह काफी का घूंट भर कर बार-बार मेरी ओर देखकर मुसकरा पड़ती और मैं भी ऐसा ही करता। मुझे लगता था जैसे मुझे कोई याद आ रहा था।

आध घंटे के करीब समय बीत गया। मेरा मन उससे बात करने के लिए बेचैन हो गया। काफी हाउस में सन्ध्या समय लोग केवल चाय पीने ही नहीं जाते हैं बल्कि थकावट उतारने और दो क्षण टिककर बैठने के लिए भी जाते हैं। नये मित्र बनते हैं कई नये या पुराने परिचित मिलते हैं। इसलिए योरुप में ऐसा शायद ही कोई मुहल्ला हो जिसमें ऐसे काफी हाउस न हों। लोग खाना भी रेस्तरां में ही खाते हैं। एक, जो दिल में आया खाया दूसरा घर में सारा आडम्बर करने से बच गए और स्त्री-पुरुष खाना खाकर काम पर चल गए। घर बच्चों से ही बनता है परन्तु बच्चे पैदा करने की इनकी जल्दी इन लोगों में नहीं जितनी हम लोगों में है। शादी के लिए भी लोग काफी समय तक प्रतीक्षा करते हैं। मेरे दिमाग में अपने बारे में कई विचार आए और गए।

मैं अभी बाहर नहीं जाना चाहता था। और मन सोचा कि वह भी अभी जाना नहीं चाहती थी। काफी पीकर वह सिगरेट पीने लगी और अपने बैग में से एक पुस्तक निकाल कर पढ़ने के लिए सामने रख ली थी।

मेरा दिल बात करने के लिए बेचैन था परन्तु मैं क्या बात करूं समझ नहीं पा रहा था। इंगलैंड में लोग पहले मौसम की ही बात करते हैं— कभी बुरा-बड़ा रद्दी और कभी कभी कितना अच्छा कितना मधुर। इसी से बात आगे चल पड़ती है परन्तु वह अंग्रेज नहीं थी। पहली बार मेरी यह साधारण सी बात सुनकर मेरा उस पर अच्छा असर नहीं पड़ेगा। तो क्या उसकी मोटी काली आंखों की बातों का चमकती स्याही की उसके रंगीन पहरावे की रंग बिरंगी पतली चूड़ियों की उसके सुडौल गोरे शरीर की बात करूं? परन्तु इन बातों को सुनकर वह रुककर मुसकरा देगी थोड़े बात आगे नहीं चलेगी। यह मैं जानता था कि हमारे देश में यदि किसी मां के आगे उसके बच्चे की यूं प्रशंसा की जाए तो वह तीन बार उस पर थूकती है उसके साथ

पर काला चिह्न लगा लेती है और सन्ध्या समय उसकी नजर उतारती है और यदि किसी नौजवान लड़की का मुँह चूम लिया जाए तो वह या तो इसे गाल उतार लेता है या चार आदमी इकट्ठे कर लेती है या फिर कहती है ' घर म माँ-बहन नहीं तेरी ? घर लफंग बदमाश तू बगानी लड़कियों का मुँह चूमता है ।' उन क्या पता कि एक मजाक माँ-बहन से नहीं किया जाता। और इस लड़की न तो प्रसन्न होकर मेरा धन्य वाद करना था—परन्तु बात आगे कैसे चलेगी ? राजनीति की बात करूँ ? दर्शन की ? विज्ञान की ? यद्यपि लड़कियाँ पढ़ती तो बहुत कुछ हैं और जानती भी हैं परन्तु पश्चिमी मानस म किसी लड़की का इन बातों म दिलचस्पी कम ही होती है। वह एक ही बात सुनना चाहती है कि मेरे पास रूप है तुम्हारे पास कितने पैसे हैं ? पुरुष की उम्र विद्या और उसके व्यवसाय के विषय म कोई नहीं पूछता। सब पैसे के हो लिए हैं। रूप का मंडी भरी पड़ी है और यहाँ हर समय प्रत्येक चीज बिकती है। अब तक मुझे इस बात का काफी अनुभव हो चुका है। पूर्व म भी तो ऐसा ही होता है। यदि धन इसीलिए महत्वपूर्ण है कि यह सब कुछ खरीद सकता है तो रूप क्यों न बिके जबकि वह बिक सकता है। इसम भावुक होने की क्या आवश्यकता है ?

इतने म उस लड़की का रूमाल नीचे गिर पड़ा। मैं उठाने के लिये नीचे झुका वह भी झुकी। हमारे हाथ अनजाने ही एक दूसरे को हल्का सा छू गए। बहुत-बहुत धन्यवाद वह बोली। मैंने रूमाल उठाकर उसे दे दिया। इतनी सी बात से ही हमारी पहचान और गहरी हो गई। प्रत्येक प्रकार का प्रेम दूसरों के काम आने म ही पलता है। अब उसकी मुसकराहट और गहरी हो गई और मेरी भी।

तुम कहाँ से आई हो ? आखिर मैंने बात शुरू कर ही दी। इटली से ?

क्या ? नहीं मैं अंग्रेज हूँ। तुम्ह मायूसी हुई सुनकर ?

नहीं नहीं। मायूसी क्या होगी। पर तुम अंग्रेज नहीं लगती। कितनी स्निग्धता है तुम्हारी मुसकराहट म। तुम्हारे बाल इन लोगों जैसे न तो सुनहरे हैं न भूरे। न आँखें ही इन जैसी नीली और भूरी। तुम्हारा रंग भी इन लोगों जैसा प्याजी नहीं है गहरा अधिक है।

बड़ी पहचान है तुम्ह रंगों की। तुम्ह मैं इस रूप मे अच्छी लगती हूँ ?

बहुत अच्छी लगती हो। मैंने स्वाद का जैसे घूँट भर कर कहा। मेरे होंठ धीरे से इन शब्दों के लिए हिले। मेरी आँखों ने उसकी ओर बडी कोमलता और अनुरोध से देखा। वह मुसकराई। अब वह मुझे और भी अच्छी लगी। एक बार मन म विचार आया कि यहाँ से उठ चलूँ। किसी का भी इतना अच्छा लगना खतरनाक हो सकता है पर मन अन्दर से मान नहीं रहा था।

घर म इटली की नहीं चाहे मैं वहाँ रही जरूर हूँ। नागरिक मैं ब्रिटेन की हूँ पैदा बलगरिया म हुई थी एक यूनानी पिता और तुर्क माँ से।

उसने मेरी उत्सुकता मिटाने के लिये उसे सब कुछ एक साथ ही बता दिया।

तभी तुम इतनी सुन्दर हो। मिश्रित खून के बच्चे सदा सुन्दर होते हैं।

"धयवाद ! वह बोली 'और तुम तो पूव स ही आए हो, या तो अरब से या हिदुस्तान से ठीक है न ?"

'बिल्कुल ठीक। मैं हिदुस्तानी हू, पैदा पाकिस्तान मे हुआ था। अब दुनिया का नागरिक हू पक्षियो की तरह आज यहा कल वहाँ।'

उस लडकी ने मुझे सिर से पर तक एक हा नजर मे फिर से देखा बडी आशा और रीझ स, जिसे हम पूरब म भूख कहग। शब्दा, चिह्नो आदतो, कामनाओ के अथ भी किस प्रकार स्थान स्थान पर बदलते रहत है। काई एक काय न किसी धम का न समाज का न भाषा का न फलसफे का यहा काम आ सकता है। मेर पाव म जरी की जूती थी—बिजली की रोशनी म वह खूब चमक रही थी—शेष सूट अग्रेजी, सिर पर सफेद कलफ लगी पगडी और ऊपर से थोडा शमला (पगडी का एक लड) किसी सूयमुखी के फूल की भाति खिला हुआ। मह पर छोटी छोटी दाढी, मेरी कीमती हार की भारी अगूठी—प्रत्यक वस्तु को उसने गौर स देखा, प्रत्येक चीज अजनबी सी थी और अजनबीपन पश्चिम म बहुत खीचता है। मरा सारा पहरावा उसे अद्भुत सा लग रहा था—जस अरब के किसी अमीर शेख का या भारत के किसी शहजाद का। परन्तु वे यू अकेल थोडा ही घूमते हैं—एसे साधारण स्थानो पर और न ही वे साधारण लोगों से यू बातें ही करत हैं।

सम्भवत वह मेरे बारे म भी एसा ही साच रही थी। मरा दिल एसी ही गवाही द रहा था। सोचती रहे, मैंने दिल म कहा आखिर मेरा क्या लेगी ?

तभी उसन पूछा— तुम यहा पर कब म हो ?'

काई चार महीने स।

पढ़ते हो ?"

'नही काम करता हूँ।'

'तुम मुझे काम करत नही लगते यह कह कर वह खूब हसी।

'क्या ? मैंने आश्चय स पूछा।

तुम्हारी चाल-ढाल उस तरह की नही बडी ठाठ वाली और शाहाना है। नही ? तुम्हारा रग भी अ य भारतीयो के समान काला नही। तुम पर धूप का प्रभाव पडा लगता ही नही। तुम्हारे हाथ लडकिया की तरह पतले हैं—तुम काम नही करत—मैं शत लगाती हूँ। साधारण मनुष्य कितना भी बहाना करे, शेष लोगो पर उसकी अमीरी ठाठ और बडाई का प्रभाव उसे बहुत स्वाद देता है। ऐसा ही मेरे साथ भी हो रहा था। हम बहुत कुछ दिखावे के लिये ही तो करते है प्रशसा प्राप्त करन के लिय। प्रत्यक मनुष्य म जान जान की यह प्रवृत्ति है और जितनी भी इस बात की कमी होती है उतना ही प्रयत्न वह और अधिक करता है। तभी कहत हैं कि गरीब बडे दिल के होते हैं कान लगड की एक रग अधिक होती है।

नही नहा। सचमुच मैं तो काम करता हूँ। मैंने फीका सा मुसकरा कर कहा। मेरा दिल तो चाहता था कि उसको ये शब्द न कहूँ। मैं जानता था कि भारत म भी यह कुछ कहना कितना लज्जा की बात है। अपना काम, अपनी कमाई अपना जीवन,

अपनी समझ-बूझ—इनका इस दुनिया में मूल्य ही क्या है ? परन्तु मैं यह भी जानता था कि यदि मैंने अपनी अमीरी का झूठा रोब उस पर जमाया तो वह मर पीछे पड़ जाएगी ऐसे ही जैसे गुड़ पर मक्खी या और अधिक रोमानी अलकार प्रयोग किया जाए तो जैसे फूल पर भवरा। इनका यह कथित आत्म प्रेम उतना ही आत्म या अद्भुत है जितना हमारा प्रतिदिन नये खाने या सुराक के लिए काँटा लगा कर मछली पकड़ना। और मैं उसे अपनी मछली बनाना चाहता था स्वय को उसकी नहीं। इतनी सी व्यावहारिक बात तो पुरख के लाग भी जानते हैं।

क्या काम ? मैं पूछ सकती हूँ ? उसने पूछा। वह मुझे कुछ अधिक बतकल्लुफ होती हुई लगी। परन्तु मुझे उसकी बात का बिल्कुल बुरा नहीं लगा। मुझे उसका सामीप्य आनन्द दे रहा था।

बस ऐसा ही काम है—लिखना पढ़ना पत्रकारिता वगैरह। मैंने गर्मीला सा चेहरा बना कर कहा यदि भारत में किसी लड़की से कहें—मैं आर्टिस्ट हूँ तो वह झट से मुह फेर लेती है।

कितना दिलचस्प काम है ! लिखती में भी हूँ परन्तु कुछ बनता नहीं लिख कर फाड़ देती हूँ। पूरा नहीं कर पाती किसी भी चीज को। वास्तव में लिखने से पहले बहुत गहरी और व्यापक पढ़ाई तथा अनुभव की आवश्यकता है। कला भी बड़ी मेहनत से पकती है। मेरे विचार स्थिर नहीं रहते मेरा अनुभव किसी एक दृष्टिकोण की ओर मुड़ता ही नहीं। यू ही शब्द लिखे जाने के क्या मान ? वास्तव में मेरे लिखने का अभी समय ही नहीं। पढ़ने देखने सुनने बुनने चखने अनुभव करने का समय है। मैं बच्ची सी ही तो हू। नहीं ?

क्या नहीं क्या नहीं मुश्किल से तुम बीस वष की होगी ?

सच ! एक अद्भुत सी प्रसन्नता मुझे उसके चेहरे पर दिखाई दी। सम्भवत वह कुछ अधिक आयु की हो पर तु लडकी की आयु जितनी बीस के लगभग बताई जाए उतनी ही उसे प्रसन्नता होती है। लड़की फूल ही तो है। जवानी ही उसकी सम्पत्ति है।

परन्तु हमारे देश में तो लोग छपवा छपवा कर ढेर लगाए चले जा रहे हैं। न उनके पास पढ़ने का अवकाश है न घूमने का न अनुभव करने का न ही कोई दृष्टिकोण स्वय बनाने या ग्रहण करने का। वहां सब कुछ बासी ही बिकता है। जिधर हवा चली या जो प्रकाशित होना बिकता देखा उसी की ओर आकर्षित हो गए।

तभी तुम्हारा आधुनिक साहित्य कभी कभी ही योरप में पढ़ा जाता है। आप सारा प्राचीन है लोगों ने जैसा जीवन बिताया वैसा ही लिख दिया। कितना महान् है तुम्हारा सारा कुछ पुरातन यद्यपि मैंने वह सब केवल पढ़ा ही है विचारा नहीं। मैंने पूरब देखा भी नहीं है। मेरा दिल चाहता है कि कुछ देर वहां जाकर रहूँ गावों में शहरों में झोपड़ियों में बियाबान में वीरानों में बर्फ से ढके पर्वतों पर घूमू तुम्हारे किसानों की भाषा सीखू उनके साथ रहूँ उठूँ किसी मजदूर की पत्नी बनकर देखूं कि वह जिन्दगी में कैसे संघर्ष करता है फिर भी कितने सन्तोष में रहता है। अभी तो मैंने पूरा पश्चिम भी नहीं देखा। उसने ठंडी आह भरी। कितनी भूख थी उसको

जानने की।

'तुमने सारा योरप तो घूम लिया होगा ?'

हाँ योरप बहुत सारा घूम चुकी हूँ—पश्चिमी भी, पूरबी भी। हर स्थान पर कम से कम वर्ष भर रही हूँ। जहाँ कहीं गई, काम भी ढूँढ लिया। कहीं रिसेप्शनिस्ट कहीं कुक कहीं मास्टरी कहीं बच्चों की देखभाल पर, कहीं गाइड या दुभाषी, कहीं काउण्टर पर, कहीं क्लर्क कई शहजादों और राजनीतिज्ञों लेखकों, कलाकारों के साथ बैठकर खाना भी खाया है। मैं गरीब घर में पैदा हुई थी परन्तु मैं गरीब तो नहीं मरूँगी। अब तक मैं सात भाषायें सीख चुकी हूँ और मैंने इनके प्रामाणिक साहित्य तथा ज्ञान का भी अध्ययन किया है। पर अभी तक न ही मैंने पूरब को कुछ देखा और न हो अमरिका गई हूँ। तुम्हें सुनकर आश्चर्य होगा कि मुझे हवाई सफर से भय सा लगता है—अब तक नहीं किया। सकट बहुत कम देखे हैं। जवानी में सब प्रशंसा करते हैं रूप की। रूप धन के पीछे घूमता है पर जब दोनों एक दूसरे की सतह पर ही चाहते हैं या समझो एक साधारण उत्साह या बीमारी की सी हालत में उन में एक दूसरे के भीतर नहीं घुसा जाता। रूप की बात काम की बात पैसे की बात—मुझे अब सब बहुत साधारण सा लगता है। परन्तु मुझे बुद्ध धर्म समझ में नहीं आता, और न ही हिन्दू धर्म। ईसाई धर्म सरल है और इस्लाम भी उसी तरह अधिक सांसारिक होने के कारण मेरी समझ में आ जाता है। परन्तु यह पूरब की गहराई समझ में नहीं आती। लिखने के लिए जीने के लिए शिष्ट बातचीत करने के लिए भी इसका ज्ञान आवश्यक है। मैं नये अनुभव से अपने आपको भरना चाहती हूँ। मैं मन ही मन सोच रहा था। किसी लड़की से मैंने आज तक ऐसी बात नहीं सुनी।

'हिन्दू और बौद्ध धर्म में तुम्हें कौन सी बात समझ में नहीं आती है ?'

'ज्ञान के लिए कर्म का सिद्धान्त मुझे अच्छा लगता है। मन टिका रहता है इससे। जो होता है इसीलिए होता है कि उसका इसी प्रकार होना लिखा था—पिछले किए का फल है, यही हम आवागमन के चक्र में जानते हैं परन्तु इससे छुट्टी पाने के लिए मुक्त होना जरूरी है। पर मुझे मुक्ति की कोई इच्छा नहीं। यदि आवागमन आवश्यक है तो मैं बार-बार पैदा होना और मरना बार-बार बदलना अनुभव करना चाहती हूँ—एक सिरे से दूसरे सिरे तक। मुक्त होने के लिए जीवन के कई स्थानों से मन मोड़ना पड़ता है। मैं यह बलि जीते हुए नहीं दे सकती। भूख लगे तो खाऊँ नहीं। यह ठीक है कि मैं अधिक न खाऊँ न ही किसी दूसरे को खाऊँ न ही किसी अन्य की भूख मारने का कारण बनूँ पर इतना निर्मोही निष्काम जीवन मुझे निकम्मा लगता है निर्बल कर देता है। नहीं-नहीं यह जीना नहीं मृत्यु है और भूख कोई भी हो मैं उसे पूरा करके खुश हूँ न कि उसे त्याग कर।

परन्तु तुम देखती हो पश्चिम में लोग इतनी जल्दी जल्दी इतने अनुभव कर लेते हैं कि उनके लिए कोई नवीनता नहीं रहती। वही भूख वही भोग। इस प्रकार निधि लगना तो आना स्वाभाविक ही है। धीरे धीरे रुक रुक कर स्वाद में घूँट भरकर पियें तो जीवन भर प्रतिदिन नया सूर्य उदय होता देखें। मेरी माँ चाय पीते समय सूर

स्वाद लेती है क्योंकि बिस्तर पर बैठे बैठे इस बुढ़ापे की उमर में किसी नौकर का हर सुबह गर्म गर्म चाय लाकर देना उन्हें बहुत आनन्द देता है। उसने सारी आयु यह नहीं देखा था। बेचारी पति का बच्चों का, घर-बाहर का काम करके ही बूढ़ी हो गई। मैंने कहा।

पूरब के देशों की किसी वस्तु में यदि मुझे सब से अधिक घृणा है तो वह की स्त्री से। पुरुष उसके सिर हर समय यूं सवार रहता है जैसे मजदूर के सिर पर बोझ। पर्दे में पड़ी रहती है। कभी पुरुष के साथ चिता में जल रही है। उसके आश्रय के लिए हर समय उसका रोब सहती है। विधवा या परित्यक्ता हो तब तो उसके लिए यह जीवन मृत्यु के समान है। वह एक भटक के साथ इस बेसहारेपन से क्या नहीं छुटकारा पाती ? क्योंकि वह काम करने से घबड़ाती है। समाज में डरती है। वास्तव में उसे जीवन का स्वाद लेने का चाव ही नहीं है। उसे मालूम ही नहीं कि जीवन है क्या—अनुभव किसे कहते हैं ? मन रोटी से नहीं अमीर होता है अनुभव से गहराई से स्वतन्त्र चिंतन से आत्मविश्वास से अमीर होता है। नहीं ? वह बोली।

हर प्रकार के अनुभव से गुजरना बड़ा दुःखदायी है। तुम नहीं जानती ? समझदार दूसरों के अनुभव से लाभ उठाते हैं स्वयं अनुभव नहीं करते। मेरी यह बात सुनकर बिदक सी गई। बोली—

मेरा विचार था कि तुम लेखक हो तो विचारवान भी होगे। पर तुमने यह कितनी घटिया सी बात कह दी ? क्या हम शताब्दियों से बनी कहावतों पर ही जीवन जियेंगे ? यह तुमने क्या कह दिया ? दुःख तो जीवन का हिस्सा है। मुझे उसकी यह डांट बड़ी बुरी लगी। आखिर वह लड़की ही तो थी। पुरुष को यूं सुना रही थी जैसे मैं उसकी पत्नी हूं। परन्तु उसका यह आत्मविश्वास और स्वावलम्बन मुझे मोह रहा था और वह कितनी रूपवती थी। उसकी समझदारी इसलिये मुझे और भी अच्छी लग रही थी। मेरे मन में से कई तरह के विचार गुजर रहे थे।

तो तुम दुःख पाने के लिये सदा तैयार हो ?

हाँ यदि वह मेरे अनुभवों को ताजा करते रहें। यही तो सुख का स्रोत है। दुख में से बहादुरों की तरह गुजरने में ही सुख का स्वाद है तभी हमें सुख की वास्तविकता मालूम होती है। दुःख तो सीढ़ियां है सुख की मंजिल पर पहुंचने के लिए। बहुत से सुखी दिखाई देते लोग इसीलिए भीतर से दुःखी हैं क्योंकि उनको भविष्य में भय लगता है कि जो है वह शायद न रहे। और बहुत से दुःखी लोग सुखी बनने से डरते हैं क्योंकि और दुःख उनसे सहा नहीं जाता। अतः वे दुःख में ही सुख मनाने का सिद्धान्त ग्रहण करते हैं। इसीलिये कहा जाता है कि हर कोई अपनी अपनी सतह पर दुःखी है। वास्तव में दुःख का भय ही दुःख का कारण है। भय उतरते ही मन हल्का फूल हो जाता है जैसे पूरबी ग्रन्थों में कहते हैं कि कमल की तरह खिल उठता है। एक पल दिल बांधने की बात है पर सारा जीवन भी किसी नहीं बाँधा जाता। एक पल के लिए भी। कैसी ट्रेजेडी है यहां।

वास्तव में मेरा दिल अन्दर डोल रहा था। एक भय एक भ्रम एक परछाई सी

मुझे अन्दर से कुरेद रही थी। एक विचार आता, एक जाता पर दिमाग वहां टिकता नहीं था। हर तरह का नया विचार मैं समझने का यत्न अवश्य करता था, उस पर वाद विवाद करने के लिये, उसका उल्टा-सीधा पक्ष जानने के लिये, परन्तु उसे ग्रहण करने या उसमें उलझने के लिये नहीं। परन्तु इस लडकी ने तो जैसे मेरे भीतर से सारा भय एक ही झटके से पोछ दिया था। अब मैं अपने विचारों के लिये, हर प्रकार के अनुभव, दुःख में से गुजरने के लिए तैयार था।

इतने में वह लडकी अपना छोटा मोटा सामान मेज पर से समेटने लगी। छोटा सा आइना निकाल कर उसने अपने सुन्दर मुंह को देखा। यूं लग रहा था जैसे वह स्वयं को प्यार करती है अपना आदर करती है तभी वह स्वयं को इतना सम्भाल कर रखती है। अपने होठों की लाली को लिपस्टिक से उसने जरा अधिक गहरा किया। अपने बाल हाथों से सँवारे और मुसकराती हुई बोली— 'अच्छा अब मैं चलूं। काफी समय हो गया है एक ही जगह बैठे-बैठे।'

बड़ी जल्दी है तुम्हें ? बहुत मजा आ रहा था परस्पर विचारों का आदान प्रदान करने में। और तुम कितनी सुन्दर हो। कुछ देर और नहीं बैठ सकती ?'

वह मुसकराई अवश्य यदि तुम ऐसा चाहते हो तो मुझे कोई जल्दी नहीं परन्तु कहीं और न चलें ?

बाहर पानी गिर रहा है। इसीलिए मैं कह रहा हूं।

कोई बात नहीं, हम टक्सी ले लेंगे।

'अच्छा।' और मैं उसके साथ-साथ चल दिया। काफी हाउस से बाहर निकल कर मैंने पूछा, 'कहां चलें ? किसी पब में या मेरे फ्लैट में। वहां मैं तुम्हें हिन्दुस्तानी खाना बनाकर खिला सकता हूँ।

'इससे अच्छी बात और क्या हो सकती है। मिर्च मसाले मुझे स्वादिष्ट लगते हैं और मैं कुछ मुक्त भी होना चाहती हूं। हर समय कपड़ों में लिपटे घुटन महसूस होती है।' मुझे उसकी यह बात सुनकर बहुत शर्म आई। आखिर वह लडकी ही तो थी और एक पराये पुरुष से कुछ समय की पहचान पर ही इतनी छूट लेने लगी थी। खैर[1] टक्सी लेकर मैं उसे अपने फ्लैट में ले आया। उसने अपना कोट उतार लिया और एक अर्द्ध नग्न से ब्लाउज में मेरे सामने खडी हो गई। उसका आधा वक्ष नंगा सिर नंगा बांहें और टांगें नंगी। मेरा अन्तर भावुक होने लगा। एक कपकपी सी मेरी रग रग में दौड़ने लगी। मैं चौंधिया सा गया। जैसे एकाएक अंधेरे में से गुजर कर चटक रोशनी दिखाई देने से होता है। वह कितनी गोरी थी —रक्तिम सजीव ताम्र भास के स्वस्थ शरीर की मालिक और कितनी सुडौल मेरे कितनी समीप कितनी एकाकी में कितनी चंचल और हर नवीन अनुभव की ग्राहक और परिचित। मैंने चूल्हा गर्म किया। वह कौच पर मेरे सामने लेट गई और सिगरेट सुलगा कर पीने लगी। एकाएक वह मेरे समीप आकर खडी हो गई। 'मैं भी देखूंगी हिन्दुस्तानी खाना कैसे बनता है। फिर कभी मैं तुम्हें बनाकर खिलाऊँगी। ठीक ? वह मुसकराई। मेरी ढकी हुई बाहें उसकी नंगी बाहों से छू रही थीं। थोड़ा सा व्यग्य

भरी आवाज़ म मैंने कहा—

बिल्कुल ठीक ।

तुम्हारा नाम क्या है ' वह बोली मैं पूछ ही नहीं सकी ।'

गोपाल

गो पाल गा पाल । कम मरन सा नाम है । शीघ्र याद हो सकता है और बड़ा प्रिय है पाल क मान प्यारा गो क मान आओ । आओ मर प्यार ।

कहाँ जाऊ ?

जहाँ इच्छा हो जाओ, आओ । रोकन वाला कौन है ।

तुम मन देगचा म कलछी चलानी छोड दी और उसकी दोनो बाँहो का हाथो स दबाया ।

सच ? म कुछ नहीं कहूगी ।

झूठी मैंने उसके गालो का हल्का सा छुआ ।

सच उसन मरी बाँह अपने हाथो स जोर स पकड ली ।

तुम तो मुझ कभी प्यार नहीं करोगी । तुम इतनी गोरी हो मैं इतना काला हू ।'

गौरी ? गौरी ? मन यह नाम कहा सुना हुआ है ।

गौरी शिव जी की रूपवती पत्नी है शिव जी जो जिंदा करते है नाश करत है नाचते है साँपो से खेलत है जिनकी जटाओ से गगा निकलती है ।

हाय गौरी ! मुझ यह नाम बहुत प्रिय है ।

तुम्हारा अपना नाम क्या है ?

पहल चाहे कुछ भी था अब स गौरी हू ।

और मेरा ।

गा पाल आओ मेरे प्रिय आओ मेरे प्यारे । वह मुसकराई ।

मुझ म मुसकरान की हिम्मत न थी । वह मेरे साथ आ लगी । म उसक माथ को कितना समय चूमता रहा । उसके बालो म हाथ फेरता रहा । उसकी गालो को अपन गालो स मलता मसलता रहा । एक अपूव शीतलता मेरी रग रग म फैल रही थी । न जान कब खाना बना और कब खाया गया अब उस जाने की जल्दी न थी । न ही मुझ जान कहन की । न ही मुझे उस अपन स दूर करने की आवश्यकता थी । न ही शायद उसकी बिछुडन की नीयत थी । सारी रात हमारी दोनो की यू ही बीत गइ । मुझे मालूम न था कि म कहाँ हूँ कौन हूँ यह लडकी कौन है और हम क्या कर रह ह । दुख क्या है ? सुख की वास्तविकता क्या है ? पूरब का सिद्धात ठीक है या पश्चिम का ? रूप बिकता है या धन लुटता है ।

सुबह होते ही वह उठ खडी हुई । वह मेरे लिये चाय तयार कर लायी । जब हम दोनो चाय पी चुक तो वह बडी मिन्नत स बोली गोपाल !

हाँ मेरी गौरी ।

म अब जाऊँ ?

'वहाँ ? मरी सुदर गौरी मैं भी तुम्हारे साथ जाऊँगा ।"
गम ?
'वहाँ क्या ? और आज ही क्या ?'
उसन अपने वग मे म मुझे गाडी का टिकट निकालकर दिखाया । मरा दिल जैम बैंठ गया 'नही नन्ही मैंन रुआँसा होकर कहा मैं तुम्हार बिना नही रह सकता । मैं भी तुम्हार माथ जाऊगा ।'
'तुम जरूर आना मरी सिर आखा पर । मुझे तुम बहुत अच्छे लग हो भात स भोले स जिनके मन म गाठें बहुत कम है और जा जीवन म मेरी तरह ही पल पल जी कर गुजरना चाहता है, सब कुछ देखकर परख कर चख कर । पर अभी नही—मेरा पति मरी प्रतीक्षा कर रहा हागा ।
पति ? तो तुम विवाहिता हा ? मेरे हाथ पाव ठडे हा गय । मर माथे पर पसीना फूट निकला मरा चहरा फीका और पीला पड गया ।
हा, पर मैं कवल खरीदी हुई नही हूँ । पति द्वारा चाही हुई प्यार की हुई लडकी हूँ मरा पति भी तुम्हारी तरह कलाकार है । वह भी ऐसे ही मोचता है जैम तुम और मैं । वह भी हमारी तरह घूमना घुमाता जीवन के अनुभव मधुमक्खी की तरह कण कण करके इकट्ठा करता रहता ह । हम एक दूसरे के साथ रहकर बडा स्वाद आता है । जब उसका मेरे रूप से मन भर जाता है या मेरा मन उसमे फीका होन लगता ह तो इसको ताजा करन क लिय हम अलग सफर पर चल पडते है और फिर जब दिल चाहता है ता इकट्ठे हा जात है ।
'पाप ! पाप !! मरा अन्तर चिल्लाया परन्तु क्या करता । वह जान के लिए बिलकुल तयार खडी थी आँखें उसकी गीली थी । भरे गल से मैंन उस विदा किया ।
फोन म भाव आ गइ । उसम मेरी पत्नी का पत्र था । कितनो म चुनकर मैंन उसस विवाह किया था । उसन अपन पत्र म पिछली कई स्मृतियो का उल्लख करते हुए दर्द विछोह और विरह की बडी प्यारी तस्वीर खीची था ।
मैं उसी समय उस पत्र लिखन बठ गया और विछोह की लम्बी रातो के सभी किस्से लिख डाले ।

खून

गुरदयालसिंह फुल्ल, १९०८

पंजाबी के प्राध्यापक, आलोचक और नाटककार प्रो० गुरदयालसिंह फुल्ल बहुमुखी प्रतिभा के लेखक हैं। नाटककार के रूप में उन्होंने विशेषरूप से अपनी भाषा के साहित्य में ख्याति अर्जित की है। प्रो० फुल्ल ने कहानी क्षेत्र में भी अपना विशिष्ट स्थान बनाया है।

इस संग्रह में संगृहीत उनकी कहानी को हिन्दुस्तान टाइम्स द्वारा आयोजित सर्वभाषीय कहानी प्रतियोगिता में पुरस्कार प्राप्त हो चुका है।

"साधूसिंह को तो अब तक आ जाना चाहिए था," प्रतापसिंह ने चाय का प्याला उठाते हुए कहा।

"सरदारजी, वह हमेशा अपने वचन का पालन करता है इसलिए ज़रूर आएगा। उसके विगत जीवन में मैं कह सकता हूँ कि उसका व्यक्तित्व असाधारण है। उसकी ईमानदारी का कोई सानी नहीं। जब से वह इस मुहल्ले में आया है उसने इस स्थान को अपना बना लिया है।"

"वह सचमुच कितना अद्भुत व्यक्ति है।" दूसरे ने कहा।

"इसमें कोई सन्देह नहीं कि उसने हमारी इस छोटी-सी दुनिया में आश्चर्यजनक परिवर्तन किए हैं। यदि कोई बीमार पड़ता है तो वह रात दिन उसकी तीमारदारी में लगा रहता है। यदि किसी के सामने आर्थिक कठिनाई आती है तो वह अपना [illegible] दूर करने की कोशिश करता है। यदि कोई बेकार है तो वह कोई [illegible] सिफारिश कर उसे रोज़ी कमाने लायक बना देता है। ये सारे काम वह [illegible] करता

है ? हम तो ६ घण्टों में बड़ी कठिनाई से अपना ही काम कर सकते हैं। वह इन सारे कामों को करता है लेकिन उसके रोजाना के काम में कोई रुकावट नहीं आती।'

इसका रहस्य यह है कि उसमें परिश्रम करने की अपार क्षमता है। दूसरे ने कहा। बचपन में भाई ने उसे बड़ी लगन और प्यार से पाला है। उसने उसके लिए बहुत सी कुरबानियाँ की हैं। उसने उसे विलायत भेजा और उसका खर्चा चलाने के लिए अपनी जमीन बेच डाली। इस कलियुग में कौन ऐसा है जो अपने भाई की इस तरह परवाह करे ?'

वास्तव में इसमें कोई सन्देह नहीं कि उसके भाई ने उसके लिए बहुत कुछ किया है। तुमने भी उसकी सहायता करने में कुछ उठा नहीं रखा। तुम्हारा भी उसके प्रति अत्यधिक स्नेह है। तुम उसे अपना वेतनभोगी नहीं समझते बल्कि उसके साथ पुत्र जैसा व्यवहार करते हो।

जमालसिंह मैं उसे क्या स्नेह कर सकता हूँ ? उसका अपना मीठा स्वभाव ही ऐसा करने के लिए मजबूर कर देता है।

'हाँ उसके मीठे स्वभाव के साथ तुम्हारा स्नेह भी जुड़ गया है।

'भाग्य ही ऐसे सम्बन्धों की रचना करता है। जिसका वह अधिकारी है वही उसे मिल रहा है। वह मेरे जीवन का आधार बन गया है।

'जो भी उसके सम्पर्क में आता है चाहे वह दफ्तर का आदमी हो या कोई और उसके हृदय में उसके प्रति स्नेह होने लगता है। मुहल्ले के लोगों ने चुनाव में खड़ा होने के लिए उस पर जोर दिया है।

'वह इसके लिए तैयार नहीं हुआ होगा। क्योंकि इन चीजों में उसकी रुचि नहीं।'

"हाँ तुम ठीक कहते हो इसकी कल्पना भी उसे अरुचिकर लगती है। वह कहता है—मैं तो समाज का सेवक हूँ इसलिए सेवक हो कर ही रहूँगा। मैं आदेश देने के लिए नहीं हूँ।

कितने ऊँचे विचार हैं।

लोगों ने फैसला किया है कि वे उसे ही वोट देंगे और किसी को नहीं।

तब उसे खड़ा होना ही चाहिए।

'नहीं, वह नहीं होगा। लेकिन यदि चाहो तो तुम उसके बदले खड़े हो सकते हो। वह सारी वोटें तुम्हारे लिए प्राप्त कर लेगा।'

वह खुद ही उपयुक्त व्यक्ति है।

'यदि वह खड़ा नहीं होता तो तुम्हें मंच पर आना चाहिए। तुम दोनों एक ही हो एक-दूसरे से अलग नहीं।

जब वह आयेगा तो हम इस पर विचार करेंगे। जमालसिंह ने अपनी घड़ी निकाली और कहा—'मुझे ६ बजे अदालत हाजिर होना है।' इसलिए वह तुरन्त उठकर चल दिया।

प्रतापसिंह की पत्नी पास के कमरे से यह सब सुन रही थी। वह अन्दर चली गई।

'यह ठीक है आप खड़े हो जाएँ। उसने कहा बहन का भी यही विचार है।

उसने विश्वास दिलाया है कि उसका पति आपके पक्ष म प्रचार करेगा। सोहनसिह के पास भी कई वोट ह और वह अवश्य ही उन्ह आपको देगा क्योकि वह खुद इसके लिए खडा नही हो रहा है। फिर आपके अलावा और कौन उसे अधिक प्रिय हो सकता है ?

यह ठीक है लेकिन हम इस बारे म पहले ही सोच लेना चाहिए था।

अब भी कोई देर नही हुई। फाम भरकर अदालत म पेश करदें। सोहनसिह और जीजाजी बाकी सब कुछ कर लेंगे।

इतने म सोहनसिह ने बाहर से आवाज दी।

सोहनी अन्दर आओ।

सत श्री अकाल सोहनसिह ने अन्दर आते ही कहा और वह बैठ गया।

क्या तुम चाय पीओगे ?

नहा मैं पीकर आया हूँ।

सरदारजी चुनाव के लिए खडे हो रहे है सरदारनी ने कहा।

माताजी बहुत अच्छी बात है। यह बात आपके दिमाग म कब आई ?

मैने सोचा तुम खडे होगे प्रतापसिंह ने कहा।

नहा सरदारजी इस काम के लिए मैं अभी बच्चा हूँ।

क्या तुम सरदारजी की ओर से प्रचार करोगे ? सरदारनी ने हसते हुए कहा।

जरूर जरूर।

मेरा ऐसा करने का कोई विचार नही था लेकिन जमालसिह ने मुझे इसके लिए प्रेरित किया क्योकि उसे आशा है तुम मेरे लिए काफी वोट इकट्ठा कर सकते हो।

मैं दिलो जान से कोशिश करूंगा।

सिर्फ दिलो जान से कोशिश करने से ही कुछ नही बनेगा। हमे पहले पूरा विश्वास हो जाना चाहिए तभी सरदार जी खडे होंगे सरदारनी ने कहा।

सरदारजी मैं आपकी सेवा म हाजिर हूँ।

क्या सरदारजी अपना नामजदगी पत्र भरकर दाखिल कर दें ?

हा यदि दूसरे लोग सलाह देते है। मैं अभी ऐसी सलाह देने लायक नही हुआ हूँ।

सलाह नहा केवल वोट क्योकि सरदारजी ने कहा।

यही आशा हम तुमसे करते है सरदारनी बोली।

सरदारजी तब हम नामजदगी पत्र दाखिल करने के लिए चलें सरदारजी ने कहा। सोहनी क्या तुम भी हमारे साथ चलोगे ?

नहा मैं डाक्टर के पास जा रहा हूँ।

किस लिए ? प्रतापसिह ने पूछा

हमारे मुहल्ले म एक मरीज है।

तो लोगो को अपने हाथ म बनाए रखो। हम सब तो उन की सहायता करना पडेगा सरदारनी ने बडे प्यार से कहा।

मरगारनी ने ड्राईवर को बुलाया। वह कार लेकर आया और वे अस्पताल की ओर चल दिये। सोहनसिंह दवाई खरीदने के लिए चला गया।

डाक्टर के पास जाते हुए सोहनसिंह ने अपने से कहा— यह मेरे लिए कितनी बड़ी बात है कि मैं वोटों की आशा में बीमार लोगों की सेवा करता हूँ। मिलिया बड़ी तेज हालत है। लेकिन कोई बात नहीं। मुझे सरदारजी की सहायता करने का सुअवसर मिलेगा। वह मुझसे बहुत स्नेह करते हैं। मैं उन्हें कामयाब बनाने के लिए काम करूँगा। इतने में अचानक पीछे से एक कार आई।

"कहां से?" एक आवाज ने पूछा।

पीछे मुड़ते हुए उसने उत्तर दिया—"मैं डाक्टर के पास से आ रहा हूँ।'

क्या? क्या प्रतापसिंह के घर कोई बीमार है?

मुहल्ले में एक मजदूर बीमार पड़ा है। उसे इन्जेक्शन की आवश्यकता है।'

'यह अच्छा है तुम्हारी सेवा हमारे लिए लाभदायक सिद्ध होगी" भाभी ने कहा।

'किस बारे में?' सोहनसिंह ने पूछा और वह उनके साथ कार में बैठ गया।

मैं चुनाव के लिए खड़ा हो रहा हूँ। तुम्हारी भाभी तथा उसके भाई ने मुझे ऐसा करने के लिए मजबूर कर दिया है। उनका कहना है कि तुम हम कारखाने के वोटों के अलावा अन्य वोटों को भी प्राप्त करने में सहायता दोगे।'

हमने नामजदगी पत्र अभी दाखिल किया है भाभी ने कहा।

यह सुनकर सोहनसिंह पीला पड़ गया।

'तुम्हें क्या हुआ? क्या तुम्हारे भाई ने ठीक कदम नहीं उठाया?' भाभी ने पूछा।

भाभी मैं अभी एक और बीमार के बारे में सोच रहा था जो कि मौत के साथ भयानक संघर्ष कर रहा है। मुझे उसकी तीमारदारी भी करनी है।

सोहनसिंह कार से उतर गया।

ये दवाइयाँ वोट प्राप्त करने में हमारी मदद करेंगी। जिनके बिस्तर के पास वह सारी रात बैठा रहता है वे वोट उसे देने से इन्कार नहीं करेंगे।

हमने उसी पर आशा रखकर यह निर्णय किया है। आजकल मजदूर धनियों का खून चूसते हैं' आगे बढ़ने पर भाई ने कहा।

सोहनसिंह सोचता रहा अब क्या होगा? दोनों ही पसे वाले हैं दोनों का मुझ पर दावा है। क्या मैं दोषी हुआ जाऊँ और प्रतापसिंह को नामजदगी पत्र दाखिल करने से रोकूँ? किन्तु खुद उन्होंने अपनी सहायता का विश्वास दिलाया है। फिर मैं उनसे किस मुँह से कहूँ कि आप मेरे भाई के पक्ष में बैठ जायें।

फिर भी मुझे उनके पास जाकर उन्हें मनाना चाहिए कि वे मेरे भाई के हक में अपना नाम वापिस ले लें क्योंकि मेरे भाई ने उनसे पहले अपना नामजदगी पत्र दाखिल किया है। वह इस बात पर राजी हो जाएँगे और मुझे इस संकट से—भाई के स्नेह तथा उनके स्नेह के बीच होने वाले संघर्ष से बचा लेंगे।'

इन आधारहीन विचारों ने उसमें एक नई आशा जगा दी। उसने अस्पताल जाने

के लिए तय किया।

उसी समय पर वहाँ पहुँचने के लिए उसने जल्दी की लेकिन अन्ततः उसके पहुँचने से पहले ही देर हो चुकी थी। फिर भी उसे यह विश्वास था कि सम्भवतः सरदार प्रतापसिंह अपना नामजदगी पत्र दाखिल करने के लिए समय पर वहाँ नहीं पहुँच सके होंगे। किन्तु जोगिन्दर (?) जब प्रतापसिंह रास्ते में मिले तब उसे बड़ा धक्का लगा। क्योंकि वे अपना नामजदगी पत्र दाखिल करके आ रहे थे।

सोहनसिंह भारी मन लेकर घर लौटा और बिना कुछ खाए बिस्तर पर जा लेटा। जब उसके भाई तथा भाभी ने उससे अपने साथ खाना खाने के लिए कहा तब उसने दो टूक अपना फैसला सुनाया— मैंने प्रतापसिंह के घर में भोजन कर लिया है।

हरिसिंह तथा प्रतापसिंह का इस बार में दूसरा गुट बन गया। सोहनसिंह के लिए दोनों ही उसके आत्मीय तथा प्रिय थे। किन्तु लोगों का उससे अलग अलग अनुमान था। दोनों के समर्थकों ने उन्हें बेवकूफ बनाया था। यदि वे इस पर विचार करते तो दोनों में से एक बैठ जाता किन्तु उनके पक्षपातियों ने उन्हें ऐसा करने नहीं दिया। यदि वे खुद मिलकर मामला तय कर लेते तो फिर चुनाव में इन पक्षपातियों को कौन मिठाई खिलाता? यदि उनकी बातें अपने न होतीं तो वे भूखा मर जाते। दोनों में से एक के नाम वापस लेने पर प्रत भूखा मरता भ्रष्टाचारी भूखा मरते और शराब बनाने वाले भूखा मरते। रात को उन्होंने आपस में परामर्श किया और सुबह उम्मीदवारों के बंगलों में जाकर मोर्चा बाँध लिया ताकि वे अपने मकसद को कामयाब बनाने में सफल हो सकें।

सोहनसिंह दोनों में से एक को अपना नाम वापस लेने के लिए मनाने के बारे में सोच रहा था। किन्तु जब कभी वह उनमें से किसी एक से इस बारे में कुछ कहने का साहस करता तब वह सारी जिम्मेवारी उसी के सिर पर मढ़ देता ताकि वह उसके स्नेह, आदर तथा कुरबानी के बदले में उसे कुछ मदद दे। उसने उन्हें मनाने के लिए हर तरह की कोशिश की किन्तु उसे सफलता नहीं मिली। समस्या और भी उलझती गई। इसके अलावा दोनों उम्मीदवार उसे संदेह की नजर से देखने लगे थे।

कुछ समर्थकों तथा चुगलखोरों ने तो उसके भाई को यहाँ तक उकसाया कि सोहनसिंह को उसके अफसर ने घूस दी है। लोग जब उस पर व्यंग्य की बौछारें करते तब उसे चोट लगती। वह किंकर्तव्य विमूढ हो गया। उसकी बुद्धि उसकी प्रतिभा, उसका धैर्य सभी उसे छोड़कर चले गए।

कभी कभी वह अपने को अपने ही तरीके से तसल्ली देता। जो कुछ भी हो मैं किसी का वोट नहीं दूँगा। उन्हें खुद अपने वोटों से ही अपना मामला तय करने दिया जाए। मैंने मजदूरों को किराए पर नहीं लिया है। वे अपनी इच्छानुसार किसी को भी वोट देने के लिए आजाद हैं। वोट देना उन का व्यक्तिगत अधिकार है। इस बारे में उनकी रहनुमाई करना मेरा काम नहीं। यह ठीक है कि वह मेरे भाई हैं और उन्होंने मेरे लिए हर तरह की कुरबानी की है लेकिन यह भी तो उनका कर्तव्य था कि चुनाव

म खड होने से पहले मेरी सलाह ले लेते ।' उसने अपने को अपने भाई तथा अफसर दोनों से अलग रखने की कोशिश की, किन्तु उसका कोमल तथा भावुक हृदय ऐसा करने में असमर्थ रहा ।

मेरे भाई का मुझ पर दावा है, मेरी आमदनी के जरिए पर दावा है यहां तक कि वह मेरी भावनाओं पर भी दावा कर सकते हैं, लेकिन वह मुझे अपने वचन से हटने के लिए मजबूर नहीं कर सकते । यह उसकी अन्तरात्मा की आवाज थी । वह इन विचारों के संघर्ष में पिसा जा रहा था ।

दोनों ओर से इश्तिहारबाजी हुई । सम्पत्ति को खंगाला गया, ठेकेदार, माल बेचने वाले तथा शराब की दुकानें तय कर ली गई मतदाताओं की सूची की जांच हुई । और दोस्तों तथा रिश्तेदारों के पास पहुंच की गई ।

प्रतापसिंह के सन्देशा तथा स्मृतिपत्रों के बावजूद भी सोहनसिंह काम पर नहीं गया । वह अपने अफसर के तौर-तरीकों से भय खाता था । चुगलखोर उसे सोहनसिंह के खिलाफ उकसा रहे थे । वे उसके अफसर से कहते—"सोहनसिंह अपने भाई की ओर से प्रचार कर रहा है । यदि उसकी आपके प्रति जरा भी आदर भावना होती तो क्या वह अपने भाई को नाम वापस लेने के लिए न कहता ? उसे कहना चाहिए था कि उसका अफसर चुनाव लड रहा है । यह अनुचित है कि वह अपनी रोजी तो यहां कमाए और अपनी सहायता किसी और को दे । आपने ही तो उसे अपने पुत्र के आसन पर बिठाया है । अब आप अपने प्यारे पुत्र के व्यवहार को देखिए ।" इस प्रकार की बातें धीरे धीरे प्रतापसिंह के हृदय को सोहनसिंह के प्रति विषैला कर रही थीं ।

सोहनसिंह के भाई ने भी उसे अपने पक्ष में चुनाव के लिए काम करने को फुसलाया किन्तु वह कोई न कोई बहाना करके इस मामले को टाल देता । उसके भाई को पूरा भरोसा था कि यदि वह उसकी ओर से प्रचार नहीं करता तो वह अपने अफसर की ओर से भी प्रचार नहीं करेगा । वह चतुर है और दोनों पक्षों को सन्तुष्ट कर रहा है । अन्त में वह अपने भाई की ही मदद करेगा ।

प्रचार खूब जोरों से होने लगा । दोनों पक्षों की सम्भ्रान्त महिलाओं की बदनामी होने लगी । परिवारों के रहस्य उद्घाटित हुए । अखबारों तथा प्लेट फार्मों से माता-पिताओं पर कीचड उछाली गई । सोहनसिंह आधुनिक चुनाव की इन अद्भुत लीलाओं को चुपचाप देख रहा था । वह इस प्रकार कीचड उछालने से बच निकलना चाहता था ।

ऐसा हुआ कि उनके पास का बंगला खाली पडा था । सोहनसिंह ने यह कह कर कि उसकी तबीयत ठीक नहीं, उस बंगले में रहने की अनुमति प्राप्त कर ली ।

उसने दोनों उम्मीदवारों से प्रार्थना की बार-बार आग्रह किया कि वे समझौता कर लें, किन्तु किसी ने भी उसकी परवाह नहीं की । दोनों पक्षों के चुगलखोरों ने अपने अपने पक्ष के उम्मीदवार को विश्वास दिलाया कि वह सोहनसिंह के वोट के बिना भी जीत सकता है । इस प्रकार दोनों को बहकाया जा रहा था । वे छले जा रहे थे, अपनी नेता बनने की प्रबल लालसा के कारण ।

भाई के प्रति आदर दिखाओ और उह इस संघर्ष में सहायता दो।" उसने उसका हाथ पकड़ा और उसे अपने भाई की सहायता के लिए जाने को मजबूर किया।

सोहनसिंह अपने भाई के चुनाव शिविर में नहीं गया। उसके पैर उसे सीधे प्रतापसिंह के शिविर में ले गए। वह प्रतापसिंह के पैरों में गिरकर बच्चों के समान रोने लगा। किन्तु प्रतापसिंह ने केवल यह कहा—"सोहन, मैंने यह निर्णय तुम्हारी अनुमति लेकर ही किया है लेकिन मैं अब भी अपना नाम वापस लेने के लिए तैयार हूँ। किन्तु मैं अपने सहकारियों, सहायकों तथा हितचिंतकों की कुरबानियों से कैसे इनकार कर सकता हूँ? तुम स्वयं बताओ मैं क्या करूँ? मैं अपने हृदय को किस प्रकार खोल कर रखूँ?

"सरदार जी, मुझ पर दया करो!" सोहनसिंह ने विनती की।

'सोहन, तुमने पूरी तरह कोशिश नहीं की, नहीं तो तुम्हारे भाई अपना नाम वापस ले लेते।'

मैंने उनकी पूरी तरह से मिन्नत की कि वह अपना नाम वापस ले लें। किन्तु'

अब काम की बात पर आओ और चाहे इधर हो, चाहे उधर, अपना आखिरी फैसला करो। कहो, तुम मेरी सहायता करोगे या मैं तो तुम्हारे भरोसे पर ही इस विशाल एवं कठिन संघर्ष में उतरा हूँ। लेकिन अब तुम पीछे हट रहे हो तब

सोहनसिंह ने अनिच्छा से जली ईंट के समान अपना सिर हिलाया और वह बाहर आ गया। रात को जब हरिसिंह घर पहुंचा तब उसकी पत्नी ने उसे बताया कि उसने सोहन को उसके पास भेजा था। क्या उसने देखा है?

नहीं' हरिसिंह ने कहा।

'तब कहां गया?

वह जरूर प्रतापसिंह के शिविर में गया होगा।"

वह उसे नाम वापस लेने के लिए मनाने गया होगा।'

'अगर वह चाहता तो अब तक ऐसा कर भी लेता।

'तब वह क्यों गया?"

किस लिए? यह साफ है कि वह उसकी सहायता के लिए गया है। वह उससे जितना हो सके खसोटना चाहता है।

'वह ऐसा नहीं कर सकता।

'मानव हृदय के बारे में कुछ भी कहना नामुमकिन है। अब वह पहले जैसा प्यारा सोहनी नहीं रहा।

अब वह कहाँ है?

"शायद वह अपने अफसर से डरता है।"

उसे जरूर अपनी दुरभिसंधि के कारण भय लग रहा होगा। उसे रिश्वत दी गई है।

इस प्रकार की अनुत्साहित करने वाली बातचीत से आघात होकर दोनों सोने के लिए चले गए। हरिसिंह स्वप्न में बड़बड़ाता रहा था—भाई सचमुच खून चूसने वाले

होते हैं सहोदर भाई भी एक छोटे से जमीन के टुकड़े के लिए एक दूसरे का खून बहा देते हैं हत्या मैं एक साँप को पालता रहा अनमुन साँप का इस जहरीले साँप पर ६० ००० रुपये खर्च किए इसलिए इसका जहर उतना ही तीखा होगा वह वैसा क्या करता है ? इसलिए कि वह इस प्रकार मेरी कुरबानी का बदला देने म बच जाए मेरे बच्चो की सहायता करने स बच जाए इस प्रकार वह अपनी जब बचा लेगा इसके अलावा उसने अपने दफ्तर म ७० ००० रुपये की मोटी रकम लेकर जरूर अपने को सेठ बना लिया होगा यह आज का तरीका है किन्तु उस मेरे भयानक क्रोध का पता नहीं तलवार जहाँ आदमी की रगों काटती है वहाँ उस मार भी डालती है वह नहर मेरे दस म वोट देगा वह मेरे क्रोध को जानता है।

यह २६ तारीख की बात है और २७ को चुनाव प्रारम्भ होने वाला था। मुहल्ले के सभी मजदूरो ने सोहनसिंह की सलाह के मुताबिक वोट देने का फसला कर लिया था।

सोहनसिंह अनिच्छा से सभा म पहुचा। लोगो को सम्बोधित करके वह बोला— भाइयो मेरी तबीयत अच्छी नहीं मुझे इस चुनाव के चक्कर म मत खींचो। मेरा मन उकता गया है मैं अपने आप को खो चुका हूँ। मुझे किसी म भी दिलचस्पी नहीं। आप जिसे चाहे वोट दे सकते हैं। वोट आप का है। वोट किसी की सम्पत्ति नहीं हैं मुझे आप को निर्देश देने का कोई हक नहीं।

वह अपनी आतरिक व्यथा को किसी प्रकार भी नहीं सह सका और जमीन पर गिर पड़ा। उसके अपने खुद के शब्द उसे किंकर्तव्य विमूढ की दशा से बाहर निकालने म सहायता देने के बजाय उसकी उम्मीदो पर पानी फेर रहे थे। उसका दिमागी ढाँचा बिगड गया था। वहाँ प्रेम तथा मित्रता के बीच भयानक सघर्ष था— रोटी और खून का बचन तथा भाई के प्रेम का। उसने पानी की कुछ बूदें पीकर कहा— भाइयो आधा वोट एक को दो और आधा दूसरे को।

एक सयुक्त आवाज जोर से आई— आप ने स्वय खड़े न होकर हमारी भावनाओ को चोट पहुचाई है। आप वोटो को विभक्त करके अपने को बचाना चाहते हैं किन्तु यह हमारी श्रद्धा पर एक क्रूर प्रहार है। हमारे वोट केवल एक पक्ष मे जाएगे। हम बताइए कि हम अपने वोट किसे दें।

उसे महसूस हुआ कि वह बेहोश हो रहा है। उसके चेहरे पर घबराहट थी। वह इससे अधिक कुछ नहीं कह सका— प्रतापसिंह को।

भीड़ छट गई। लोग अपनी राह लग गए लेकिन कानाफूसी होने लगी।

इस कलियुग म रोटी ही सब कुछ है।

शायद ।

आखिर उसने अपना वचन रख लिया

अनिच्छा से सोहनसिंह घर लौटा और बिना कुछ खाए ही बिस्तर पर लेट गया। उस रात हरिसिंह ने अपनी पत्नी से कहा— यदि सोहन के वोट तटस्थ रहे तो मैं जरूर जीत जाऊंगा क्योंकि मेरे पास ३५० ठोस वोट हैं जबकि प्रतापसिंह के पास केवल ३०० ही हैं और वे भी अनिश्चित। सोहन के पास ५०० वोट हैं अधिक-से अधिक

यह होगा कि वे तटस्थ रहेंगे।'

इस झूठी आशा के साथ हरिसिंह अपने बिस्तर पर जा लेटा। अभी वह पूरी तरह से सो भी नहीं पाया था कि उसे बाहर से आवाज सुनाई दी।

सोहनसिंह ने फैसला किया है कि उसके सभी ५०० वोट प्रतापसिंह को जाएँ। जैसे ही यह आवाज ऊँची से ऊँची होती गई उसका क्रोध उभर आया। उसे लगा कि उसके शरीर को सांप ने डस लिया है और उसका विष उसके शरीर में फैल रहा है। वह अत्यधिक थका था इसलिए फिर से गहरी नींद सो गया। आवाज फिर से उठी। वह उठ बैठा खिड़की पर जाकर नीचे देखने लगा। प्रीतमकौर गहरी नींद ले रही थी। वह स्वप्न में बड़बड़ा रही थी—' चिन्ता मत करो मेरा देवर सोहनसिंह गुप्त रूप से अपने वोट आप के पक्ष में डालेगा। यह उसकी कूटनीति है। हरिसिंह भी स्वप्न देख रहा था— 'कल वह चुन लिया जाएगा वह जलूस निकालेगा मेरी हार का कारण प्रतापसिंह नहीं मेरा भाई है—पुत्रतुल्य भाई, सहोदर भाई। मैंने सांप एक लालच का कीड़ा पाला है।"

वह सो नहीं सका। आवेश में भर कर चहल-कदमी करने लगा। सांप सांप, सांप का—इनसान के दुश्मन को मारना आदमी का सबसे पहला काम है सांप इनसान का जहरीला दुश्मन उसने चुपचाप अलमारी खाली, एक बोतल निकाली और उस से कुछ बूँदें मुँह में डाली। जैसे ही वह पेट में गई उसकी आत्मा सांप से लड़ने के लिए लोहे के समान कठोर हो गई। उसने पिस्तौल निकाली किन्तु उसे फिर वहीं रख दिया। लेकिन यह ठीक नहीं मेरा चुनाव चिन्ह तो तलवार है। इसलिए उसने तलवार उठाई और चोर की तरह चुपचाप बाहर निकलकर वह सोहनसिंह के कमरे की ओर बढ़ा। रास्ते में उसे पहरेदार मिला— देखो ये चुनाव के दिन हैं, उस ओर का गश्त करो, मैं इस ओर स्वयं देख लूंगा।"

पहरेदार ने सिर हिलाया। यद्यपि वह हरिसिंह के बरताव से डर गया था। फिर भी वह वहां से चला गया।

हरिसिंह सोहनसिंह के कमरे में पहुँचा। दरवाजा बिल्कुल खुला था। सोहनसिंह गहरी नींद सो रहा था। हरिसिंह ने टार्च जलाई सोहन मुरदे के समान लेटा था। 'उसे पहले ही विष दे दिया गया है। धोखेबाज अपनी मौत से पहले मरता है।"

सोहनसिंह चिल्लाने लगा। हरिसिंह धीरे से पीछे हट गया।

चुनाव चुनाव है

इसका कोई परिणाम नहीं निकलेगा।

रक्तपात निश्चित है

कोई भी बचकर नहीं निकल सकेगा

चगुल में और साइयों में।

हाँ, अपराधी अपनी मौत के बारे में जानता है' यह कहकर हरिसिंह ने पूरे हाथों से तलवार उस के गले पर चलाई। उसके प्राण एक चीख के साथ बाहर निकले और शाम की छाया की तरह न जाने कहाँ अदृश्य हो गए। उसने सोहनसिंह के मृत शरीर*

पर कम्बल डाला और धीरे से कमरे का ताला लगा दिया। वह वहाँ से लौटा। पहरेदार उसे फिर रास्ते में मिला। "देखो सरदार सोहनसिंह यहाँ नहीं है। उसके कमरे को ताला लगा है। तुम होशियारी से इस बंगले की रखवाली निगरानी रखना।" यह कहकर वह अपने घर वापिस आ गया और अपने बिस्तर पर लेट गया। सुबह मतदाताओं ने उसे जगाया।

सभी ने सोहनसिंह को ढूंढने की कोशिश की। किसी ने कहा वह प्रतापसिंह के शिविर में होगा। दूसरों ने सोचा वह अपने भाई के साथ होगा। कुछ बुद्धिमान् व्यक्ति ऐसे भी थे जिन्होंने सोचा कि वह इस स्थान से कहीं बाहर चला गया होगा। संघर्ष चलता रहा। वैध और अवैध सभी तरह के मत डाले गए। जो पहले मजदूरों की छाया से भी भय खाते थे वे उनसे अब मतों की याचना कर रहे थे और उनके गन्दे तथा कुरूप बच्चों से खेल रहे थे। हरिसिंह संघर्ष में हारता जा रहा था उसका पक्ष कमजोर होता जा रहा था। उसके शिविर में भयानक निस्तब्धता छाई हुई थी। हरिसिंह घर आया और बिस्तर पर चित लेट गया। परिणाम घोषित हुआ। प्रतापसिंह के गले में मालाएं पड़ीं। वह सोहनसिंह के प्रयत्न की सराहना कर रहा था। उसके आदमी उसे अपने कन्धों पर बिठाकर सोहनसिंह के बंगले में ले गए। प्रतापसिंह उनकी भुजाओं को अपने शरीर से हटाकर सोहनसिंह के कमरे की ओर बढ़ा। कमरे के बाहर खून की बूंदें पड़ी थीं वह डर गया। हरिसिंह जल्दी में ताले को खुला छोड़ गया था। प्रतापसिंह ने ताला निकाला और दरवाजे पर धक्का दिया द्वार खुल गया। उसने कम्बल खींचा और वह चीख मारकर सोहनसिंह के मृत शरीर पर गिर पड़ा। "खून खून खून!" आवाज सारे वातावरण में फैल गई। सभी डर गए थे इसलिए धीरे धीरे वहाँ से निकल भागे। प्रतापसिंह बेहोशी की हालत में उसी स्थिति में पड़ा रहा। जब उसे होश आया तब उसने देखा कि लाल पगड़ी वाला ने उसे हथकड़ी और बेड़ियों में मजा रखा है।

रजाई

सुजानसिंह, १९०९

सुजानसिंह पंजाबी के शीर्षस्थ कहानीकार हैं। 'कला जीवन के लिए है' उनका विश्वास है और यथार्थ जीवन की यथार्थ समस्याओं का चित्रण उनकी कहानियों की विशेषता है।

सुजानसिंह के लगभग आधा दर्जन कहानी-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। 'दुख सुख', 'दुख सुख तों पिच्छों', 'सभ रंग', 'पंरू ते आदमी', 'नरकां दे देवते' और 'नवां रंग' आदि।

इस संग्रह में संग्रहीत कहानी 'रजाई' उनकी बहुचर्चित एवं प्रशंसित कहानी है।

छुट्टी के समय जब स्कूल मास्टर स्कूल से बाहर निकलता तो वह लड़कों की एक बाढ़ में होता। बहुधा उसे अनुभव होता कि लड़कों की बाढ़ में एक बंधन है। आज उसने सोचा यदि लड़कों का प्रवाह सदैव इसी प्रकार न चलता रहे तो उसका जीवन भी सूखी नदी के रेतीले तटों पर व्यर्थ पड़ी नौका के समान नीरस होकर रह जाय। पुनः उसने सोचा वास्तव में वह नौका ही है। प्रति वर्ष विद्यार्थियों के समूह पर-समूह परीक्षा रूपी किनारों से पार उतारता है। उसकी समझ में न आया कि विद्यार्थी जन-प्रवाह और यात्रियों का संघ दोनों वस्तुएँ कैसे बन सकते हैं? आखिर प्रवाह तो गतिशील ही था जिसके सहारे उसकी टूटी फूटी जीवन-नौका तैरकर एक काम किये जा रही थी। चाहे कठिन-से-कठिन गणित के प्रश्न मिनटों में हल कर लेने वाली उसकी बुद्धि उस अदृष्ट प्रवाह को समझ सकने में असमर्थ थी।

मास्टर ने सहज में ही अनेकों परिचितों की सलामों का उत्तर हाथ जोड़ कर दिया। अनेकों की नमस्ते, सत-श्री अकाल, जय राम जी की झुक झुककर ध्यान मग्न लौटाई। परन्तु भीतर से उसे कोई चिंता खाये जा रही थी। बाजार में तो वह यन्त्रवत्

छिपाए करना चला जा रहा था। सहसा एक भागी आ रही गाय उसे बाह्य चेतना में न लाई। वह चकित था कि वह किसी से क्यों नहीं टकराया अथवा एक ओर बहते गहरे नाले में क्यों न जा पड़ा।

मोड़ घूमते समय उसने कबाड़ी की दुकान पर एक रजाई लटकते देखी। मन ही मन कांपकर उसने इधर उधर देखा कहीं उसे किसी ने पुरानी रजाई की ओर ललचाई हुई नजरों से देखते हुए न देख लिया हो। वह तेजी से मोड़ मुड़ गया।

मास्टर पाँच बच्चों का पिता है। आजकल वह इन्हें पाँच गलतियाँ कहता है। पुराने जमाने और आजकल के रूस में शायद उसकी पत्नी को अधिक बच्चे पैदा करने का मैडल और पुरस्कार मिलता। वह सोच रहा था कि बस परिस्थितियाँ गलतियों को गुड़ियाँ और गुड्डियों को गलतियाँ बना देती हैं। काश कि परिस्थितियाँ हर व्यक्ति के वश में होतीं। परिस्थितियाँ की कुंजी केवल धनिकों के हाथ में ही न होती।

पाकिस्तान में शरणार्थी होकर आए तीन सम्बन्धी भी उसके पास रहते थे। कभी उन्होंने भी उसके कठिन समय में उसकी सहायता की थी जब वे स्वयं सुखी थे। मास्टर का वेतन अब सब कुछ मिलाकर एक सौ साढ़े सत्ताइस रुपए है। बड़ा वेतन है। केवल वह आटा जो उस सहायता दिए जाने के समय दो रुपए तेरह आने मन था, अब तीस रुपए मन मिलता है। परन्तु मास्टर का वेतन तो उचित है। एक सौ साढ़े सत्ताइस रुपए प्रावीडेंट फंड काटकर। अतएव वह उन्हें कठिन समय में कैसे आश्रय न देता? कृतघ्न न कहलाने का भी तो मूल्य होता है न।

राशन डिपो पर कई लोग ठहरे थे परन्तु मास्टर साहब का डिपो से भी कुछ नसीब न होता था। मास्टर साहब का वेतन एक सौ साढ़े सत्ताइस रुपए है। निर्दिष्ट रकम से एक रुपया अधिक लेने वाला भी डिपो से सस्ता राशन लेने का अधिकारी नहीं और मास्टर साहब तो पूरे ढाई रुपए अधिक ले रहे थे। उसका साथी किरायेदार में एक क्लर्क भी था। वह एक सौ पन्द्रह वेतन पाता था। उसको पत्नी और वह—बस यही उसका परिवार था। उसको राशन मिलता था। परन्तु मास्टर जी का परिवार भी तो वेतन की तरह बड़ा था। अतएव वह किसी छूट का अधिकारी नहीं था।

मास्टर ने देखा उससे कई गुना अधिक हैसियत वाले लोग डिपो से राशन ले रहे हैं। परन्तु वे तो दुकानदार थे कोई नौकरी पेशा तो न था। बेचारी सरकार के पास भी तो उनकी स्वयं लिखी हुई बहियों के अतिरिक्त आय मापने का कोई यन्त्र अथवा साधन न था। मास्टर झूठ नहीं बोल सकता। उसे हर कोई भला पुरुष कहता है। कई स्वप्न में भी—ऐसा दुश्चरित्र या बेईमान होना कोई गुण होता है। मास्टर कानून का पूरा मानने वाला था। वह निज आदमी को कानून के उल्लंघन की बात भी अधिक सजा मिल सकती है। मास्टर तो स्वाभिमानी है। अपने या अपने आश्रितों के कारण घर पर और जाति की हानि सहन नहीं कर सकता।

मास्टर निकल गया—अब कुछ करना। उस मार्ग में पुनः रजाई का ध्यान आया। नई रजाई के लिए कम से कम बीस रुपए की आवश्यकता है। हिसाब लगाया—रुई मन पन्द्रह सेर हुआ सात और पन्द्रह खद्दर का या वनास्पति... दस रुपए

पन्द्रह रुपये और बड़ी रकम उसे बाद में याद आई—किराया तीस रुपये, दूध चाय के लिये तेरह रुपये और बाकी इसी प्रकार। कुल जोड़ एक सौ छियासी रुपये। बजट में प्रति मास लगभग साठ रुपये का घाटा। उसे बजट को चैलेंज करना चाहिये। परन्तु उसको गृह विज्ञान के अनुसार नई पुस्तकों एवं पत्रिकाओं पर व्यय की जा रही सात रुपए की राशि के सिवा कुछ अनावश्यक न मिला। वह मन-ही मन इस खर्च पर लकीर खींचने लगा था, परन्तु उसे अनुभव हुआ कि वह खर्च उसकी खुराक पर हो रहे खर्च से भी अधिक आवश्यक है। आखिर उसने सोचा—'मैं मुख्याध्यापक की आज्ञा से एक ट्यूशन रखूँगा। तीस की आय बढ़ जाएगी। तीस का व्यय जैसे तैसे कम करूँगा। परन्तु रजाई के लिए बीस रुपए कहाँ से आएँगे? रजाई सर्दी के लिए बहुत आवश्यक वस्तु है। अतिथियों को अलग अलग चारपाई और बिस्तर देना भी अत्यावश्यक था। तीन लड़कियां इकट्ठी सोती थीं। एक ही चारपाई और एक ही रजाई में सोने से कद नाटे हो जायेंगे। लड़कियों के शरीर नाटे हो जाने से उन्हें आज के संसार में पहले ही कोई नहीं पूछता। कल उसने अपनी घरवाली को उनमें से बड़ी को अलग सुलाने के लिए कहा था।

'थोड़ी चारपाइयाँ हैं कलावती? फिर इन्हें अलग अलग क्यों नहीं लेटने को कहती तुम?'

कलावती ने विनम्र उत्तर दिया था— 'चारपाई तो एक और है परन्तु और रजाई नहीं है। अभी बिल्लू भी मेरे साथ ही सोता है।'

बीस रुपए की रजाई! पहले ही बजट में घाटा है। तीस की ट्यूशन, तीस खर्च में से कम करते ही पड़ेंगे। परन्तु रजाई के लिए बीस और कहाँ से आएँगे? उसे स्मरण हुआ कि उसने परसों ही अपनी पुस्तकें और रद्दी बेचकर सात रुपए बारह आने पाए थे। परन्तु रजाई के लिए बीस रुपये! ओह! कबाड़ी से पुरानी रजाई! हाँ ठीक है, कल पूछा जाएगा।'

कई दिन वह प्रातः समय की ताक में रहा। दिन में वह कबाड़ी से पुनः पूछने का साहस न कर सका। एक दिन रात के समय गया, बाजार बन्द था। बेचारा नेशन बिल्डर कौम का उस्ताद निराश लौट गया। बनाने वाला स्वयं बनाए जाने वाला के हाथों से क्या बन रहा था।

उसने पुनः विचार किया—आखिर प्रातः ही दाँव लगाकर काम बनेगा। निगोड़ी रजाई भी थी जिसे कोई खरीदता ही न था। किसी के सामने खरीदकर अपमान होना था—यदि उसका नहीं तो अध्यापकों की श्रेणी का। परन्तु राष्ट्र का बेचारा अध्यापक क्या कर रहा था? वह किसी से क्या छिपा रहा था? उसने पुनः विचार किया—वह इज्जत को आँच न आने देगा।

रविवार का दिन था—छुट्टी का दिन। वह अपने बड़े लड़के को साथ लेकर उस दुकान पर गया। रजाई पूर्ववत् वहीं पड़ी थी। वह एक ही छलांग में दुकान में घुस गया। सात रुपये में सौदा पट गया। रुपये देकर वह शीघ्र वापस लौट आया। दस कदम ही चला होगा कि किसी ने आवाज दी— मुर्दों से उतारी हुई रजाई खरीद ली

है।

उस्ताद घूमकर देखे बिना न रह सका। कहने वाला एक दरजी था। पास ही मास्टर का एक शिष्य था जिसने आज में उसके घर पढ़ने आना था। उसने भी मास्टर के पास जाकर कहा— यह तो मुर्दों से उतारी गई रजाइयाँ बेचता है मास्टर जी।

मास्टर सच का सा झूठ बोला— हाँ बेटा, परन्तु किसी आवश्यकता वाले की आवश्यकता तो पूरी हो जायगी।

कहने का ढंग कुछ ऐसा था कि जिस से संशय हो सकता था कि उसने रजाई किसी अन्य व्यक्ति के लिये खरीदी है। आखिर यदि यह झूठ भी था तो धर्मपुत्र युधिष्ठिर के बोल झूठ से बुरा न था।

दिन भर रजाई धूप में पड़ी रही। शाम हो जाने पर रजाई कमरे में लाई गई। दीपक जलने के बाद वही लड़का पढ़ने के लिए आ गया। उसने रजाई पड़ी हुई देख कर नमस्ते कहने के बाद पूछा— क्यों मास्टर जी यह वही रजाई है न?

मास्टर में दूसरी बार झूठ बोलने की सामर्थ्य न थी। उसने कहा— वही है बेटा परन्तु आज मैं तुझे पढ़ा न सकूँगा मेरी तबीयत खराब है तू कल आ जाना।

सचमुच उसकी तबीयत खराब थी लड़का वापस लौट गया।

मास्टर ने रसोई में काम कर रही घरवाली से कहा— 'कलाश, नई रजाई मुझे दे दे। मेरे वाली पहली रजाई लड़कियों को दे देना। हाँ सच—गोमती को अलग सुलाना।'

'क्या आप खाना न खाएँगे?'—कलाश ने रजाई पैरों पर ओढ़ते हुए कहा।

नहीं—मास्टर ने कहा और मुर्दों से उतारी रजाई अपने पैरों पर खींच ली। कितने समय तक वह सोचता रहा कि कौन मुर्दों से रजाई उतार लेता है और कौन जीवितों से। वह अशान्त था।

वापसी व वापसी

बलराज साहनी, १९१३

बलराज साहनी हिंदी रजतपट के बड़े लोकप्रिय अभिनेता है। फिल्म जगत म प्रवेश करने से पूर्व वे अपने आपको साहित्य-सर्जक के रूप म प्रतिष्ठित कर चुके थे।

बलराज साहनी अपनी मात भाषा के उन प्रेमियो मे है जिन्होने पजाबी को साम्प्रदायिकता के घेरे से निकालने म महत्त्वपूर्ण काम किया है। फिल्म जगत की अत्यधिक व्यस्तता के बाद भी पजाबी मे उनकी रचनाएँ नियमित प्रकाशित होती रहती हैं।

बलराज साहनी न हिंदी और पजाबी दोना ही भाषाओ म कहानिया लिखी हैं।

काश्मीर जीवन पर आधारित उनकी एक कहानी यहा सग्रहीत की गई है।

लगड़ नूरअहमद न सर्गी की नमाज पढ़ते वक्त कुछ तापें दगती सुनी थी। उसने थान के चपरासिया को नई वर्दियाँ पहन इधर-उधर दौड़ते हुए देखा था। लेकिन परवरदिगार की दरगाह मे यह पूछने की कोशिश न की कि माजरा क्या है। नियमानुसार मुनादकन ताला मे सारे काश्मीरियो की और विशेषकर दरोग की चमड़ी कुत्तो के आग डालन की दुआ करके वह चुपचाप अपनी लोई की तहा म सिमटकर बैठ गया और बड़ घट बैठा रहा।

नियमानुसार बारह बजे जोर का बन्द फाटक खड़खड़ाया और दरोगा साहब न अपना छड़ा घुमाते हुए प्रवेश किया। उन्हे देखते ही नूरअहमद न नियमानुसार अपना पूरे चार इच लम्बा शरीर एक टाग के भार उभारा और बड़े परिश्रम स गना

शाप करते हुए तोला भर अफीम दालान में फूंक दी। इस त्योहार करने पर आज दाएँ-बाएँ की कोठरियों में हंसी की बजाय अनियास उठी जिससे तत्काल ही नूर महमूद को पता चला कि आज महाराज का जन्मदिन है और शायद कुछ कैदी छूट जायेंगे।

यदि आठ साल इन तापों में दमन का कुछ असर नहीं हुआ तो आज होगा इसकी तनिक भी आशंका न थी। लेकिन जब पिछले सालों की तरह कैदी कोठरियों में से नाइयों सम्हालते निकले तो नूर गाजन पर जाहिर हुआ कि अब उसकी एकता की जवानी पर एक मार और पड़ जायगी।

और जब उसकी कोठरी के आगे से गुजरते हुए दरोगा साहब के कदम ठहरे तो उसका दिल भी रुक गया और उसकी सांस मानों रुक-सी गई।

कुंजी ताले में फिरी और उसे बाहर निकलने का आदेश हुआ। निकलते ही दरोगा साहब ने एक ऐसा जोरदार थप्पड़ उसकी गर्दन में दिया कि उसका टाट मिट्टी में जा पड़ी। लेकिन उसे उठाकर नूर अपनी मस्तमौला चाल से चलता गया। वह दिन पूरे हो चुके जब थप्पड़ उसके मस्तक पर बल डाल सकते थे। कमरा-गर्दिशमत कैदी अपनी अपनी कोठरियों से पूरी हार्दिकता के साथ उसे अलविदा कह रहे थे लेकिन उसने न सुना न ही यह सोचा कि उसके जाने के बाद उनका वक्त कैसे गुजरेगा। किसी ने जमाने की हास्यास्पद रीति के अनुसार एक पुरानी कपड़े की थैली उसे ला दी। किसी ने पैसे दिए किसी ने अंगूठा लगवाया किसी ने मशीन पर चलने को कहा। वह मन्त्र मुग्ध की भांति सब कुछ करता और अपनी कटकड़ाहट से कमचारियों का दिलबहलाव करता रहा। फाटक से बाहर पहुँचकर उसने आंखों से आग बनकर छाती पर हाथ रखा और अपनी गुस्ताखियों के लिए दरोगा साहब के आगे सिर झुका दिया। अपने इस अन्तिम मसखरेपन पर लोगों का हास्य सुनता-सुनता वह पहाड़ से नीचे उतरने लगा।

दस-पन्द्रह कदम उतर कर वह ठहरा। एक बार श्रीनगर के शहर पर और चारों ओर की फसल पर नजर घुमाई। अपने मुहल्ले को पहिचानने की कोशिश की। झील पर नन्हे नन्हे शिकारों को रेंगते हुए देखा। फिर आश्वस्त हो अल्लाह का शुक्र कर उतरने लगा। सड़क पर कैदियों के सम्बन्धियों का जमघट सा लग रहा था। चीख-पुकार का बाजार गरम था जिसे देखकर उसे नफरत हुई। स्वतन्त्रता की कल्पना करते समय उसने यह कभी न सोचा था कि बाहरी संसार में रोना धोना भी होगा।

फिर भी उसकी गर्दन जनसमूह से ऊपर उभरी हुई घूम घूमकर किसी को खोजने लगी। किन्तु थोड़ी देर बाद निराश हो गई और वह चल निकला। यह देखकर भीड़ के सम्पर्क से दूर पुल पर बैठा हुआ एक नव-युवक उठा और नीरू की ओर चला। उसकी दाढ़ी पान के पत्ते की तरह तराशी हुई थी रंग गोरा था और वह हरे कोट व सफेद लाल पट्टे वाली पगड़ी में सुसज्जित था। नजदीक आकर अकस्मात उसने नीरू के पाँव छू दिये। नीरू सटपटा गया और आवश्यक चार छुस स्वर छुस के बाद खिसकने लगा। स्वच्छ कपड़े पहनने वालों से उसे सख्त नफरत

थी। लेकिन नवयुवक ने उसकी बाँह पकड़कर कहा।

लाला मुझे पहचाना नहीं ?

नूरू तय न कर सका कि यह विनोद है या यथार्थ। उसने नवयुवक को सिर से पैर तक देखा। न, न यह छेड़खानी नहीं थी। नवयुवक की आँखें सरल थीं और उनमें कुछ न कुछ ऐसा था जो उसे अपनी ओर खींच रहा था। नवयुवक ने कहा

लाला मैं हबीब हूँ।

आ हबीब ? आ बदरम ?" नूरू ने नवयुवक को छाती से लगा लिया। उसकी लाल आँखें फिर उमड़ आईं और उसकी मुसकराहट सुख और दुःख की सीमाओं में निरर्थक सी पतित खीचने लगी। लेकिन नवयुवक को यह भावुकता अच्छी न लगी, क्योंकि इसमें कई महीनों के बिना नहाये शरीर की बू थी। वह अलग होने की कोशिश करने लगा।

हबीब ? आ बदरम ? तू इतना बड़ा हो गया। पिता ने पुत्र को फिर से निहारते हुए कहा।

लाला आठ साल हो गया।

हाँ आठ साल हो गया।' नूरू ने साँस छोड़ते हुए कहा और दोनों आगे बढ़े।

कुछ देर की चुपचाप के बाद हबीब ने गम्भीरता के साथ पूछा।

लाला अब तुम क्या करोगे ?

नूरू को यह शब्द भद्दा सा मालूम हुआ। आठ साल की पाशविक कैद से छुटकारा पाकर दाजल की पहाड़ी से अभी उतरा हूँ और मेरे पुत्र के पास स्वागत करने का केवल यही साधन है कि मुझ से पूछे कि अब मैं क्या करूँगा ? क्या इसे किसी ने नहीं सिखाया कि ऐसी बात नहीं कही जाती ? नूरू खिन्न हो गया। यह वह हब्बू नहीं था जो पुलिसवालों के जतन करने पर भी बाप के कंधे से नहीं उतरता था जिसके रोते हुए चेहरे की स्मृति ने उसके जीवन में तूफान पैदा कर दिया था। दस पान के बादशाह की सी लाठी और अकड़े हुए कपड़े वाले का अपने बाप से शरम आती थी। शायद रत्ती भी इसी कारण नहीं आई। क्या आय ? कभी चोर के घर आने पर भी किसी को खुशी हुई है ? लेकिन नहीं नहीं। उसने प्रेम भरे नशे से अपने पुत्र की ओर देखा। कितना सुन्दर चेहरा था कितना पौरुष डील डौल। कुछ दिनों तक ये लोग स्वयं ही देखेंगे कि नूरू कितना बदल चुका है। लेकिन रत्ती क्यों नहीं आई ? कहीं बीमार न हो कहीं मर ही तो नहीं गई ? भला पूछूँ तो ? फिर रुक गया। हब्बू सोचेगा बाप कितना निर्लज्ज हो गया है। उसे अब यह अवसर नहीं चाहिए। उसने पुत्र के सवाल का जवाब सवाल से दिया

'तू अपना अहवाल सुना।

हब्बू का चेहरा तमतमा गया। वह इसी इंतजार में था। उसके वरदी पहनकर आने व बाकी लोगों से अलग होकर बैठने का अभिप्राय ही यह था कि संसार जान ले कि वह मामूली आदमी नहीं है। शायद उसे देखकर बाप को भी उपदेश मिल कि स्वच्छता और पारसाई बुरी वस्तु नहीं। अट्ठारह वर्ष की अवस्था में ही उसके

जीवन की महत्त्वाकाक्षाएं घर आई थी यह श्रेय किस किसको हासिल होता है ? वह एक प्रभावशाली अंग्रेज का बैरा है । दिन गत जीवन का एक एक क्षण साहब की सेवा मे व्यतीत करता है । घर जाना अपने सम्बन्धियो व मुहल्ले तक मे कदम रखना उसे मुसीबत है । कई सड़कें ऐसी हैं जिन पर से गुजरने की बजाय दो मील का चक्कर काटना उसे ज्यादा मजूर है । ऐसा बाप और अब ऐसी माँ बिरादरी तो उसे कच्चा चबा डाले ।

मैं रामसु नी बाग म मिटमैन साहब की कोठी पर नौकर हूँ । दो साल हुए काम शुरू किया था । पहले झाड पूछ व बूट पालिश का काम मिला फिर साहब ने मेरी ईमानदारी और परिश्रम की दाद देकर मुझे अपने कारखाने म चपरासी लगा लिया । अब दो महीने से घरे का काम कर रहा हूँ । बीस रुपए तलब मिलती है और रोटी कपडा साथ म । साहब बहुत ही नेक आदमी है । उसकी फैक्टरी म दो सौ आदमी काम करते है लाला दो सौ । महाराजा के साथ पानी चलता है । दो मोटरें रखी है उसने जिधर म निकल जाती हैं जहान देखता है । पिछले हफ्ते मुझे अपने साथ बिठाकर गुलमर्ग ले गया था । वहाँ तो कुछ जाता नही पर लाला अल्लाह रहम करे और मेरे ईमान को बरकत करे साहब आगे और भी मेहरबान होगा । खुदा जानता है कि रात को तीन-तीन बजे क्लब स आता है और उसकी जेबो म सैकड़ो रुपये होते है । अगर चाहूँ तो पाँच-दस रोज इधर उधर कर दूँ लेकिन हराम का एक पाई मुझे मजूर नही

लगड़ नूरमुहम्मद को और सुनना असह्य हो गया । देखो लडके की तरफ । बजाय इसके कि मर्यादानुसार पहले अपनी माँ का फिर दूसरे सगे-सम्बन्धियो का कुशल समाचार दे इसे अपने साहब की पडी है और फिर इसकी जुरत कि अपने बाप को धर्म ईमान का उपदेश देना शुरू कर दे ? लानत है । उसने काटकर कहा— खैर बहुत अच्छा । लेकिन बेटा जो शख्स बाहर से आए पहले बुजुर्गों का हाल अहवाल दखना चाहिए अदब यही सिखाता है ।

उह उनका क्या है ? हम्बू ने उपेक्षा से कहा— जिस गन्दगी म आप सड रहे थे उसी म अब भी पड़ ह । वही गन्दा पानी पीते ह मास भर नहाते नही सारा दिन फिजूल बकबक म गुजार देत है । बाबा अहदजू के पास जो कुछ था वह शराब और जुए की नजर हो गया है और अब घरवाली को लातें जडने के सिवा उन्ह कोई काम नहीं । लाला इन लोगो स मुझे नफरत हो गई है ।

चिनारो म घिरी हुई अब वह पुरानी सडक न थी उनका स्थान चौड़ चौड चिकने मैदानो ने ले लिया था जिन पर चर चर करती हुई मोटरें इधर से उधर भाग रही थी । चौराहो पर सिपाही कौतूहलपूर्ण अन्दाज स हाथ हिला रहे थे और बार बार नूर को आस पास के घडो पर चढने का आदेश करते जिन पर उतरन चढने म उसे दिक्कत होती । हर तरफ परिवर्तन स्वच्छता की बू आ रही थी । नदी के आस पास बेत के वह जगल जिनम कई दोपहर उसने छिपकर चरवाहो युवतियो के सग बिताए थे अब कही नजर नही आते । आठ साल के अन्दर नूर को कश्मीर देश बिल्कुल बदला

गया। मैंने सुना है फिरंगी हराम की चीज भी खाते हैं क्या यह ठीक है ?' नूरू ने विष भरे स्वर में कहा।

हबीब का उन्नत मस्तक इस प्रश्न पर गिर पड़ा। बेशक खाना पकाना खानसामा का काम था, लेकिन प्लेट पर धर कर लाता तो वही था। उसके जी में आया कि स्पष्ट कह दे कि चोरी के मुकाबले में यह काम बुरा नहीं है लेकिन आखिर बाप था। वह यह धृष्टता न कर सका। नूरू को भी पश्चाताप हुआ। यह माना कि उसने अपने पुत्र के लिए सदैव किसी उज्ज्वल और स्वतन्त्र जीविका की कल्पना की थी लेकिन इस बरस की लम्बी अनुपस्थिति ने सब बरबाद कर दिया। इसमें हब्बू का क्या कसूर ?

कुछ दूर तक फिर दोनों चुपचाप चलते गए। आखिर नूरू से रहा न गया—

रहनी क्यों नहीं आई, ठीक तो है न ?"

'हां ठीक है —हब्बू ने गुनगुना कर जवाब दिया— मुझे काम ज्यादा था इस लिए कोठी से सीधा इधर आ गया।

अब वह सड़क के आर पार बनाये गये एक ऊंचे फाटक के पास पहुंचे जो टहनियों और फूलों से लदा हुआ था। इससे आगे रंग बिरंगी झंडियों का एक तांता सा लगा हुआ था। दूकानें सजी हुई थीं और स्थान-स्थान पर सुनहरे अक्षरों से जटित कपड़े लटक रहे थे।

जश्नोत्सव की इन निशानियों को देखकर नूरू को पहले महाराज की याद हो आई। तब मोटरें भी न थीं और यह चौड़ी सड़कें भी न थीं। फौजी डोगरे एक कन्धे पर बन्दूक और दूसरे पर चिलम थामकर पहरा दिया करते थे। कितना गरीब-नवाज था बूढ़ा महाराज। आते-जाते हजारों सलाम कर जाता था। जिस दिन धाड़ पड़े, ड्योढ़ी में जा घुसे। दाल भात नसीब हो जाता था। सिपाही को चौथे-पांचवें दिन एक बिना पैसा सिगरेट पिला दो, फिर चाहे वजीर की जेब कुतर लो। आह वे दिन

अकस्मात् हबीब ठहर गया और कलाई पर लगी हुई घड़ी को देखते हुए बोला

'नाना अब इजाजत दो मुझे काम है। शाम को आऊँगा।

नूरू को जैसे किसी ने नश्तर चुभो दिया हो। इस बाप को घर तक छोड़ आने की फुरसत नहीं। उसके हाथों में जलन हुई लेकिन पहले दिन ही कान पीस देना ठीक नहीं होगा। खैर सही।

इसके बाद लगभग नूरमुहम्मद अपनी मद्धम चाल से चलकर अपने मुहल्ले में पहुंचा। गंदा कीचड़ वाकरखानी तथा सड़ी हुई मछली की बदबू एक साथ सूंघने ही उसने अपने शरीर में एक नयी जान महसूस की। किसी कंजूस बनिये की तरह जिस परम्परा से लौटने समय हर आगन्तुक बनी रहती है कि मेरा घर कहीं लुट न चुका हो वह मकानात एक एक करके उसने प्रत्येक स्थान को पहचानता। उसे तसल्ली हुई कि उसका कोई समृद्धिगामी मुहल्ले के दो एक मकान उड़ा नहीं ले गया।

अपनी गली के सिरे पर पहुंचकर उसने बिस्मिल्ला कहा और अन्दर प्रवेश किया। लेकिन, न जाने क्यों वही दीवारें जिनको पहले कभी उसने आंख उठाकर देखने की परवाह न की थी, आज उस मकान को दौड़ीं। उनको इन्हें उस अपरिचित-सी मालूम

न्यक्ति अपनी गुडगुडी छोड लोई के आराम को स्थगित कर उस पर लपका, लेकिन कुछ छगा बाद उसी तेजी के साथ लुढ्कता हुआ सीढियो से वापस आ गिरा और कुछ सोचकर फिर तम्बाकू पीने लगा।

नूरू एक वद से विलास-गृह म दाखिल हुआ। फर्श पर लाल गद्दा बिछ रहा था, और उस पर कोने म तकियो स सजी हुई एक सफेद चादर। खिडकिया बद थी और बत्ती जल रही थी। उसका प्रकाश खिडकियो के आग लटकी हुई रग बिरग मोतियो की भालरो दीवार के साथ टगे हुये एक चौड शीशे, कुछेक अधनगी तस्वीरो म छलक रहा था। उसकी रहती सिरक की रजाई ओढे, आखो म हलका सा काजल डाले सिरहाने कुछ फूल रखे हुए चौडी शय्या पर सो रही थी।

नूरू अपनी सालम टाग क बल खडा होकर बहोशी के आलम म उसे देखता रहा। यदि वह इस समय उस छुरे से काट देता या उसके साथ जा लेटता तो यह दोनो ही घटनायें असम्भव न थी। लेकिन वह निश्चल खडा रहा। ऐसी परिस्थिति का उसे स्वप्न म भी सामना न हुआ था। वेश्याओ के पास वह जा चुका था लेकिन उनम से कोई भी इतनी सुन्दर न थी जितनी उसकी पत्नी थी।

हठात् रहती ने आखें खोली। विश्वास न कर सकी और उठ बठी। उसके आतक म अपनी भार्या की झलक नूरू को मिली, उन दिनो की जब सडक ही पर वह उसे पीटने लग जाया करता था। पहचान से मुहब्बत और चाह जागृत हुई। चिल्ला उठा

ओ हरामजादी सखीर की बच्ची तुझम इस नापाक कुतियापन के बगैर रहा न गया ? ओ तेरे बाप की नसल दोजख म जाय। मैं वहा आग म जलता रहा और तू यहाँ गुलछर्रे उडाती रही। और

पेश्तर इसके कि अपनी आवाज से अधिकाधिक उत्तेजित होने का पुराना सिलसिला जारी हो जाता और क्रमश नौबत हाथ उठाने पर पहुचती रहती ने रोना शुरू कर दिया। यह रोना वास्तविक था या नही केवल रहती ही जाने। वह कुछ-न कुछ बदल चुकी थी। उसके चेहरे का अलहडपन वदस्तूर कायम था लेकिन अब वह उसस काम लती थी। यह भी जान गई थी कि जितना थोडा काम लिया जाय प्रतिक्रिया अधिक होती है। जीवन म पहली बार उसे अपने खाविन्द के प्रति इस धारणा से प्रेरित होने का सौभाग्य मिला कि वह बेवकूफ है।

आधा घण्टा बीता। नूरू उसे क्षमा कर चुका था। वह पास बठी रुँधे कठ स अपनी अगण्य विपत्तियो का हाल कह रही थी। नूरू सहानुभूति के साथ सिर हिला रहा था। बेशक वह भी सच्ची थी। वह क्या करती ? लोगो ने उसे यह नही बताया कि उसके अजीज को किश्तवाड म ले जाकर बन्द किया गया था बल्कि यह बताया कि उसे कलकत्ते ले गये हैं। सम्बन्धियो ने मुह मोड लिया खाती कहा से ? पुन भी ऐसा पामर निकला कि साहबो के चकमे म आकर अपनी मा तक को भूल बैठा। दो बार वह दरिया म कूद पडी लेकिन बदनसीब को लोगो ने निकाल लिया। उसके वास्ते और क्या चारा था ? फिर भी उसने किसी काफिर का अभी तक नही छुआ, हालाकि पैसे ज्यादा देते है। पाँच बार नमाजें पढती थी।

अच्छा जो हुआ सो हुआ नूरू ने मन में स्यापानाई करते हुए कहा लेकिन अब रकम वसूल करना होगा। मौजूदा हालत होना ही था गुनाहों का नतीजा है वरना बेटा ऐसा गवार न निकलता। रहती की शरीफ ज़ादियों की तरह फिर से मले कपड़े पहनने होंगे और यह धोना भी दस-बीस दिन के लिए स्थगित करना होगा। सिर में राख डालकर बाल सीधे कर डालने होंगे ताकि ज़माने को बदाश न रहे। रहती सहमत हो गई उठी और शीघ्र ही वेष बदलकर पुरानी हो गई।

उसके बाद वही हुआ जिसकी गली मुहल्ला भर तब प्रतीक्षा में था। बेगम अख्तरी जान नौशनव के चबारे में अकस्मात् बला की चीख-पुकार शुरू हुई। तलवारें और मोतिया की मालाएँ गमियों की बारिश की तरह बबायक बाज़ार में टपक पड़ीं। श्रोताओं ने न केवल अन्य के बच्चे के प्रचंड गायन की दाद दी बल्कि किश्तवाड़ से आई हुई कई गालियाँ अपने नरम कोष में जोड़ लीं। अख्तरी जान नौशनव का चीत्कार मुहल्ले के दरो दीवार को कम्पायमान करने लगा। टप टप जूतियों की, डण्डा की छड़ी से पीटने की आवाजें आने लगीं।

फिर लोगों ने देखा कि बेगम नंगे सिर सीढ़ियों से लुढ़क कर नीचे आ रही है। उसके पीछे लगड़ पलंग का एक रंगीन पाया हाथ में लिये हुए जल्दी से उतरने में मस्त फन हो रहा है। सड़क पर पहुँचते ही बेगम एक कोने में सर पटक पटककर लगी विलाप करने।

नूरू ने उसे तो वहीं छोड़ा अब किंकर्तव्यविमूढ़ चारपाई पर आसीन दलाल के सवारे हुए बालों को थामा। सड़क पर घसीटकर उसकी खोपड़ी को ऊबड़-खाबड़ पत्थरों पर ठोका और कमर में तीन चार घूँसे दिये। दो क्षण ही में उस सदाबहार लोथड़ की तरह चित कर दिया।

अब नूरू ने बेगम को चुटिया से पकड़ा और ले चला उसका वितस्ता नदी में अन्तिम संस्कार करने। जनता जिनमें कई बेगम के प्रेमी रह चुके थे अब बरदाश्त न कर सके। सैकड़ों की तादाद में लोग जमा हो चुके थे। अब वे तमाशा देखने की बजाय छुड़ाने के लिए आगे बढ़े। स्त्रियाँ घड़ों पर खड़ी होकर अपनी कीमती राय प्रकट करने लगीं। लेकिन जितना लोग आग्रह करते उतना ही नूरू अपने नशमंक इरादा पर कटिबद्ध होता जा रहा था। जब कोलाहल और जमघट अपनी तमाम पुरानी मर्यादाओं को पार कर चुका तो नूरू की छाती ठंडी हुई। वहीं मोटे ढोल का सी गदे सेब की सी आँखों वाली हतबी बेगम को अपने मरफिशाव नागराई के हाथों से छुड़ाने के लिए आई और आन की आन में सफल हो गई।

फिर वही पुराना घर जिसकी तिकोन छत पर प्याज की खेती थी। नूरू ने सतोष की सांस ली। रहती के साथ विवाहित जीवन को पुनरारम्भ करने में अब कोई रुकावट न थी क्योंकि रसम पूरी संजीदगी के साथ निभा दी गई थी। रहती ने भी मुँह से नकली लहू पोंछा और देखा कि नोटों का पुलिंदा आजारबंद में सुरक्षित है फिर घर के काम में लग गई। नूरू साथवाले घर की छत पर बैठकर एक बुजुर्ग की चिलम की साझी करने लगा। उसी घर के एक नवयुवक ने बाज़ार से उसके लिए मलमल की

सफ़ेद पगडी ला दी जिसे अपने उन्हीं मल भपटों पर सजाकर और रहती का ध्रार एक लोलुप नज़र फेंककर वह अपने नये जीवन की संसार को सूचना देने के लिए निकल पडा।

शाम हो चुकी थी। बाज़ार में भीड बढ़ गई थी। घरों में से चौड के धुएँ की सुगन्ध फैल रही थी। नूरू के मन में दो भाव इस समय प्रबलता से उद्दीप्त थे। एक तो यह कि उसे भूख लगी है और दूसरे यह कि जेल के फाटक में से जो संसार इतना सुखमय और बहुमूल्य नज़र आता था, वह अभी तक बहुत विशाल और फीका जान पडता है। जेल में वह कुछ महत्त्वपूर्ण निश्चय करके निकला था लेकिन अब उनके प्रतिफलित होने की आशा कठिन सी जान पडती थी। रहती के शरीर के लिए उसके रक्त में ज़बरदस्त भूख थी। शायद रात को वह चुपके चुपके उसे फिर उसी तरह साफ होकर आने के लिए इशारा करे। लेकिन उसका जीवन का भविष्य हब्बू पर ही अब लम्बित था। वह कितनी उपेक्षा के साथ कन्नी काट गया? शाम हो गई लेकिन अभी तक नहीं आया। क्या ही अच्छा हो कि उसे कुछ दिनों के लिए जेल ही में डाल दिया जाय। अभी कुछ घण्टों की आज़ादी ही काफी है।

कुछ इसी प्रकार सोचता वह लँगडाता हुआ चला जा रहा है। उसका ध्यान एक खान पीने की दुकान के बाहर पडे हुए सन्दूक की ओर गया। इसमें से किसी लडकी के गाने की आवाज़ आ रही थी

गुल हमा रोने रोने
पोने मति जाना नो।

नूरू ठहर गया। यह कौन गा रही थी? उसने देखा कि सडक के किनारे बीस आदमी कान पर हाथ रखे बैठे हुए हैं लेकिन किसी के मुँह पर तरस की रेखा तक नहीं कि गानेवाली को इस तरह बन्द किया गया है। और सन्दूक उसकी कोठरी के मुकाबले में कितना छोटा था? इतने में गाना बन्द हो गया। दूकानदार ने सन्दूक का ढक्कन खोला और उसमें से एक थाली सी निकाली। नूरू लपककर आगे बढा और अन्दर झाँक कर पूछने लगा हलकी कहाँ है? सभी लोग हँसने लगे। इतने में एक पुराने हमजोली ने उसकी बाँह पर हाथ रखा और उसे दूकान के अन्दर ले गया।

रात के दस बज चुके थे। जब नूरू लडखडाता हुआ दूकान में से निकला। लडकी फिर वही गीत गा रही थी

गुल हमा रोने रोने
पोने मति जाना नो।

नूरू ने हँसने-हँसते ढकना उठाया और अन्दर झाँक कर फिर रख दिया। लेकिन अब कोई न हँसा। सन्दूक खाली थी।

अपने मित्र से विदा लेकर नूरू आहिस्ता आहिस्ता अपने घर की ओर चला। लेकिन साथ ही साथ उसका मन घर की ओर से उचाट होने लगा। क्या रखा है वहाँ? बोसिया के साथ प्रेम कर चुका है। हब्बू के घर न आने का कारण भी यही है। न जाने अब भी किसी यार को बगल में लिए बैठी हो। नशे में आकर किसी की प्रवृत्ति तामसिक

हो जाती है और किसी की सात्विक।

नूरू वापस लौट पडा। पूरब दिशा म आकाश लाल बत्तियों व प्रकाश से अगारे की तरह जगमगा रहा था। अभी अमीर कुदल म जनसमूह का कोलाहल सुनाई दे रहा था। नूरू के दिमाग म शराब की मस्ती कुछ कम हो रही थी। कदम चुस्त करके वह भी अमीर कुदल की ओर चला।

बड बाजार म भीड सडक के दोनो ओर रुकी हुई थी और महाराज की मोटरें गुजर रही थीं। नूरू को भीड म ठहरना पसद न आया। सरकता-सरकता लोगो की गालियां और धक्के खाता हुआ वह पुल के पास पहुच गया। भीड म से निकलकर वह पास ही के एक बाग म चिनार के नीचे जा बैठा। उसका हाथ उठकर उसकी आखो के सामने आया। उसम सोने की घडी तथा जजीर थी और एक चमडे का बटुआ। नूरू ने उसे खोलकर देखा। पद्रह रुपये थे।

इनकी तरफ देखता हुआ नूरू हसने लग गया। हँसता गया और घडी को उलट पलट कर देखता रहा। उसकी उगलियाँ अनभ्यस्त होकर भी इतनी शिथिल नही हो चुकी। यकायक उसने बटुआ भी और घडी भी घृणा के साथ दूर फेंक दी और उगलियो को बन्द-खोल कर सराहने लगा।

लेकिन उसके मन की बेचैनी दूर न हुई। उठकर वह फिर बाजार म आगया। मोटरें गुजर चुकी और भीड तितर बितर हो रही थी। नूरू को ऐसा लगा कि उसके मनोविनोद के लिए बनाई गई वस्तुएँ बिखर रही है। और वास्तव म जो लोग एक व्यक्ति को मोटर म गुजरते हुए देखने के लिए घण्टा खडे रहे और फिर चुपचाप घर चले जायें व और थे ही क्या?

भीड एक स्थान पर गठ गई थी। एक मोटे पटवाला व्यक्ति कभी पुल पर इधर और कभी उधर जाता था। जिधर वह जाता, भीड उसके पीछे जाती। नूरू को पता चला कि उसकी सोने की घडी चोरी हो गई है। उसके बाद एक और टोली एक थानेदार साहब की निगरानी म आ पहुची। इनम से एक का बटुआ गुम हो गया था और एक का कलम एक दूसरे व्यक्ति का जेब कट गया था। नूरू पहले तो विस्मित हुआ। फिर उसकी बाँछें खिल गई। यह अकेले जादूगर का काम नही है। कोई और भी खेल रहा है। पुल के नीचे-नीचे दरिया अपनी मस्त चाल से बह रहा था। डूगो म हतकियाँ किसी आगामी शादी के गीत गा रही थी। तख्ते सुलेमान पर चाँद अपनी पूरी ज्योति के साथ चमक रहा था। पुल के जगले के साथ टेक लगाकर नूरू ने गुनगुनाना शुरू किया

'सुन हमा रोने रोना
पास मति जाना ना।

धीरे आहिस्ता आहिस्ता खत्म होने को आई। लगड़ भी उसकी एक टांगा के साथ साथ पाद चला।

वह नशा जानता था कि वह किस दिशा म जा रहा है या क्या। कभी कभी राह गीरो का ताना दे देता उनके वस्त्रो पर कटाक्ष करता लेकिन वह गम्भीर सा मुह

बनाकर आगे चले जाने, जैसे घर नहीं दफ्तर जा रहे हो।

अब उसे ख्वाहिश हो रही थी कि घर लौट जाऊँ लेकिन एक एक कदम के साथ उसे ऐसा प्रतीत होता था कि वह बीस-बीस कोस आगे बढ रहा है। हबीब खान घर पर नहीं होगा। रहती कितनों के साथ लेट चुकी है। नापाक औरत। अब भी किसी की बगल में बैठी होगी।

इस उधेडबुन का आखिरी फैसला करते हुए नूरू ने तय किया कि वह आज ही रात दूसरी शादी करेगा। रहती और हबीब को भविष्य में शक्ल तक न दिखायेगा। स्त्रियां डूमों में बैठकर उसके गीत गाएँगी और वह सन्दूक से भी सगीत करवायेगा।

लेकिन इसके लिए पैसों की जरूरत होगी। हूँ? पैसों के लिए ही तो वह भीड के पीछे जा रहा था।

हजूरी बाग के किनारों के समीप पहुचकर उसने राह बदल ली। बाग के बाईं ओर तीन चार सफेद कोठियाँ चाँद की धूप में सो रही थीं। उन्हीं में से एक पर उसकी नजर जम गई।

कोठी की बगल में एक पेड था। नूरू उसके साथ सटकर खडा हो गया, जैसे किसी प्रेयसी के गाढे आलिंगन में हो। आहिस्ता से उसने अपनी सफेद पगडी को जमीन पर रगडकर मैला किया, और फिर उसे रस्सी की तरह गठ कर बाहु के नीचे दाब लिया।

कोठी के आगे सात फुट ऊँची दीवार थी और उसकी चोटी पर काँच के टुकडे जडे हुए थे। सडक की टोह लेकर नूरू बडे आराम के साथ दीवार के पास पहुँचा और छाँह में लुक गया। थोडी देर भिखारियों की तरह उठकर दायें-बायें देखता रहा फिर उठकर उसने पगडी को ढीला किया और काँच के ऊपर जबरदस्त झटके के साथ पटका। वह फौरन बैठ गई। स्थान-स्थान पर उसने उसमें गाठें बाँधीं। इस प्रकार पगडी की ऊँचाई में जूते समेत कदम रखकर वह सहज ही दीवार पर पहुच गया। वहा से बिजली का तरह पगडी सीढी उठाकर अन्दर की ओर फेंकी और फिसलकर बागीचे में आ रहा।

फिर पगडी खोलकर उसने इस ढग से फैला दी जैसे कोई कपडा सूखने के लिए डाला जा रहा हो। उसके एक छोर के नीचे अपना जूता छिपा दिया ताकि ढूँढना न पडे।

मकान के आगे एक छोटा सा बरामदा था जिसके शीशे के सभी दरवाजे बन्द थे। शीशा काटकर दरवाजा खोलना असम्भव था क्योंकि नूरू के पास कोई औजार न थे इसलिए वह मकान की पिछली तरफ गया। ऊपर की छत के एक कमरे में बत्ती जल रही थी और इसमें नौकर बतन मांज रहे थे। मकान के एक तरफ लकडी की तंग सीढी थी जिसका दरवाजा अभी बन्द नहीं किया गया था। यदि फौरन ही उसने इसका फायदा न उठाया तो यह भी बन्द कर दिया जायेगा। नूरू दबे पाँव ऊपर चढ गया और रसोई घर की खिडकी में से अन्दर झाँकने लगा। एक नौकर बरतन धो रहा था और दूसरा प्लेटों को पोंछ रहा था। कम अज कम आधे मिनट के लिए उनके मुह फेरने की सम्भावना नहीं। यह ठानकर नूरू ऐन उनके सामने होकर गुजर गया और

एक अधेरे कमरे म प्रविष्ट हुआ। लेकिन तभी उसे एक नौकर के गाने की आवाज अपनी ओर आती सुनाई दी। नूरू एक दम सटकर दीवार के साथ खडा हो गया। नौकर अन्दर आया। नूरू का कलेजा धडकने लगा लेकिन नौकर ने बिजली का बटन नही दबाया। कोई चीज उठाकर वह फिर बाहर चला गया। नूरू फौरन दूसरे दरवाजे से होकर मकान के भीतर जा घुसा। यहाँ एक गली सी थी जिसके साथ साथ सीढियाँ ऊपर नीचे जाती थी। फर्श लकडी का था और चिरचिर करता था। लेकिन नूरू हल्के कदमो स ऊपरवाली सीढियो पर जा चढा। फिर अपने हाथो की मदद से जगले पर जोर डालकर तीन छलागो म तीसरी छत पर जा पहुचा। एक मजिल बाकी थी वह भी चढ गया। उसने जाच लिया कि इस मजिल पर कोई नही रहता। आश्वस्त होकर वह सीढियो पर बठकर दम लेने लगा।

सीढियो के दायें बायें के दरवाजो म चन्द्रमा का प्रकाश छलककर अन्दर आ रहा था। इसकी सहायता से नूरू ने अपरिचित घर के दायें बायें नजर फेरी। सब सुनसान था। नूरू को अपना वहा होना बहुत ही विचित्र सा लगा।

उसका मन चुटकियां लेने लगा। मैं क्यो यहाँ आया हूँ। इसलिए कि मैं रह नही सका। मुझे दूसरे के घरो के वह हिस्से देखने की लत पड गई है जिन्हें वह स्वय नहीं देखते। धन खर्च करते हैं मकान बनवाते हैं फिर उन्ह भूल जाते है। सुबह उठे काम पर चले गए रात को लौट चिटखनियाँ चढाकर सो गये। कभी इस तरह सीढियो पर बठकर उन्होने चन्द्रमा नही देखा। वास्तव म मकानो का स्वामी तो म हूँ। मैं पास आते ही उनकी दीवारो से मित्रता पदा कर लेता हूँ। मैं उनकी छातियाँ चीरकर चला जाता हूँ और वह मुझे याद करती रहती हैं।

एक सफेद बिल्ली किसी कोने स निकली और उस देखकर भाग गई। नूरू भी सटक गया। फिर हसने लगा। खुदावन्द ने उसे गरूर की सजा दी।

नौकर अब सो गय होगे यह अनुमान करके नूरू उठा और शनै शन निचली छत पर उतर आया। वह उसने एक किवाड को धकेला और दाखिल हुआ। चन्द्रमा की रोशनी कमरे के अन्दर आ रही थी। कमरा खाली था। दीवार के साथ एक मेज पर कुछ बोतलें पडी थी और बाकी कमरा भी एक बड स मज और कुर्सियो से पूर्ण था। नूरू ने एक बोतल खोली और नाक से लगाई। फिर गटागट पाँच दस घूँट पी गया। इसके बाद वह कुर्सियो स बचता हुआ सायवाले कमरे म पहुचा। यह भी खाली था। क्या सारा मकान खाली था?

इस कमरे के एक तरफ मेज पर कुछ वस्तुएँ पडी थी। नजदीक आने पर मालूम हुआ कि यह तन की बोतलें व कघी बुरुश इत्यादि हैं। नूरू ने दराज खोलकर देखा। यहाँ उसे सोने की चार चूडियाँ और दो अगूठियाँ मिली। नूरू ने इसे बहुत ही अच्छा सगुन समझा। उसकी भावी पत्नी के लिए जेवरो का इतजाम भी सहज ही म हो गया। उन्ह जेब म डालकर उसने दराजो को फिर टटोला लेकिन और कुछ न मिला। वापस लौटते वक्त उसने देखा कि उसकी टाँग कुछ न कुछ लडखडा रही हैं। वह अनुभव करने कि शराब अब भी ठीक वही वस्तु है जो आठ बरस पहले थी उसे

प्रसन्नता हुई इसलिये उसने पहले कमरे में वापस आकर बाकी बोतल भी समाप्त की। अब उसे ख्याल आया कि दुलहिन के लिए जेवर तो ले लिये, लेकिन अगर तेल कंघी और शीशा भी ले चलूं तो क्या हर्ज है। जमाना बदल रहा है। मुझे भी अपने विचार बदलने चाहिएँ। मैं अपनी दुलहिन को वेश्याओं में भी सुन्दर बनाकर रखूंगा और वह किसी दूसरे मर्द की ओर देखेगी भी नहीं। केवल मुझे प्यार करेगी।

अब निधड़क होकर उसने बिजली का बटन दबा दिया। रोशनी ने उसकी आंखों को चुंधिया दिया। उसने देखा कि दीवारों से सटी हुई दो-तीन आल्मारियाँ भी हैं। वह रुकता रुकता उनके पास पहुंचा और किवाड़ खोल दिये। देखा कि आल्मारियाँ सिल्क और ऊन के मुलायम कपड़ों से लदी पड़ी हैं और उनमें अत्याकर्षक गन्ध आ रही है। उसने कपड़े फर्श पर फेंककर गुच्छ कर दिये। फिर कंघी शीशा लेने ड्रेसिंग टेबिल पर पहुंचा। शीशियों के बीच में एक चांदी की छोटी सी अति सुन्दर, काश्मीरी सुर्मादानी पर उसकी आंख पड़ी। उसका दिल बाग-बाग हो गया। अगर दुलहिन सजी धजी होनी चाहिए तो दूल्हा का शृंगार भी तो लाजिम है। कपड़ों के ढेर के दरमियान आईना अपने सामने रखकर वह बैठ गया और लगा आंखों में सलाई फेरने।

दूर से पहरेदार की आवाज उसके कानों पर पड़ी 'खबरदार! खबरदार हो ए!' यह दूर की बड़ी सुरीली लगी विशेष कर 'हो ए' वाला हिस्सा, जैसे पहरेदार ने केवल उसी के मनोरंजन के लिए निकाली हो बड़े आराम से उसने अपने नैनों में सुरमा डाला और कोशिश की कि आंखों में ही पड़े।

पहरेदार की फिर आवाज आई।

खबरदार हो ए?

नूरू को फिर बहुत आनन्द आया। बच्चों की तरह नकल उतारकर उसने भी ऊँचे स्वर में पुकारा

खबरदार! खबरदार हो ए?

मुहल्ले का पहरेदार इस प्रतिध्वनि को सुनकर बहुत सन्तुष्ट हुआ। कलाविदों को कलाविदों का अभिनन्दन पाकर प्रोत्साहन मिलता है। उसने लट्ठ किसी दीवार के साथ पटककर एक नये ढंग से ललकारा

हट हट अहहहहह खबरदार हो ए?'

इधर से भी प्रतिध्वनि हुई

हट हट अहहहहहहह खबरदार हो ए'

लेकिन साथ ही एक दारुण चीत्कार भी उठा। वजीर-माल साहब के बंगले से घबराई हुई आवाजें आनी शुरू हो गईं। पहरेदार भागा और फूल में छुप हुये काँटे की तलाश में, फाटक कूदकर मकान के अन्दर घुसा। घुसते ही उसने एक फायर बन्दूक का आकाश में किया। निचली छत पर वजीर साहब और उनका कुटुम्ब बरामदे में खड़ा कांप रहा था। ऊपर से लगातार आवाजें आ रही थीं

हट हट अहहहहह खबरदार हो ए'

हट हट अहहहहह खबरदार हो ए?

सौ मील की दौड़

बलवन्त गार्गी, १९१६

पंजाबी में बलवंत गार्गी की प्रतिष्ठा पहले एक नाटककार के रूप में बनी और अब उन्हें पंजाबी का प्रमुख कहानीकार भी स्वीकार किया जाता है। हिंदुस्तान टाइम्ज द्वारा आयोजित सार्वभाषिक कहानी प्रतियोगिता में इस संग्रह में संगृहीत कहानी 'सौ मील की दौड़' पुरस्कृत हो चुकी है।

गार्गी ने भारतीय रंगमंच की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण काम किया है। अपनी बहुचर्चित कृति 'रंगमंच' पर उन्हें साहित्य अकादमी का पुरस्कार भी प्राप्त हो चुका है।

हम सोच रहा रहा था कि एक दिन में ही सभी गांवों को कैसे सूचना भेजी जाय कि कल शाम को जिला किसान कमेटी की मीटिंग हो रही है। न कोई तार घर, न टेलीफोन, न मोटर और न लारी। समीपवर्ती गांवों को कोई सड़क भी तो नहीं जाती थी—बस चारों ओर जंगल, रेत और टीले थे।

एक कच्चे कोठे में, जहां रात के समय लंगड़ा हारमोनियम मास्टर नंदलाल रहता था और जो दिन के समय जिला किसान कमेटी का दफ्तर बन जाता था, हम सब दस बारह आदमी बैठे हुए सलाह-मशविरा कर रहे थे कि इस आकस्मिक मीटिंग की सूचना सभी गांवों में कैसे भेजी जाय।

मेरे चारों ओर घनी, कड़ी दाढ़ियों वाले जाट रंग-बिरंगे साफे बांधे जोर-जोर से बातें कर रहे थे। वह तरह-तरह की रायें दे रहे थे। एक कोलाहल-सा मचा हुआ था। किसी को काम की बात सूझती नहीं थी।

सहसा एक धीमे-से स्वर ने हमें चौंका दिया— "जी, मुझे दो यह पर्चियां, मैं पहुंचा

आता हूँ मिनटा म ।'

बास-बाइस वष का एक युवक, जिसकी मसें भीग रही था, सामन खडा था—धूप और वर्षा स मटियाला कुत्ता, और पैबद लगा गाजर रग का जाँघिया ।

मैंने उसकी आर देखा और पूछा— तू किस गाव म पकडा आयगा ?

'जी सभी गावो म द आऊँगा ।"

सभी गावो म ? तुझे पता है कि हमारी मीटिंग कल शाम को है ?

हा मुझे पता है !" उसने कहा—'रात ही रात चक्कर लगा आऊगा । कौन सा समय लगना है ! मुश्किल स दस-बारह ही तो गाँव हैं—साठ काम म ऊपर फासला तो होगा नही ।

मैंने उसकी ओर पुन देखा । उसके होठ मोट मोट थे और उन पर सुरमई रग की मसें भीग रही था घोड का आखा जसी उसकी आखें निरछी तिरछी जग नग लोह जसा रग ऊँची गदन पीते जसा पतला पेट और हाथ जसे घुटा । उसकी उभरी हुई पिण्डलिया और जाघो पर कोई बाल नही था माटनियाँ खुदी हुई था । साठ काम का फासला यह कुछ ही घटा म कम तय कर लेगा ? इसको पता भी है या नही कि यह क्या कह रहा है ।

इतने म बूढा इन्द्रसिंह बोला—'यह तो अपना बूटासिंह है—भागू गाव का । आपको पता नही ? सौ मील दौड लना है यह ता !'

सौ मील!

हा सौ मील ! दौडता क्या है बस हवा को फाकता है ।

मुझे बडा अचरज लगा । सौ मील ! भला यह भी कोई मानन वाली बात है ।

इन्द्रसिंह न मुझसे पूछा— आपन इसस पहले कभी नही सुना बूटासिंह का नाम ?

"कभी नही !

'ना बूटासिंह की यह बात तो सभी जगह मशहूर है ! इन्द्रसिंह ने कहना शुरू किया— यह मेरे गाँव का है—सती का पुत्र ! इसका बाप चम्बा जागीरदार क खेत का रखवाला था । बूटा उसी खेत म जन्मा । खेत के किनारे फूस की एक छोटा सी झोपडा म ही सारा कुटुम्ब रहता था । चम्बा फसल को मही और जगली जानवरा से बचाने के लिए रातो को खेतो की रखवाली करता था । एक रात का जब कोहरा जम रहा था उसको ठड लग गई और तीन चार दिना क ज्वर क बाद वह मर गया । इसक बाद सती अपन पुत्र क साथ खेत म ही रहने लगी । बूटे की बाल्यावस्था नहिया गाल्डा और जगली जानवरा के पीछे भागते हुए गुजरी । वह जागीरदार क बछडा क पीछे दौडता और उनस आग निकल जाता । घोडा और ऊँटा क पीछे दौडता-दौडता बूटा जवान हुआ । मेही अधिक से अधिक चार काम दौड सकती है घोडा आठ कोस घोडा चालीस और तज स तज ऊँटनी पचास कोस स अधिक नही पर बूटा सौ मील दौड सकता है—एक ही सास म !

इन्द्रसिंह न सभी पर्चिया बूटे को दे दी और सभी गाँवा का नाम और पता ठिकाना बता कर उससे कहा—'बूटा यह पर्चिया सब गावा म बाँट आ । जा मर बहादुर

शेर ! हवा हो जा।

दूसरे दिन बारह के बारह गाँवों के सकत्तर (सेक्रेटरी) नाम को एन वक्त पर मीटिंग के लिए पहुंच गए। मैंने सबसे बारी बारी से पूछा, आपके पास सन्देश लेकर कौन गया था ?

सबने एक स्वर में उत्तर दिया—बूटासिंह।

मीटिंग के पश्चात् मैं बूटासिंह से मिला। लालचन्द वकील जिसने मुजारों के कई मुकद्दमे बगैर फीस के लड़े थे हेडमास्टर नत्थूराम जो अपने जमाने में क्रिकेट का बहुत अच्छा खिलाड़ी था अजमेरसिंह रिटायर्ड जज और कस्बे के तीन चार अन्य सम्मानित व्यक्ति इकट्ठे हो गये और बूटासिंह के साथ बातें करने लगे। हम उसकी स्फूर्ति और शक्ति पर विस्मित खड़े थे और हमें इस बात का दुख हो रहा था कि इतने आश्चर्यजनक दौड़ने वाले को इस गाँव से बाहर कोई नहीं जानता था।

आखिर जज ने सोचकर कहा— अगर बूटा सौ मील दौड़ सकता है तो दुनिया भर की शोहरत हासिल करने में इसको कोई ताकत रोक नहीं सकती।

एक बूढ़े हवलदार ने कहा— 'महाराजा पटियाला क्रिकेट और खेलों के बड़े शौकीन है। उनकी फौज में मामूली आदमी जो थोड़ा-सा अच्छा खिलाड़ी था, अब कप्तान या मेजर बन गया है। अगर हम किसी तरह बूटासिंह की बात उनके कानों में पहुंचा दें तो वह जरूर बूटासिंह को विलायत भेज देंगे।

एक चालाक अर्जीनवीस बोला— किसी ने देखा भी है बूटा को सौ मील दौड़ते हुए कि सभी सुनी-सुनाई बातों पर हवाई किले खड़े कर रहे हो ?"

हेडमास्टर ने राय दी— क्या न पहले यहीं इसकी दौड़ करवा लें। इससे नाम कुछ रुपये भी इकट्ठे हो जायेंगे। बड़े खेत का घेरा पूरे चार सौ गज है। अगर बूटा इसके चार सौ चक्कर लगा ले तो सौ मील हो जायेंगे। इसके बाद ही इसके भविष्य के बारे में सोच विचार सकते हैं।

यह राय सभी को पसन्द आयी।

मैंने बूटे से बड़े खेत में दौड़ने के बारे में पूछा। उसने अपनी आँखें झपकी और केवल इतना कहा— जैसा आप कहें।'

माझू महतर ने सब गाँवों में डुग्गी पीट दी और एलान कर दिया— इतवार को सुबह सात बजे बूटासिंह की सौ मील दौड़ होगी। गाँव के सभी लोग बड़े खेत में यह सब देखने के लिए आयें डम डम डम।

रविवार को प्रातः छः बजे खेत में बूटासिंह की दौड़ के लिए तहसील के चपरासी ने चूने से दौड़ने वाली जगह पर निशान लगा दिया। बूटे ने जाँघिया और मटियाले रंग का कुर्ता पहना हुआ था। सिर पर लम्बे बालों वाला का जूड़ा करके उसने धारीदार कमरा रूमाल लपेट लिया था।

सात बजे हेडमास्टर नत्थूराम ने, जो रेफरी बनकर खड़ा था सीटी बजाई और बूटे ने दौड़ना शुरू किया।

साढ़े आठ बजे तक हम खड़े रहे। नत्थूराम हेडमास्टर बड़ा हुआ बूटे को दौड़ता

देखता रहा। बूटा एक साम, एक रफ्तार में मुंह बन्द किये मशीन की तरह खेत के चारों ओर दौड़ रहा था। स्त्रियां घास और खेत की मेड़ पर बैठ गई। वे विवाह-शादी और सगे-सम्बन्धियों की चुगलियां करती रहीं और बूटासिंह को लट्टू की भांति घूमते देखती रहीं।

शाम तक वह इसी प्रकार दौड़ता रहा। साढ़े छः बजे ही (निश्चित समय से आधा घंटा पूर्व ही) उसने खेत के चार सौ चक्कर पूरे कर दिये। सूरज की डूबती हुई लालिमा में बूटे के बिखरे बालों की लटें रक्तिम पत्तों की भांति लगती थीं। उसकी छाती धौंकनी की तरह चल रही थी और उसके इस्पात जैसे शरीर पर पसीने की धारा बह रही थी।

जब उसने दौड़ खत्म की तो लोगों ने नारों से उसका स्वागत किया और उसको कंधों पर उठा कर सारे गांव में उसका जुलूस निकाला। बूटे ने सब लोगों के आगे हाथ जोड़ कर कहा—'यह सब वाहगुरु की कृपा है। उसकी मेहर हड्डियों में दौड़ रही है। इसी कारण मैं सौ मील दौड़ सका हूं। अगर कहीं मुझे एक बार कोई लण्डन भेज दे तो मैं दौड़ में पिछला रिकार्ड तोड़ दूंगा।'

हमने बूटे की खबर उर्दू और पंजाबी के अखबारों में भेज दी और महाराजा पटियाला से उसकी भेंट करवाने के तरीके विचारने लगे।

एक दिन बूटासिंह ने कहा—'मेरा एक रिश्तेदार फरीदकोट में ड्योढ़ी अफसर है। उसकी महाराजा तक बहुत पहुंच है। अगर मैं उसके पास जाऊं तो वह मुझे जरूर महाराजा साहब से मिला देगा। फिर शायद कोई राह निकल आये।

एक सप्ताह बाद बूटा उस आदमी से मिलने फरीदकोट चला गया।

इसके बाद मुझे पता लगा कि बूटा पटियाला चला गया है। कई लोगों की चिट्ठियां लेकर और कइयों से मिलते-जुलते अन्त में वह महाराजा साहब के ए० डी० सी० तक पहुंच गया जिसने बूटे को महाराजा साहब से जल्द से जल्द मुलाकात करवाने का वायदा किया।

इसके पश्चात् बहुत सी घटनाएं हुई। मैं लाहौर अपने काम में व्यस्त रहा, इस लिए काफी समय तक गांव न आ सका। फिर फसाद फूट पड़े देश का विभाजन हुआ और मैं दिल्ली आ गया। इसके बाद बूटे की काफी अर्से तक कोई सूचना नहीं मिली।

१९४८ की बात है। सरदार पटेल रियासतों के महाराजाओं को भारत की यूनियन में सम्मिलित करने के लिए देश का दौरा कर रहे थे। मैं उस दिन पटियाला में था। बहुत लम्बा जुलूस था। सरदार पटेल और महाराजा साहब चांदी की बग्घी में साथ साथ बैठे हुए थे। भीड़ में एक स्थान पर मैंने बूटासिंह को भी खड़े हुए देखा।

जब सरदार पटेल की सवारी गुजर गयी तो मैं बूटे से मिला और पूछा कि उसकी महाराजा से मुलाकात का क्या हुआ?

उसने उत्तर दिया— इस समय तो सरदार पटेल दिल्ली से आये हुए हैं। महाराजा और बाकी सभी अहलकार व्यस्त हैं। जब महाराजा को अवकाश मिलेगा तो वे मुझे मिलने का अवसर देंगे।

उसको पटियाला में काफी समय प्रतीक्षा करनी पड़ी। हर वक्त कोई न कोई जरूरी काम महाराजा साहब को घेरे रहता था। महाराजा के ए० डी० सी० ने बूटे से कहा कि बार बार गाँव से आने-जाने की आवश्यकता नहीं। अच्छा है कि वह पटियाला में कोई छोटी मोटी नौकरी कर ले। पहली फुरसत में उसकी महाराजा साहब से मुलाकात करवा दी जायगी और फिर वह अन्तर्राष्ट्रीय रेस में भेज दिया जायगा। यह बात बूटे को जँच गयी और वह सरकार के सम्मानित मेहमान के तौर पर नौकरी करने लगा।

कई बार वह बैठा-बैठा ऊबने जाता तो बाजार या समीपवर्ती मण्डी का चक्कर लगाने चला जाता और कई-कई घण्टे घूमने फिरने के पश्चात् लौटता। एक दिन वह पशुओं की मण्डी में जा घुसा और शाम को लौटा। सारा दिन ड्यूटी से अनुपस्थित रहने के कारण लस्सी-खाने के अफसर तक उसकी शिकायत पहुँच गयी और इससे बड़े अफसरों तक भी बात पहुँच गयी। बूटे की पेशी हुई। उस पर खूब फटकार पड़ी और चेतावनी दी गयी कि यदि भविष्य में वह बिना बताये अपनी ड्यूटी छोड़कर कहीं गया तो उसको नौकरी से जवाब मिल जायगा। यदि इस प्रकार वह नौकरी से निकाल दिया गया तो उसके नाम पर धब्बा लग जायगा और उसको कभी भी अन्तर्राष्ट्रीय रेसों की दौड़ों के मुकाबले में नहीं भेजा जायगा।

इस दुर्घटना से बूटा सहम गया और ड्यूटी पर फुर्ती से हाजिर रहने लगा।

एक वर्ष के उपरान्त मुझे एक मुकदमे में गवाही देने के लिए पटियाला जाना पड़ा। सारा दिन कचहरी भुगता कर थका-हारा जब मैं किसी ताँगे या रिक्शा की प्रतीक्षा में खड़ा था तो सामने से धीरे धीरे एक रिक्शा आता दिखाई दिया। उसके साथ-साथ छड़ी टेकती हुई एक बुढ़िया चली आ रही थी। जब रिक्शा निकट आया तो मैंने उसमें बैठे हुए बूटासिंह को पहचान लिया।

सुना भई बूटासिंह! क्या हाल है तुम्हारा? मैंने पूछा।

बस जी वाहेगुरु की कृपा है। महाराजा साहब गर्मी के कारण बाहर गये हुए हैं। जब लौटेंगे तो उनसे मेरी मुलाकात होगी। मेरा नाम सब से ऊपर है बस पहला नाम मेरा है मुझे पता लगा है कि असूज में दौड़ने वालों की एक टीम लन्दन जा रही है। पूरी उम्मीद है महाराजा साहब मुझे अवश्य चुनेंगे और भेज देंगे। मैंने उसकी ओर देखा और पूछा कि वह रिक्शा में क्यों बैठा है।

बुढ़िया ने दीर्घ निश्वास छोड़ते हुए कहा—'अरे बेटा! मेरा बूटा तो आजाद पंछी था। यहाँ इस लकड़ी के स्टूल पर बाँधकर बैठा दिया गया है। इसकी टाँगों में तो बिजली थी बिजली! इस तरह बैठे-बैठे इसकी जाँघों और पिण्डलियों का लहू घुटनों में इकट्ठा हो गया है। देख तो तनिक इसके घुटने कैसे सूजे हुए हैं। हाय री दया!

मैंने बूटे की ओर देखा। उसके ढाल जैसे घुटने अब उपलों की तरह फूले हुए थे। उसको इस प्रकार रिक्शे में एक अपाहिज की भाँति बैठे हुए देख कर मेरे कलेजे में एक कसक सी उठी।

रिक्शा धीरे धीरे चलता हुआ आगे बढ़ गया। मैं तब तक वहीं खड़ा माँ बेटे को देखता रहा जब तक वे दोनों दूर—सड़क के मोड़ को घूमकर मेरी आँखों से ओझल न हो गये।

लिखतुम लाजवन्ती

करतारसिंह दुग्गल, १९१७

पंजाबी कहानीकारों में दुग्गल अखिल भारतीय ख्याति के लेखक हैं। पंजाबी लेखकों में उन्होंने सबसे अधिक कहानियाँ लिखी हैं और वस्तु तथा शिल्प की दृष्टि से सबसे अधिक प्रयोग किये हैं।

'सवेर सार', 'पिप्पल पत्तियां' और 'कुड़ी कहाणी करदी गई' दुग्गल के पहले दौर के कहानी-संग्रह हैं। 'अग खाण वाले', 'नवा घर' और 'नवां आदमी' दूसरे दौर के। 'अग खाण वाले' संग्रह की सभी कहानियाँ देश के विभाजन से सम्बन्धित हैं और गहरी मानवीय पीड़ा में उत्पन्न सफल कहानियाँ हैं। तीसरे दौर में 'करामात', 'गोजर' और 'पारे मेरे', 'इक छिट चानण दी' आदि कुछ कहानी-संग्रह प्रकाशित हुए हैं। 'मानिमा वाले' शीर्षक से दुग्गल का एक कहानी-संग्रह हिन्दी में भी प्रकाशित हो चुका है।

सन् १९६५ का साहित्य अकादमी पुरस्कार दुग्गल को उनके नवीनतम कहानी-संग्रह 'इक छिट चानण दी' पर प्राप्त हुआ था।

संग्रहीत कहानी लेखक की बहुप्रशंसित कहानी है।

'भज्ज न मुत्ती कन्त सिउँ अग मुढे मुढि जाइ।'

भाईजी ने अपनी फटी हुई आवाज में फरीदजी के श्लोक की पहली पंक्ति अलापी। फिर आँखें बन्द कर लीं और फिर उसको दोहराया। तीसरी बार फिर गाया एक नए स्वर में, एक नए सुर में।

उसका पटियाला में काफी समय प्रतीक्षा करनी पड़ी। हर वक्त कोई न कोई जरूरी काम महाराजा साहब को घर रहता था। महाराजा के ए० डी० सी० ने बूटे से कहा कि बार बार गाँव से आने-जाने की अपेक्षा यही अच्छा है कि वह पटियाला में कोई छोटी मोटी नौकरी कर ले। पहला फुरसत में उसकी महाराजा साहब से मुलाकात करवा दी जायगा और फिर वह अन्तर्राष्ट्रीय सेना में भेज दिया जायगा। यह बात बूटे को जच गयी और वह सरकार के सम्मीभवन में दरवान के तौर पर नौकरी करने लगा।

कई बार वह बैठा-बैठा ऊबता जाता तो बाजार या समीपवर्ती मण्डी का चक्कर लगाने चला जाता और कई-कई घण्टे घूमने फिरने के पश्चात लौटता। एक दिन वह पशुओं की मण्डी में जा घुसा और शाम को लौटा। सारा दिन ड्यूटी से अनुपस्थित रहने के कारण नस्सी साले के अफसर तक उसकी शिकायत पहुँच गयी और उसके बाद बड़े अफसरों तक भी बात पहुँच गयी। बूटे की पेशी हुई। उस पर खूब फटकार पड़ी और चेतावनी दी गयी कि यदि भविष्य में वह बिना बताये अपनी ड्यूटी छोड़कर चला गया तो उसको नौकरी से जवाब मिल जायगा। यदि इस प्रकार वह नौकरी से निकाल दिया गया तो उसके नाम को धब्बा लग जायगा और उसको कभी भी अन्तर्राष्ट्रीय दंगों की दौड़ के मुकाबले में नहीं भेजा जायगा।

इस दुर्घटना से बूटा सहम गया और ड्यूटी पर फुर्ती से हाजिर रहने लगा।

एक वर्ष के उपरान्त मुझे एक मुकदमे में गवाही देने के लिए पटियाला जाना पड़ा। सारा दिन कचहरी भुगता कर थका-हारा जब मैं किसी ताँगे या रिक्शा की प्रतीक्षा में खड़ा था तो सामने से धीरे धीरे एक रिक्शा आता दिखाई दिया। उसके साथ साथ छड़ी टेकती हुई एक बुढ़िया चली आ रही थी। जब रिक्शा निकट आया तो मैंने उसमें बैठे हुए बूटासिंह को पहचान लिया।

सुना भई बूटासिंह! क्या हाल है तुम्हारा? मैंने पूछा।

बस जी वाहगुरु की कृपा है। महाराजा साहब गर्मी के कारण बाहर गये हुए हैं। जब लौटेंगे तो उनसे मेरी मुलाकात होगी। मेरा नाम सब से ऊपर है बस पहला नाम मेरा है मुझे पता लगा है कि अमूज में दौड़ने वालों की एक टीम लण्डन जा रही है। पूरी उम्मीद है महाराजा साहब मुझे अवश्य चुनेंगे और भेज देंगे। मैंने उसकी ओर देखा और पूछा कि वह रिक्शा में क्यों बैठा है।

बूढ़ी ने दीर्घ निश्वास छोड़ते हुए कहा— अरे बेटा। मेरा बूटा तो आजाद पंछी था। यहाँ इस लकड़ी के स्टूल पर बाँधकर बैठा दिया गया है। इसकी टाँगों में तो बिजली थी बिजली! इस तरह बैठे-बैठे इसकी जाँघों और पिण्डलियों का लहू घुटनों में इकट्ठा हो गया है। देख तो तनिक इसके घुटने कैसे सूजे हुए हैं। हायरी दया!

मैंने बूटे की ओर देखा। उसके ढोल जैसे घुटने अब उपलों की तरह फूल हुए थे। उसको इस प्रकार रिक्शे में एक अपाहिज की भाँति बैठे हुए देख कर मेरे कलेजे में एक कसक-सी उठी।

रिक्शा धीरे धीरे चलता हुआ आगे बढ़ गया। मैं तब तक वहीं खड़ा माँ बेटे को देखता रहा जब तक वे दोनों दूर—सड़क के मोड़ को घूमकर मेरी आँखों से ओझल न हो गये।

लिखतुम लाजवन्ती

करतारसिंह दुग्गल, १९१७

पजावी कहानीकार मे दुग्गल अखिल भारतीय ख्याति क लेखक हैं। पजाबी लेखकों मे उन्होन सबस अधिक कहानिया लिखी हैं और वस्तु तथा शिल्प की दृष्टि से सबस अधिक प्रयाग किय हैं।

सवर सार पिप्पल पत्तिया और कुडी कहाणी करदी गई दुग्गल के पहले दौर के कहानी-सग्रह है। अग लाग वाले नवा घर और नवा आदमी दूसरे दौर के। अग लाग वाले' सग्रह की सभी कहानिया देश के विभाजन म सम्बधित हैं और गहरी मानवीय पीडा म उत्पन्न सफल कहानियां हैं। तीसरे दौर म करामात' गाजर और 'पारे मरे इक छिट चानण दी आदि कुछ कहानी-सग्रह प्रकाशित हुए हैं। मोतिया वाले शीपक म दुग्गल का एक कहानी-सग्रह हिन्दी म भी प्रकाशित हो चुका है।

सन् १९६५ का साहित्य अकादमी पुरस्कार दुग्गल का उनक नवीनतम कहानी-सग्रह इक छिट चानण दी पर प्राप्त हुआ था।

प्रस्तुत कहानी लेखक की बहुप्रशसित कहानी है।

'अज्ज न सुत्ती कन्त सिउं अग मुड मुडि जाइ।'

भाईजी न अपनी फटी हुई आवाज म फरीदजी क दाहर का पहला पद सुनाया। फिर आँखें बद कर लीं और फिर उसको दोहराया। तीसरी बार फिर गाया एक नए म, एक सुर म।

उसको पटियाला में काफी समय प्रतीक्षा करनी पड़ी। हर वक्त कोई न कोई जरूरी काम महाराजा साहब को घेरे रहता था। महाराजा के ए० डी० सी० ने बूटे से कहा कि बार बार गाँव से आने-जाने की अपेक्षा यही अच्छा है कि वह पटियाला में कोई छोटी मोटी नौकरी कर ले। पहली फुरसत में उसकी महाराजा साहब से मुलाकात करवा दी जायगी और फिर वह अंतर्राष्ट्रीय मेले में भेज दिया जायगा। यह बात बूटे को जँच गयी और वह सरकार के लस्सीखाने में दरबान के तौर पर नौकरी करने लगा।

कई बार वह बैठा-बैठा उकता जाता तो बाजार या समीपवर्ती मण्डी का चक्कर लगाने चला जाता और कई-कई घण्टे घूमने फिरने के पश्चात लौटता। एक दिन वह पशुओं की मण्डी में जा घुसा और शाम को लौटा। सारा दिन ड्यूटी से अनुपस्थित रहने के कारण लस्सीखाने के अफसर तक उसकी शिकायत पहुँच गयी और इससे बड़े अफसरों तक भी बात पहुँच गयी। बूटे की पेशी हुई। उस पर खूब फटकार पड़ी और चेतावनी दी गयी कि यदि भविष्य में वह बिना बताये अपनी ड्यूटी छोड़कर कहीं गया तो उसको नौकरी से जवाब मिल जायगा। यदि इस प्रकार वह नौकरी से निकाल दिया गया तो उसके नाम को धब्बा लग जायगा और उसको कभी भी अंतर्राष्ट्रीय दौड़ों के मुकाबले में नहीं भेजा जायगा।

इस दुर्घटना से बूटा सहम गया और ड्यूटी पर फुर्ती से हाजिर रहने लगा।

एक वर्ष के उपरांत मुझे एक मुकदमे में गवाही देने के लिए पटियाला जाना पड़ा। सारा दिन कचहरी भुगता कर थका हारा जब मैं किसी तांगे या रिक्शा की प्रतीक्षा में खड़ा था तो सामने से धीरे धीरे एक रिक्शा आता दिखाई दिया। उसके साथ साथ छड़ी टेकती हुई एक बुढ़िया चली आ रही थी। जब रिक्शा निकट आया तो मैंने उसमें बैठे हुए बूटासिंह को पहचान लिया।

सुना भई बूटासिंह! क्या हाल है तुम्हारा? मैंने पूछा।

बस जी वाहेगुरु की कृपा है। महाराजा साहब गर्मी के कारण बाहर गये हुए हैं। जब लौटेंगे तो उनसे मेरी मुलाकात होगी। मेरा नाम सब से ऊपर है बस पहला नाम मेरा है मुझे पता लगा है कि असूज में दौड़ने वालों की एक टीम लन्दन जा रही है। पूरी उम्मीद है महाराजा साहब मुझे अवश्य चुनेंगे और भेज देंगे। मैंने उसकी ओर देखा और पूछा कि वह रिक्शा में क्यों बैठा है।

बूढ़ी ने दीर्घ निश्वास छोड़ते हुए कहा— अरे बेटा! मेरा बूटा तो आजाद पंछी था। यहाँ इसे लकड़ी के स्टूल पर बाँधकर बैठा दिया गया है। इसकी टाँगों में तो बिजली थी बिजली! इस तरह बैठे-बैठे इसकी जाँघों और पिण्डलियों का लहू घुटनों में इकट्ठा हो गया है। देख तो तनिक इसके घुटने कैसे सूजे हुए हैं। हाय री दया!

मैंने बूटे की ओर देखा। उसके ढोल जैसे घुटने अब उपलों की तरह फूले हुए थे। उसको इस प्रकार रिक्शे में एक अपाहिज की भाँति बैठे हुए देख कर मेरे कलेजे में एक कसक-सी उठी।

रिक्शा धीरे धीरे चलता हुआ आगे बढ़ गया। मैं तब तक वहीं खड़ा माँ बेटे को देखता रहा जब तक वे दोनों दूर—सड़क के मोड़ को घूमकर मेरी आँखों से ओझल न हो गये।

लिखतुम लाजवन्ती
करतारसिंह दुग्गल, १९१७

पंजाबी कहानीकारों में दुग्गल अखिल भारतीय ख्याति के लेखक हैं। पंजाबी लेखकों में उन्होंने सबसे अधिक कहानियां लिखी हैं और वस्तु तथा शिल्प की दृष्टि से सबसे अधिक प्रयोग किये हैं।

'सवेर सार', 'पिप्पल पत्तियां' और 'कुड़ी कहाणी करदी गई' दुग्गल के पहले दौर के कहानी-संग्रह हैं। 'अग खाण वाले', 'नवां घर' और 'नवां आदमी' दूसरे दौर के। 'अग खाण वाले' संग्रह की सभी कहानियां देश के विभाजन से सम्बन्धित हैं और गहरी मानवीय पीड़ा से उत्पन्न सफल कहानियां हैं। तीसरे दौर में 'करामात', 'गाजर' और 'पारे मेरे', 'इक छिट चानण दी' आदि कुछ कहानी-संग्रह प्रकाशित हुए हैं। 'मोतियों वाले' शीर्षक से दुग्गल का एक कहानी-संग्रह हिन्दी में भी प्रकाशित हो चुका है।

सन् १९६५ का साहित्य अकादमी पुरस्कार दुग्गल को उनके नवीनतम कहानी-संग्रह 'इक छिट चानण दी' पर प्राप्त हुआ था।

संग्रहीत कहानी लेखक की बहुप्रशंसित कहानी है।

मन न सुनी कंन मिउ अग मुह मुडि जाइ।

भाईजी ने अपनी फटी हुई आवाज में फरीदजी के दोहे का पहला पद सुनाया। फिर आँखें बन्द कर लीं और फिर उसको दोहराया। तीसरी बार फिर गाया एक नये सुर में एक सन्दर में।

दूर पोह महीनाया की मगर म पाइना पाइ बैठी हुई लाजवन्ती का हृदय जम कर गा गया। पर का एक एक पर र मानो उसके वश म घुस सा गया। उसके जीवन म मनोरंग का अंधारपन म ही काट लिए थे। कभी उसके जीवन म बहार पल न आया। नित्य नियमपूर्वक घर आना, चना गुरुद्वारे आना रहा। मार के मार पाठ बचपन म ही उसको कण्ठस्थ थे। कभी किसी की तरफ उसने आँख उठाकर नहीं देखा। एक म दूसरे कान तक कभी उसकी आवाज नहीं पहुँचा। अपने अंधारेपन को सम्भालते सम्भालते ठुमक-ठुमक उसकी घोड़नियाँ पट पट जाना।

प्रात प्रसून की बेला अभी धुप अन्धेरा होता कि वह उठ जाना, घर झाड़ना बुहा गयी। नहा आकर पाठ भी करती जाती थी और दूध-लस्सी, चूल्हे चौके का काम भी निपटाती जाती थी। वटना म, चौपालों म, आँगना म झाड़-बुहार देती। छोटी मोटी चीजों को चारों तरफ सँवारती-सँभालती। फिर उसके छोटे छोटे भाई-बहन जाग जाते। उनको वह नहलाती-सँवारती। और फिर रोटी-सब्जी के काम म लग जाता। दोपहर म चर्खा लेकर बैठ जाती, कसीदा भी शुरू कर लेना। तीसरे पहर डंगर पशुओं के चारे पानी का प्रबन्ध करती। फिर रात की रोटी-पानी का काम। माने से पहले बच्चों को ऐवपरियों की कहानियाँ और इस तरह पता नहीं कब उसकी आँख लग जाती। ठीक इसी तरह एक मशीन की मानिन्द उसने अपनी पूरी जिन्दगी बिता ली थी।

—अरी लाजो गधिये तू तो भूसी के भाव ही जाएगी। —उसकी सखियाँ उसे चिढ़ाता।

—माँ रांड पैदा किये जाती है और लड़की बेचारी को इन कुकुरमुत्तों का पालन करने म लगा रखती है। —उसकी पास पड़ोस की कुछ बूढ़ाएँ लाजवन्ती को हर वक्त काम म व्यस्त देखकर बड़बड़ा देतीं।

गाँव के जवान छोकरे उसके महनत से कमाय हुए शरीर और अछूते कुमारेपन की आकर्षक स्थूलता से डरते हुए उसको सिंहनी पुकारते थे और बस भी उनमें मशहूर था कि एक बार इसके पीछे पीछे गाँव का एक लड़का इनकी एकान्त हवेली म घुस गया। लाजवन्ती ने हीला किया न दलील, उसको गाय के पगहे म बाँधकर भूसो वाले कोठे पर दे फेंका। तभी से इसके व्यक्तित्व से डरता कोई भी आँख उठाकर इसकी ओर नहीं देखता था।

लाजवन्ती को माता पिता, बहन भाई, पास पड़ोसी, आने जाने वाले, सगे सम्बन्धी सभी भरपूर सत्कार देते थे। कभी किसी को शिकायत करने का अवसर वह न देती थी। न ही कोई उसकी कही हुई बात का विरोध करता। घर म से कुछ निकाल, कुछ डाल, स्याह करे, सफ़ेद करे, सबकी वह मालिक थी।

लाजवन्ती को स्कूल भी भेजा गया था। गाँव का स्कूल असल म गाँव का गुरुद्वारा ही था, जहाँ वह सिर्फ थोड़ा बहुत पढ़ना और टूटे फूटे दो चार अक्षर लिखना ही सीख सकी, इससे ज्यादा नहीं।

लम्बी सी व्याख्या के बाद कि कन्त का अर्थ इस चरण म पति परमेश्वर है और

माने का अभिप्राय है उसकी भक्ति करना, भाई जी ने पुन इस चरण को अपनी फटी हुई आवाज म गाया ।

'अज्ज न सुनी कन्त सिउँ अग मुड मुडि जाइ ।

लाजवन्ती क वश म अन्दर ही अन्दर मानो एक टीस सी उठी । उससे अब गुरुद्वारे म बैठा न रहा गया । आठ-दस स्त्रियो की देहाती सगत क पीछे बैठी वह उठ खडी हुई और धीरे से नि शब्द बाहर निकल गई ।

भाई जी की मदी आख एक निमिष के लिये खुली और फिर पूर्ववत् मुद गई । कथा कहते हुए यदि कभी चिडिया का पख भी फडक जाय तो भाईजी की वृत्ति एकाग्र नही रहती था और फिर लाजवन्ती को तो उन्होने पढाया था, इस तरह की अशिष्टता वह कभी नही कर सकती थी । उसको यह मालूम था कि जब तक भोग न लग जाय समाप्ति न हो जाय, गुरु का कोई भी सिक्ख गुरुवाणी का निरादर नही कर सकता । लाजवन्ती ने फरीद जी के श्लोक का केवल एक ही चरण सुना था, अभी तो भाई साहब का दूसरा चरण पढकर सुनाना था उसकी व्याख्या करनी थी फिर पूरे श्लोक का भावार्थ बतलाना था । फिर उन्हें भूल चूक कमी-बढी के लिये क्षमा माँगनी थी जैसा कि वह रोज ही माँगा करते थे । फिर उन्ह प्रतिदिन की ही तरह शाम का गुर बिलास की कथा का पाठ करवाना था । फिर भोग लगाना था । अरदास होती थी और तब कही एकत्रित लोग अपने अपने घर जा सकते थे ।

न केवल भाई जी एकत्र सगत का भी लाजवन्ती का इस तरह उठकर चला जाना बहुत खटक गया । गाँव के इस गुरुद्वारे म ऐसा कभी कोई भी न करता था ।

—री बहन, आज तेरी लडकी कितनी भरी हुई सगत म से उठकर चली गई है ? एक स्त्री ने लाजवन्ती की माँ से बाहर निकल कर पूछा ।

—कुछ तबीयत ठीक-सी नही है—वृद्धा माँ ने सयानेपन मे बात का खतम कर दिया ।

—री आज लाजो को क्या हो गया ?

—यह अधेर कभी नही देखा था ।

—री अभी कल की छोकरियाँ •

—तोबा तोबा ।

अभी लाजवन्ती की माँ ने जूती पहनी ही थी कि और तीन चार स्त्रियाँ आकर जैसे उससे चिपट गईं । कई बहाने बनाकर, कई झूठ बोलकर बडी-बडी मुश्किलो म वह उनको टाला जा सका ।

—री लाजवन्तोय, आज तुझ पर क्या मूर्खता सवार हो गई थी ? माँ ने सोचा—घर जाकर वह उससे अच्छी तरह इस बारे म पूछेगी । पर अपनी जवान बेटी की सुध डाई को देखकर कुछ कहने का उसका साहस न हुआ ।

कथा कहते हुए भाई जी ने सोचा, अरदास के बाद इस प्रकार सगत म से उठ जाने की अशिष्टता पर वे कुछ बोलेंगे । पर जब समय आया तो वे टाल गये । लाजवन्ती इतने वर्षों म नित्य नियमपूर्वक दोनो वेला गुरुद्वारे आती थी । सारे गाँव भर म सिर्फ एक लाजवन्ती ही थी जिसे 'सुखमनी साहब' पूरा कठस्थ था ।

फिर उन्होंने सोचा जब परशाद रोटी लेने के लिए उनके घर जायेंगे तो लाजवन्ती से खुद ही इस विषय में बात कर लेंगे। उसे समझा लेंगे। पर समय पर परशाद लेकर वह लौट आये उनका साहस न हुआ।

फिर उन्होंने सोचा शाम को रहिरास साहब के पाठ के बाद सही। पर पता नहीं वह कैसे मौका न निकाल सके। वह खुद बड़े हैरान थे।

आखिर उन्होंने निर्णय किया कि कभी किसी गली-कूचे में मिल गई तो शिकायत करेंगे। पर दिन में कई बार वह लाजवन्ती को देखते। वह देखते रहते और वह आँखें झुकाये आगे से गुजर जाती।

कुछ दिनों से भाई जी ऐसा महसूस करते जैसे आँखें मूदकर कथा कहते कहते एक दम उनके नयन कपाट खुल जाते और वे एक नजर में तसल्ली कर लेते कि लाजवन्ती कहीं उठकर तो नहीं चली गई। लाजवन्ती वहाँ बैठी होती तो भाई जी की कथा में एक रस एक स्वाद एक उल्लास चमक उठता।

यह क्या ?

आखिर क्या ?

उसको मैंने पढ़ाया है मैंने खुद सिखाया है।

पर नारी धी भैण बखाणे। (पर स्त्री पुत्री बहन के समान जाने)

मैं ?

मैं पातशाह का हजूरिया उनका चरण सेवक।

भाई साहब गुरुदित्तसिंह ज्ञानी गुरुदित्तसिंह सन्त गुरुदित्तसिंह।

दूसरे दिन भाई साहब ने साबुन से मल मल के दुग्ध सम श्वेत वस्त्र धोकर पहने। कथा कहने की वेला उनकी धवल दाढ़ी कुछ कम बिखरी हुई थी। उच्च स्वर में उनमें बोना ही नहा जा रहा था। अपनी फटी हुई आवाज उनको बहुत खट रही थी मानो उनका अंग अंग आज व्यथित था। उनको एक कमजोरी एक कमी सी महसूस हो रही थी।

जिवें तारिआई जोगासिंघ ताई •

सारी रात बणा के चौकीदार प्रीतम।

(जैसे पार कर दिया जोगासिंह को भी सारी रात बनकर चौकीदार प्रीतम।)

कथा कहते कहते आखिर उन्होंने गिड़गिड़ा कर गाया। उनकी आँखें सजल हो गई।

फिर उन्होंने जोगासिंह का आख्यान सुनाया किस तरह भाई जोगासिंह दशमेश पिता दशम गुरु गोविन्दसिंह की आज्ञा मिलते ही विवाह की भाँवरों पर से उठकर घर से चल दिया था। मार्ग में एक वेश्या के कटाक्ष का शिकार होकर वह दशमगुरु का फरमान भूल गया और लगा चौबारे के नीचे खड़ा होकर प्रतीक्षा करने। रात भर जिस समय भी वह आगे जाने के लिए बढ़ता था चौकीदार आगे से उसको रोक देता था और इसी तरह सवेरा हो गया।

जिवें तारिआई जोगासिंघ ताई हो जोगासिंघ ताई जिवें तारिआई।

अत्यधिक वैराग्य से भरकर भाई जी ने इस चरण को फिर फिर दोहराया।

उनको अपनी फंसी हुई आवाज का ख्याल ही न रहा। उनकी आंखों में से आंसू फूट फूटकर निकलने लगे। उनकी आवाज सजलता से लथपथ हो गई। मजबूरन आज समय से पहले ही उनको भोग लगा देना पड़ा। अरदास करते समय वक्तव्य में कुछ घुमाव जानकर उन्होंने रोकर गिड़गिड़ाकर फरियादें कीं—हम प्रमादी जीव हैं आप ममताशील पिता हैं क्षमा कीजिए वे कर्म कराइए जो आप जी को भले लगें।

असा सन बहुत कमांवदे अन्त न पारावार।

हरि किरपा करके बख्श लओ हम पापी वडि गुनाहगार॥

(हम बहुत दुष्कर्म करते हैं, उनका अंत और पारावार नहीं। हे हरि कृपा करके बख्श दीजे हम पापी और बड़े गुनाहगार हैं।)

जेता समुंद सागर नीर भरिआ, तेते औगण हमारे।

दइआ करो कुछ मिहर उपावो, डुबदे पत्थर तारे॥

(विशाल सागर में जितना जल भरा है उतने ही हमारे अवगुण हैं। दया कीजिए कुछ अनुग्रह कीजिए। आपने डूबते पत्थरों को भी पार लगाया है।)

इस प्रकार अरदास की समाप्ति हुई संगत को आज बड़ा आनन्द मिला। और सब जन अपने अपने घर लौट गए।

परशादियां लेने के लिए आज जब वह लाजवन्ती के घर गए तो एकाकी धूप में बैठी हुई उसकी मां से उन्होंने पूछा—माई आप बच्ची की शादी क्यों नहीं कर देती? मुख से अब तो वह खूब जवान हो गई है।

—हां हां, भाई साहब जी मुझे भी दिन रात इसी की चिंता खाए जाती है। क्या करें कोई अच्छा वर ही नहीं मिलता ढूंढ ढूंढकर थक गए हैं। और इधर लड़कियां हैं दिन में बालिश्त-बालिश्त बढ़ जाती हैं।

लाजवन्ती की मां का उत्तर सुनकर भाई जी चुपचाप वहां से चल दिए। उन्होंने फिर बात न छेड़ी।

परशादियां वह इकट्ठी कर लाए थे पर वापस आकर उनसे कुछ भी खाया न गया। शाम को कथा न हो सकी। सन्ध्या की वेला रहिरास के पाठ के लिए वह उठ न सके। दूसरे दिन सवेरे वह बीमार थे।

भाई साहब की कोठरी गुरुद्वारे के बगल में ही थी। पूरा-पूरा दिन उसी में पड़े रहते। गांव के लोग उनकी खैर-खबर पूछ जाते, जो कुछ उनको जरूरत होती दे-ले जाते थे। भाई जी को खिचड़ी, दूध दवाई इत्यादि देने की लोगों ने आपस में बारी बांध ली थी। छोटे छोटे लड़के-लड़कियां आकर उनकी मुट्ठी चांपी करते उनके कमरे की सफाई करते उनका मुंह धुलाते उनकी दाढ़ी में कंघा फेरते।

लाजवन्ती के छोटे भाई से एक दिन बात करते समय उनको पता लगा कि गुरुद्वारे का सब काम-काज उसकी बहन ने सम्भाल लिया है वही प्रकाश करती है वही पाठ करती है वही समाप्त करती है सिर्फ झाड़ू बारी-बारी आकर दूसरी स्त्रियां दे जाती हैं।

—और तेरी बहन घर का काम-काज आजकल नहीं करती?

—नहीं, वह भी करती है।

बालक भाई जी की छोटी छोटी बातो का उत्तर देता जा रहा था।

—तेरी बहन ने कभी तुझे मारा है?

—हु-ऊ, बालक ने सिर हिलाते हुए कहा—कभी बहनें भी मारा करती हैं?

—तेरी बहन का ब्याह कब होगा काका?

—हु ऊँ हम नही उसका ब्याह स्याह करना।

भाई जी ने बालक को अपने पास से मालटा दिया और इस तरह छोटी छोटी खाने पीने की चीजें प्रत्येक बार जब भी वह उनके पास आता वह उसको देते रहते थे।

जब अकेले होते पूरी-पूरी रात जागकर रो रोकर गिडगिडाकर, भाई जी बिनतियाँ करते अरदासें करते—हे रब मैं किस मुह से आपकी दरगाह म हाजिर होऊगा। किस मुह से आपकी हुजूरी म लोगो को फिर फिर यह कह सकूगा —

वेख पराईया चगियां। मावा भैणा धीआं जाणे।

(पराई स्त्रिया को मा बहन और पुत्रियाँ समझे।)

मैं नीच हूँ मैं कपटी हू मैं कृमि हूँ विष्ठा का मेरा लोक परलोक नष्ट हो गया है।

और वह फिर कितनी कितनी देर तक रोते रहते रोते रहते।

एक दिन सध्या की वेला रोते रोते भाई जी अर्द्ध चेतनावस्था म पड हुए थे कि अकस्मात् उनकी कोठरी का द्वार खुला। इस समय कभी उनको देखने के लिए कोई नही आता था। आँखें उठाकर उन्होंने देखा तो द्वार म लाजवन्ती खडी थी। उस क्षण तो भाई जी को जैसे विश्वास ही नही हो रहा था। पर जब लाजवन्ती उनके समीप पलग के पास आई तो वह अपने रुदन को रोक न सके। उच्च स्वर से क्रदन करने लगे, उनका एक एक अग करियाद कर उठा।

दूसरे दिन भाई जी की तबीयत म काफी अतर पड गया था। भिनसार ही लाजवन्ती फिर आई दोपहर को भी एक चक्कर लगा गई सध्या की वेला वह फिर आई। और इस प्रकार पाँच-सात दिन म ही भाई जी उठने-बठने लगे। लाजवन्ती उनके लिए दूध लाती दही लाती मक्खन लाती पनीर लाती लस्सी लाती और भी कितना ही कुछ।

भाई जी आखिर बिलकुल स्वस्थ हो गए। फिर कथा आरम्भ हुई फिर से पाठ होने लगे सवेरे, शाम और रात। उसी तरह सगत एकत्र होती उसी तरह दीवान सजाए जाते थे।

किसी को पता भी न लगता, लाजवन्ती भाई जी के वठने लग जाती, उनके लिए द्वारा माटा मीन पिरान का काम कर जाती गुरुद्वारे की चादरो के साथ-साथ उनके कपडे भी धो लाती। उनका पलग म धुनकर रखती उनके जूतो को झाड देती उनकी खडाऊँ पोछ देती।

जे तूं मेरा हो रहैं सभ जग तेरा हो।

जब लाजवन्ती जाती तो कभी-कभी मन म मन्दर म एक विचार म भाई जी गुम उठते।

भाई जी बड परेशान थे कि उन्होंने मेरा उम्र एम हो क्या बात था? एक आत्मा

थी। उम्र व पचास साल। सब स्त्रियाँ उनके लिए माताएँ थीं, बहनें थीं, पुत्रियाँ थीं। मन मार धान मर जाए उनके इष्ट ने उनको सिखाया था। और उन्होंने अपने मन को मार कर भस्म कर दिया था। एक रात का बुन चलता रहा, उपदेश देता रहा, खाता रहा पीता रहा लोगों के परलोक सवारने का दावा करता रहा।

कथा करके बाल बाहर फेंक देती है, भाई साहब जी ने कहीं देख लिया तो जूड़ा तेरा उखाड़ लेंगे, गाँव के लोग अपने दैनिक जीवन में भाई जी के बनाए हुए आदेशों का ही सामने रखते थे। कोई भी गुरुद्वारे में माथा टेके बगैर काम-काज नहीं कर सकता था। भाई साहब गुरु-मन्त्र देते थे सन्तान के लिए वर्षा के लिए फसल के लिए। भूत आदि रोग भाई साहब के कुछ पढ़कर फूक देने मात्र से ही ठीक हो जाते थे। नए मकान के उद्घाटन पर भाई जी जरूर उपस्थित होते थे। कोई पैदा हो भाई जी जरूर होते। कोई मर जाए भाई जी अन्दर होते। लोग अपनी मुरादें भाई साहब जी के पास ले-लेकर आते और वे किसी को भी खाली हाथ नहीं लौटाते थे।

लोग मानते थे कि जिन भूत को भाई जी अपने वश में किए हुए हैं। एक बार भी किसी ने उनका निरादर किया तो रात में कोई शक्ति आकर उसकी चारपाई से उठा कर नाले दे मारेगी। भाई साहब जी चाह तो दूर देश के फल, बीती ऋतुओं के मेवे मँगवा लिया करते थे। जिसको कभी कहीं कोई चुड़ैल पकड़ लेती थी या उस पर कोई भूत चढ़ जाता तो भाई जी झाड़ू फिरा दिया करते थे और वे लोग बिल्कुल भले चंगे हो जाते थे। बच्चों की नजर तो भाई साहब जी एक मिनट में उतार देते थे।

—सब तेरी ही लीला है —जब लाजवन्ती भाई जी से इन सब कौतुकों का रहस्य पूछती तो वे सदा एक ही वाक्य कह दिया करते थे और लाजवन्ती लजा जाया करती थी।

एक दिन भाई जी ने लाजवन्ती से कहा—लाजवन्तिए, आ चले चलें यहाँ से।

लाजवन्ती को भाई जी का आशय समझ में न आया। वह खाली-खाली नजरों से उनकी ओर ताकती रही।

भाई जी भी फिर टाल गए।

पर उनका जी यही करता था कि अब वह लाजवन्ती को वहाँ ले जाएँ जहाँ वह भाई जी नहीं सिर्फ गुरदित्तसिंह रह जाएँ और लाजवन्ती गुरुद्वारे में आने वाली नित्य नियम का पालन करने वाली न रहे जिसको उन्होंने लिखना पढ़ना सिखाया था, जिसके सामने एकत्र संगत में उठकर अनेक बार उन्होंने चिल्ला चिल्लाकर गाया था—

अनक कवाड देह पडदे म पर दारा संग पीने।
चितर गुपत जब लेखा मांगे तब कउण पडदा तेरा ढंके ॥

१ (अब तो पर्दे में अनेक किवाड़ दे, परनारी का भोग करते हो पर जब चित्रगुप्त हिसाब माँगेगा तो कौन तुम्हारा पर्दा ढाक सकेगा ?)

वह चाहते थे लाजवन्ती को वहाँ ले जाएँ जहाँ गहन अंधकार हो, लाजवन्ती उनको न देख सके वह लाजवन्ती को न देख सकें और उन दोनों को दूसरा कोई भी

न पहचान सकें। घोर अंधकार में खो जाएँ, डूब जाएँ, बह जाएँ, कुछ और हो जाएँ और फिर कुछ और होकर पुनः आविर्भूत हो जाएँ दो चीजें जो एक दूसरे को पहचान सकें, एक दूसरे को अपना सकें, एक दूसरे की होकर जिएँ एक दूसरे की हो कर मरें।

गांव में एक दिन शोर मच गया। राजपूतों का लड़का एक खत्री की लड़की को लेकर भाग निकला था। खत्रियों ने भाले और बंदूकें लेकर उनका पीछा किया, और पन्द्रह कोस पर उनको एक शीशम के नीचे सोए हुए जा पकड़ा। राजपूतों ने उधर कमरें कस लीं और मरने मारने के लिए तैयार हो गए। इस फसाद को खत्म करने के लिए मामला भाई जी के सामने पेश किया गया। भाई जी ने फैसला राजपूतों के हक में कर दिया और लड़की उनको सौंप दी गई। पूरे गांव में, सारे इलाके में एक भीषण आन्दोलन उठ खड़ा हुआ। खत्री माने ही न। आखिर उनका धर्म ही कहाँ रहा? पर भाई जी अपने फैसले से बिल्कुल न टले।

लाजवंती सुबह तड़के ही उठ जाती थी उसको घर के अनेक काम निबटाने होते थे। भाई जी सवेरे-तड़के उठते थे। उनका यह धर्म था।

एक दिन लाजवंती का जी चाहा भाई जी को वह भी एक चिट्ठी लिखे। दूसरे सभी लोग पत्र भेजते थे। पूरी की पूरी दोपहरी वह कागज, कलम दवात लेकर बैठी रही। उसने लिखा लिखतुम लाजवंती पास में मेरे परम प्यारे, एक एक पल याद आने वाले। और वह लिखती गई लिखती गई। एक अल्हड़ सी ग्रामीण बाला अपने हृदय का निरावरण कर रही थी। उसने सब कुछ लिख दिया जो भाई साहब के भीतर का पुरुष भी कहने में संकोच से लजाता था। एक नारी ने एक पुरुष की देह का उन्मत्त किया एक नारी ने अपने आप को एक पुरुष की आंखों से देखा। एक अनपढ़ सी औरत जिसने कभी कलम हाथ में नहीं ली थी लिखने बैठी तो लिखती गई, लिखती ही गई।

संध्या की वेला उधर से आते हुए उसने वह चिट्ठी भाई जी के हाथ में रख दी। जब अपनी कोठरी में जाकर लैम्प की रोशनी में उसको उन्होंने पढ़ा मानो उनकी समूची देह में आग लग गई। गुरुमुखी में ये बातें गुरु अंगद की बनाई लिपि में यह बकवास। मैं उमर भर गलियों में से गुरुमुखी में छपे अखबारों के टुकड़े उठा-उठाकर दीवारों में ठूंसता रहा हूँ। यह अनर्थ सतगुरु के नाम में यह कोढ़! मेरा समूची साज बनात मुझे नहीं पता था कि तू इतनी फूहड़ है यह जुल्म यह अंधेर।

भाई जी यह कभी सोच भी नहीं सकते थे कि जिन अक्षरों में समग्र गुरुवाणी लिखी गई है उनको कोई ऐसे विचारों की अभिव्यक्ति का माध्यम भी बना सकता है। लाजवंती के भीतर की नारी ने गुरमुखी में वही कुछ लिखा था जो भाई जी के भीतर का पुरुष सारी बार कहना चाहता था। पर भाई जी को ऐसा लगा जैसे समूची दुनिया डूबने लगी है अब सूर्य नहीं उदय होगा अब तारे नहीं चढ़ेंगे अब आकाश पर छाएगा एक भूकम्प आएगा समुद्र धरती को निगल जाएगा नीचे की धरती ऊपर हो जाएगी।

ग्रौर उन्होंने ग्रपने बाल नोच लिए उनकी सम्भाल-सम्भाल कर रखी दाढ़ी बिखर गयी। नंग धड़ंग होकर वह बाहर निकल भागे।

गाँव वालों ने उनकी बाबत फिर कभी कुछ न सुना।

कभी-कभी कोई राही ग्राकर बतलाया करता है कि उसने एक बूढ़े जजर को दूर, बड़ी दूर सड़क पर बिलखता देखा है, जो इस गाँव का नाम ले-लेकर गालियाँ दिया करता है।

छमक छल्लो

अमृता प्रीतम, १९१९

कवयित्री के रूप म अमृता प्रीतम बहुत लोकप्रिय हैं परन्तु कथाकार के रूप म भी उनकी लोकप्रियता कुछ कम नही है। वस्तुत हिदी पाठक उन्हे कथाकार के रूप म ही अधिक जानते हैं क्योकि उनके अनेक उपन्यास और कहानी-सग्रह हिदी म प्रकाशित हो चुके है और हिदी के सभी पत्रो म उनकी कहानियो के अनुवाद निरन्तर प्रकाशित होते रहते हैं।

अमृता प्रीतम की कहानियो म नारी जीवन की विषमता के मार्मिक चित्र होते है। एक एसी ही कहानी यहा सग्रहीत की गयी है।

पजाबी म प्रकाशित अनेक कहानी-सग्रहो म से कुछ हैं— छब्बी वरे बाद कुजिया, आखरी खत जगली बूटी आदि।

तनिक निकट आना छल्लो की मां! देखो न जरा आज तो मेरा घुटना बहुत ही सूज गया है। और साथ छल्लो के वृद्ध पिता ने अपनी टांग को पसार कर देखा। टांग म जोर की टीस हुई और उसने पुन अपनी टांग समेट ली।

वृद्ध हुकमचन्द की पहली पत्नी का देहान्त हो गया था। वह थी छल्लो की मां। उसके पश्चात् हुकमचन्द ने अपने धन के जोर से एक युवती करतारो शादी कर ली थी। विवाह के एक दो दिन बाद ही वह उसे छल्लो की मां कहकर पुकारने लगा था। करतारो को यह अच्छा नही लगा था और उसने कुछ गुस्से म आकर उससे कहा था सीधी तरह मेरा नाम लेकर बुलाया करो मुझे। नही अच्छा लगता हर समय छल्लो की मां छल्लो की मां ।

"भाग्यवान मैं जो ठहरा छल्लो का बाप, तो फिर आप ही बना तू हुई कि नही छल्लो की मां ? मैंने कोई बुरी बात कही है ?" वृद्ध हुकमचद कई बार करतारो के कहने पर सीधा तरह उसे उसका नाम लेकर ही पुकारने लगा था, परन्तु फिर भी कभी कभी भूले भटके उसके मुह से निकल ही जाता था, 'छल्लो की मां !'

छल्लो उसकी बडी लाडली बेटी थी। उसने उसका नाम कौशल्या रखा था। परन्तु लाड से वह उसे छल्लो' कह कर पुकारा करता था। 'छल्लो की मां' का सम्बो धन सुन करतारो क्रोध मे आ जाती थी और तब हुकमचद हँसता हुआ उसे कहा करता था, एक बडा पैदा कर दो फिर मैं तुम्हे उसकी मां कह कर बुलाया करूँगा। अच्छा, क्या नाम रखोगी उसका ? चनन नाम रखना उसका। फिर मैं तुमको आवाज दिया करूँगा, चनन की मां आ चनन की मां ! यह सुनकर करतारो चाहे कितना ही गम्भीर बनने का प्रयत्न करती फिर भी उसे हँसी आ जाती।

वर्षों व्यतीत हो गये परन्तु ओ चनन की मां कहकर हुकमचद करतारो का सम्बोधन न कर सका। करतारो के घर कोई चनन पैदा ही न हुआ। हुकमचद उसे सीधी तरह करतारो ही कहता रहा। हाँ कभी-कभी उसके मुह से निकल ही जाता था छल्लो की मां !

फिर देश का विभाजन हो गया। पश्चिमी पजाब मे रहने वाला हुकमचद पूर्वी पजाब करनाल मे आ गया। हुकमचद ने जिस धन के जोर से करतारो के यौवन को अपनी वृद्धावस्था मे बाध रखा था वह जोर भी अब टूट गया था। पति पत्नी के सम्बन्धो का धागा तो अभी उसी प्रकार था, परन्तु अब इसी धागे को स्थान-स्थान पर गाठ देनी पडती थी। हुकमचद के हाथो से अब धन की लाठी छूट गई थी, अत उसका बुढ़ापा बहुत कांपने लगा था। घुटनो की पीडा ने उसे और भी बेकार कर दिया था।

ए छल्लो की मां !" इस बार हुकमचद ने थोडी जोर से आवाज दी।

न छल्लो की मां मरेगी और न उसका छुटकारा होगा ! बोलो क्या बात है ?" करतारो अपने दुपटटे से हाथ पोछती हुई रसोई से बाहर आई।

य ही बुरे बोल न बोला कर। एक छल्लो की मां' तो मर गई—मेरी लाडली बेचारी छल्लो की मां। अब दूसरी को भी क्या मारती है !"

हां पहली को भी जस मैंने ही मारा है—तुम्हारी लाडली छल्लो की मां को। न वह पत्नी मरती न यह दूसरी आती। आप तो वह मर कर सुख की नींद सो गई और यह सब कांटे बटोरने के लिए मुझे छोड गई।'

तू काटे न बटोरा कर भाग्यवान, यह तेरे बस का बात नही। तू अपना काम किया कर—कांटे चुभोया कर।

मैं तुम्हे भी कांटे चुभोती हूँ और तुम्हारी नाजुक छल्लो को भी। तुम्हे चार पाई पर बैठे का थाली परोस कर देती हूँ, तुम्हारी इतनी बडी बेटी को खाना बना कर खिलाती हूँ। यह सब मैं बाप-बेटी को कांटे ही तो चुभोती हूँ।

'तुम क्या कष्ट सहन करती हो करतारो। मैंने तुम्हे कई बार कहा है अब आप

ही लड़की चार रोटियाँ बना लिया करेगी ।'

"रोटियाँ बनाने की उसकी नियत भी हो। चार टोकरियाँ लेकर जाती है और सारा दिन घर से बाहर ही व्यतीत कर आती है।"

मैंने तुम्हें कई बार कहा है कि अब उसे टोकरियाँ बेचने मत भेजा करो। स्थान स्थान के यात्री खरे खोटे सभी। यदि उसके साथ अच्छी बुरी हो गई तो ।'

छल्लो के बापू मैंने तुम्हें कई बार कहा है कि यह नसीहत तू मुझे उस समय देना, जब चार पैसे कमाकर मेरी हथेली पर रखो। यहाँ चारपाई पर बैठे बैठे ऐसे ही बोलते रहते हो। मैं । और करतारो सिसकियाँ लेकर रोने लगी।

"सच कहती है करतारो। मैं इसे किस मुंह से कुछ कहूं। पैसे ने भी पीछा दिया और शरीर ने भी। अब यह मीठा बोले अथवा कड़वा दो रोटियाँ तो समय पर सेंक ही देती है। हुक्मचन्द के मन में टीस उठने लगी। फिर उसने बड़ी नम्रता से करतारो से कहा मेरे लिए लहसुन डाल कर तेल गर्म कर दे। मैं बैठकर घुटना को मलता रहूँगा। साथ ही ईश्वर के लिए उड़द चने की दाल मत बनाना। यह साली मेरे शरीर को खाए जा रही है।'

उड़द चने की दाल क्या ? मैं आज मांस पकाऊँगी।

'मांस ! सच तुमने तो आज मेरे मन की बात पकड़ ली। शायद एक वर्ष हो गया मांस की शक्ल नहीं देखी। प्रति दिन यह जली हुई दाल वैद्य भी कहता था 'हुक्मचन्द यदि तन्दुरुस्त होना है तो शोरबा पिया करो। जरूर पकाना आज मांस।' फिर हुक्मचन्द ने अपने घुटनों की ओर देखा, और उसे ऐसा महसूस हुआ जैसे उसके मुंह की जगह उसके घुटनों को मांस का स्वाद आ गया हो।

'हाँ हाँ आज शोरबा पीना। मैं अपना सिर काटकर उबाल दूँगी।

माम हाय तुम जब भी बोलोगी कुछ शब्द ही कहोगी। शायद मेरे भाग्य में चार के स्थान पर आज बीस टोकरियाँ बिक जाएँ। मेरी छल्लो मेरी छमक छल्लो' से कहा आज तू मेरी बात रख लेना। पूरी बीस टोकरियाँ बेचना पूरी बीस, और आते समय आने वाली दुकान से पूरा आधा सेर मांस ले आना। जा बेटा जा। मोटरों के आने का समय हो गया है। और देखना आते समय प्याज, लहसुन अदरक हरी मिर्च सब कुछ लेकर आना नहीं तो यह तेरी माँ मांस को उबाल कर ऐसा ही रख देगी।

ऐसा लगता था कि छल्लो अपने बाप के मुंह से यह बातें सुनकर अवश्य हँसेगी परन्तु छल्लो उसी प्रकार सिर नीचा किये टोकरियों को निहारती रही।

किसी का टोकरा करतारो भी हो तो वह उसकी सूरत देख कर लगा करीतला। हर समय सिन्न की तरह मुंह बना कर रखता है। करतारो के जीवन गुस्सा ने जैसे अब हुक्मचन्द का पीछा छोड़ दिया हो और छल्लो के पीछे पड़ गया हो।

क्या हुआ है सब्जी की सूरत को करतारो ? तुम तो हर समय इसको टोकती रहती हो । तुम से तो अच्छा हो यह है इसका। हुक्मचन्द ने जैसे करतारो के सारे गुस्से का फिर अपनी ओर मोड़ना चाहा।

परन्तु करतारो का गुस्सा इतना जल्दी मुड़ने वाला नहीं था। वह उसी तरह छल्लो

की ओर देखकर कहने लगी, "जरा हँस कर किसी से बात करे तो कोई एक की जगह दो चीज़ें खरीद ले। इतनी मोटरें यहाँ से गुजरती हैं! अन्दर भी सामान और बाहर भी सामान। क्या वह लोग दो टोकरियाँ खरीद कर नहीं रख सकते ? इन टोकरियों का भी कोई भार होता है ? फिर ऐसी रंग बिरंगी टोकरियाँ। पर यह कुछ मुह से बोले तभी न। जितनी देर मोटरवाले बाहर खड़े होकर चाय पानी पीते हैं उतनी देर यह जरा उनसे मीठी बात करे, हँसकर बोले, तो कौन टोकरी नहीं खरीदेगा।"

छल्लो सब कुछ इस तरह सुनती रही जैसे उसने अपने कानों में रुई नहीं कपड़ा ठूँस रखा हो। आगे वह कई बार कह चुकी थी, 'मां, कोई नहीं खरीदता यह टोकरियाँ। यह लारी और बसवाले तो चाहे कोई टोकरी खरीद भी लें परन्तु यह मोटर वाले तो इन की ओर देखते भी नहीं। इनके पास जाओ तो खाने को दौड़ते हैं और कहते हैं हाथ मत लगाओ शीशे को मैला हो जायेगा जरा दूर खड़ी रहो। उनके पास जाने की कोई क्या हिम्मत करे ?' परन्तु मां ने छल्लो की कोई दलील नहीं सुनी। जो गुस्सा उसे मोटरवाले पर आना चाहिए था, वह छल्लो पर ही आ जाता था। वह हमेशा यही कहती, 'तुझे ढंग भी हो बेचने का। थोड़ी हँस कर बात किया कर। तू तो लाटे की तरह मुंह बना कर खड़ी रहती है। कौन तेरे हाथों टोकरी खरीदेगा ?'

छल्लो ने सचमुच कई बार कोशिश की थी कि उसका मुंह लाटे की तरह न बने। और मोटरों के शीशे के पास खड़ी हो वह कितने ही दिन मुसकराती रही एक बार नहीं, पूरे तीन बार। उससे किसी न किसी मोटरवाले ने कहा था, 'एस क्या दांत निकाल रही है। आजकल कौन खरीदता है इन टोकरियों को। कोई जाट-गँवार लेते होंगे।' और अब कई दिनों से छल्लो लाख यत्न करती, परन्तु उसका मुंह लाटे की तरह ही बना रहता।

"वह खसमखाना क्या नाम है उसका ? वह जो अखबार बेचता है ? रत्ना रल्ला। उसे देख कर तो इसके होंठ अपने आप फड़क उठते हैं। उस समय इसे कैसे हँसने का ढंग आ जाता है ?

करतारो ! यूँ ही मुर्गे की तरह मिट्टी न उड़ा। हुकमचन्द ने धमका कर कहा।

मैं कोई बुरी बात कह रही हूँ ? रानी को शौक तो चढ़ा है इश्क करने का पर अपने आशिक का घर-बार तो देख लेती ! टके-टके के अखबार बेचता है वह। कल को कहाँ से खिलाएगा इसे ?

करतारो की बात अभी समाप्त नहीं हुई थी कि छल्लो ने सिर पर चुन्नी ली और टोकरियों का ढेर सिर पर उठा वह बाहर मोटरों के अड्डे की ओर चल पड़ी।

टके-टके के अखबार बेचता है ! माँ की बात छल्लो के कानों में एक फुंसी की तरह दर्द करने लगी। पर जब वह मोटरों के अड्डे पर पहुंची तो उसे आती जाती और खड़ी मोटरों का ध्यान न रहा। वह अपनी टोकरियों के ग्राहक ढूंढने के स्थान पर उसकी सूरत ढूंढने लगी जो टके-टके के अखबार बेचता था।

आज तू दर से आई है छल्ला ?' रला पीछे की ओर से आकर छल्ला के सामने खड़ा हो गया।

मं छल्ला चौंक गई फिर रला के मुह की ओर देखकर उसे महसूस हुआ कि अब उसका मुह लोटे की तरह नहीं रहा। मैं एक टोकरी बुन रही थी। यह देख, आज मैंने इसमें हरे फूल डाले हैं। कितनी सुन्दर है यह टोकरी!

छल्लो!

हां।

टोकरी तू हमेशा ही सुन्दर बनाती है परन्तु ऐरे-गैरे के पास जाकर तेरी टोकरी दिखाना मुझे अच्छा नहीं लगता।

तू भी तो ऐरे-गैरे के पास जाकर अखबार दिखाता है। और छल्ला हँस पड़ी।

मेरी बात और है छल्लो। मैं मर्द हूँ। मेरा अखबार कोई खरीदे या न खरीदे पर मेरे मुह की ओर कोई नहीं झांकता।

और मेरे मुह की ओर कौन झांकता है ? मेरा तो लोटे जैसा मुह है।' छल्ला खिलखिलाकर हंस पड़ी।

इस प्रकार किसी पराए के सामने मत हँसना। टोकरियां के स्थान पर वह ।

हां! और फिर छल्लो का हंसता हुआ चेहरा गम्भीर हो गया। क्या करूं रला लोगों के सामने तो मेरा मुह लोटे की तरह बन जाता है और मां कहती है कि तू मर्द के साथ हंसा कर।

रले ने छल्लो के हाथ से सब टोकरियां छीन ली। मैं तुझे नहीं बेचने दूँगा य टोकरियां। एक बन्द दूकान की ओर इशारा करते वह बोला तू वहाँ चुपचाप बैठ जा। मैं आज सभी अखबार बेच लूंगा।

और फिर उन पैसों से तू मेरी टोकरियां खरीद लेगा। आगे भी तू कई बार इस तरह कर चुका है रला। कब तक इस तरह करेगा ? क्या तुझे घर में टोकरियों का अचार डालना है ?'

हाँ हाँ, मुझे टोकरियों का अचार डालना है। नहीं तो किसी दिन तेरी मां तेरा अचार डाल देगी। यह एक लारी आई है तू यहीं ठहर मैं अभी आता हूँ अखबार बेचकर। रला शीघ्रता से टोकरियां छल्लो को पकड़ा कर उस लारी की ओर चला गया।

छल्लो के मन में आया कि वह भी उसके पीछे पीछे उस लारी की ओर जाए। शायद वहाँ कोई टोकरी का ग्राहक भी हो। पर छल्लो से रला के हुक्म जैसी बात टाली न गई। वह टोकरियां को एक ओर रखकर उस बन्द दुकान के तख्ते पर बैठ गयी।

ताराचन्द नाम के आदमी ने छुरी से अपनी औरत की नाक काट दी। बारह वर्ष की सुन्दरी की नाक काट दी। पूरी खबर पढ़िए । दूर रला की आवाज आ रही थी।

लोग जल्दी जल्दी रला से अखबार खरीद रहे थे। छल्लो की हँसी फूट रही थी। 'गरम गरम खबरें साइंस की एक नयी ईजाद । कई बार रला वहाँ

करता था और वह तिब्बत के दलाई लामा की और रूस के रावेटा की बातें ऊँची-ऊँची आवाज म सुनाया करता था परन्तु आज छल्लो की हँसी फूट रही थी 'भला यह कोई सुनन लायक बात है ? किसी बेवकूफ न अपनी सुन्दर पत्नी की नाक काट दी ।

ड्राइवर न लारी का हार्न दिया । सभी सवारियां पुन लारी म बैठ गयी । रत्ला शीघ्रता मे छल्लो के पास वापस आ गया और बोला, आज बहुत स अखबार पहली और दूसरी लारी म ही बिक गय ।'

"तू तो प्रार्थना करती होगी कि रोज कोई मर्द अपनी औरत की नाक काट दिया करे !" छल्लो हँस पडी ।

'औरत की नाक काटे या अपनी अक्ल, अखबार तो इसी तरह की खबरो म बिकता है । देख नहीं रही थी लोग कसे मेरे हाथो से अखबार छीन रहे थे !

भला रत्ला लोगो को यह बात बडी मजेदार लगी ? औरत की जान कोई गलती थी भी कि नही । अगर हो भी तो इसमें क्या मर्दानगी है कि औरत का दिल न जीता गया तो उसकी नाक ही काट दी ! ऐसा लगता है, जैसे यह खबर सुनकर इन लोगो के मन म भी मर्दानगी जाग उठती हो ।

रत्ला हँसने लगा । दोनो शायद इसी प्रकार अभी बातो म ही लगे रहते, परन्तु इसी समय एक लारी और आ गयी साथ ही एक-दो मोटरें भी आ गयी ।

मैं तनिक चक्कर लगा आऊँ' रत्ला ने कहा ।

मैं भी जरा मोटर देख आऊँ शायद कोई ।'

तू छल्लो तू नही ।

पागल हो गया है रत्ला ! ऐसे हाथ पर हाथ धरकर बैठी रहूँगी तो ।

मैंने जो तुम्हे कहा है । आज मैं तुम्हारी छ टोकरियाँ खरीद लूगा मेरी छमक छल्ला । और रत्ला न प्यार से मुह चिढाया ।

नहीं रत्ला नही । रोज रोज ऐसे नही । और आज तो बापू ने कहा था कि पूरी बीस टोकरियाँ बेचना । यह कहती हुई छल्लो मोटर की ओर चली गयी और रत्ला लारी की ओर दौड गया ।

पूरा आध सेर मास प्याज लहसुन, अदरक । छल्लो सोच रही थी कि कितना अच्छा हो आज यदि वह अपने बापू के लिए यह सब कुछ खरीदकर ले जा सके ।

किसी को टोकरी खरीदनी भी हो तो वह इसकी सूरत देखकर नहीं खरीदता । तनिक किसी म हँस कर बात करे तो कोई एक की जगह दो खरीद ले । यह तो रोने जसा मुह बनाए रखती है । माँ करतारो के सभी बोल छल्लो के कानों मे तिनको की तरह चुभ रहे थे ।

छल्लो ने मोटरवाले बाबू की ओर देखा और सोचा यदि सामने मोटर म रत्ला बैठा हो तो वह उसे देख कर कितनी खुश हो ! साथ ही छल्लो न महसूस किया कि अब उसका मुह लोटे की तरह नही था ।

बाबू बहुत सुन्दर टोकरी है ।

"कौन सी टोकरी?" बाबू गाड़ी में बैठे-बैठे ही बोला और फिर कहने लगा 'मुझे तो सिर्फ सोडा चाहिए, टोकरी-वोकरी नहीं। जाओ सामने की दुकान से एक गिलास में सोडा और बरफ डलवा लाओ।"

"सोडा और बरफ" छन्नो ने सामने वाले दुकानदार को बाबू का संदेश दे दिया। वह फिर मोटर के पास वापस आ गयी। "बहुत सुन्दर टोकरी है बाबू" छन्नो ने खिड़की के खुले शीशे में से अपनी सबसे सुन्दर टोकरी बाबू के आगे करते हुए कहा।

बाबू ने टोकरी की ओर नहीं देखा। वह छन्नो को देखते हुए कहने लगा "टोकरी है तो बड़ी सुन्दर।"

"खरीद लो न बाबू। सिर्फ छः आने।" साथ ही छन्नो ने बड़ा यत्न किया कि उसका मुंह मोटे जैसा न बन जाए।

सामने की दुकान का लड़का सोडा-बरफ ले आया। बाबू ने अपनी गाड़ी में पड़ी हुई एक टोकरी खोली और व्हिस्की की बोतल निकाल उसमें सोडा मिलाया। फिर वह एक घूंट पीता हुआ छन्नो से कहने लगा 'सिर्फ छः आने?'

"हां बाबू सिर्फ छः आने और दो ले लो तो दस आने।"

"अगर चार ले लूं तो?"

"चार!" छन्नो अपनी उंगलियों पर पैसे गिनने लगी। साथ ही उसे ख्याल आया माँ करतारो सच ही कहती है कि यदि मैं हंसकर किसी से टोकरी खरीदने के लिए कहूँ तो ...।

बाबू अपना गिलास खत्म कर चुका था। खाली गिलास और सोडे के पैसे सामने वाले दुकानदार के नौकर को देकर उसने गाड़ी स्टार्ट कर ली।

"बाबू टोकरी?" छन्नो की आशा बुझने लगी।

"टोकरी तो मैं ले लूं लेकिन मेरे पास टूटे हुए पैसे नहीं।"

"मैं सामने किसी दुकान से नोट तुड़वा लाती हूँ।" छन्नो ने बड़ी जल्दी से कहा।

"इन छोटी छोटी दुकानों पर नोट नहीं टूटेगा। मेरे पास कोई छोटा नोट नहीं सभी सौ-सौ के नोट हैं।" छन्नो ने निराश होकर अपनी बांह पीछे कर ली। "हाँ एक बात हो सकती है" बाबू ने कुछ सोचकर कहा।

छन्नो की आशा जाग पड़ी।

"बाहर की बड़ी सड़क पर पठान का एक पंप है। मैं वहाँ से पठान भी ले लूंगा और नोट भी तुड़वा लूंगा।"

"लेकिन पता नहीं वह कितनी दूर है। मैं ...।"

"तुम वहाँ तक गाड़ी में बैठ चलो। बड़ी सुन्दर टोकरियाँ हैं। मैं बहुत-सी खरीद लूंगा।" और साथ ही बाबू ने कार का दरवाजा खोल दिया।

छन्नो के पाँव कुछ रुके परन्तु उसके दिल की इच्छा उसके पाँवों को आगे धकेलती रही— "डर छन्नो, मेरी छन्नक छन्नो! न डर। आज तू सारी बात रख लेना। ढेर सारी टोकरियाँ।" और छन्नो शीघ्रता से कार में बैठ गयी।

कार चली। तेज ... और तेज हो गयी। फिर पक्की सड़क पर जाती हुई कार

धीरे धीरे कच्ची सडक की ओर हो ली।

बाबू कहा है पेट्रोल पप ?' छल्ना ने घबराकर पूछा। फिर उसकी मास बाबू की बाँहो म घुट गयी। छल्लो के सिर मे कुछ चक्कर आए और फिर उसकी बाह बाबू की बाँहो से हार गयी।

जब छल्लो को होश आया तो वह एक वक्ष के नीचे अस्त-व्यस्त सिकुडी पडी थी। वहाँ कार नहा थी। कोई बाबू नही था। छल्लो ने अपन कपडा की ओर देखा। सामन पडी हुई टोकरिया की ओर देखा। सब कुछ मिटटी म लथपथ हो रहा था।

टोकरिया छल्लो से उठाई न गइ। मुश्किल से उसकी टागा न उसका ही भार उठाया और वह कच्ची सडक पर मन-मन के कदम धरती पक्की सडक तक पहुच पाई। एक राह चलती लारी खडी हो गयी। कडक्टर ने पूछा करनाल ?

छल्ना न एक बार लारी को देखा, फिर सिर हिलाया, 'हा।

और जब छल्लो स किसी न पसे माग तो वह चौंक पडी। उसके पास ता लारी का भाडा नहीं था। एकाएक उसे याद आया कि जेब म तीन-चार आन थे। उसन अपनी जेब टटोली। जेब म पसे तो नही थे परन्तु एक दस रुपए का नोट था।

छल्लो के मन म आया कि अच्छा हो यदि वह लारी से कूद जाए गिरकर मर जाए और नोट के भी टुकडे टुकड हो जायें।

कडक्टर ने छल्लो को सोच मे पडी देख खुद ही उसके हाथ स नोट ल लिया और बोला, 'भाडा तो कुल पाच ही आने है, लेकिन मैं तुम्हारा नोट तोड देता हूँ। और फिर उसन जितन पसे छल्लो को वापस दिए उसन चुपचाप जेब म डाल लिए

'गिन लो अच्छी तरह कडक्टर न कहा। छल्लो शायद उस समय खिडकी म अपना सिर रखकर सो गयी थी।

लारी करनाल के अडडे पर खडी हो गयी। कुछ सवारियाँ उतरी, छल्लो भी उतरी और फिर अनमना सी अपन घर की गली की ओर चल पडी। गली के कोन म मास की दूकान थी। छल्लो के पाँव रुक गए।

'आधा सर मास' छल्लो ने धीरे से कहा और जेब से पस निकाले।

छल्लो न घर जाकर जब रसोई म मास रखा और साथ ही प्याज लहसुन अदरक और हरी मिच भी रखी, तो उसकी माँ करतारो पुलकित हो उठी "आज तून कितनी टोकरियाँ बेच ला ?

'सभी, छल्लो ने धीरे से कहा और फिर वह नहाने के लिए बाल्टी भरन लगी।

वह रत्ना आया था तेरी तलाश करता ।'

अच्छा।' छल्लो ने आग कुछ नही पूछा। माँ न भी और कुछ न कहा। छल्लो डयोढी का दरवाजा बन्द करके नहान लगी।

छल्लो जिस समय नहा धोकर कपडे बदल कर रसोई म आई करतारो हाडा म मास भून रही थी।

देख ला आज घर बसता हुआ दिखाई दे रहा है न। जिस घर म छौंक का सुगध नहा आती धरम की बात है वह घर घर ही नही।" छल्लो का बापू बोला और

फिर छल्लो का ओर देखकर उसने बड लाड स कहा 'मरी छमक छल्लो !

छल्नो न जलत चूल्ह की ओर देखा। चूल्हे का सारा बदन आग की तरह ज्ल रहा था। ऊपर हाँडी रखी थी। छल्नो का महसूस हुआ, जम उस हाँडी म उसकी मुस्कराहट भूनी जा रही है।

उठ मरी बेटी नई टोकरी बनानी शुरू कर दे। मने पत्त पानी म भिगो रखे है। जिस प्रकार करतारो न छल्लो को आज बेटी कहा था इस प्रकार पहले कभी नही कहा था।

हुक्म की बँधी छल्लो मूढे पर बठ गयी उसन हाथ म पत्त पकड लिए और सुम्रा भी। परन्तु उस महसूस हुआ कि आज स खेतो म वे पत्त नही उगेंगे जिन स टोकरिया बनाई जाती है आज स रत्ना के बेचने के लिए अखबार नही छपेंगे और यह खबर भी कही नही छपेगी कि एक बाबू ने एक लडकी की हत्या कर दी।

परी महल की चीखें

जसवन्तसिंह कवल, १९१९

जसवन्तसिंह कवल की गणना पंजाबी के गिने चुने उपन्यासकारों में की जाती है। पंजाब के ग्रामीण जीवन और उसमें उभरते हुए जन-जागरण का चित्रण कवल की रचनाओं में मिलता है। भारत विभाजन के अवसर पर शरणार्थियों के बीच किए सेवा कार्यों द्वारा उनकी समस्याओं को समझने का इन्हें अच्छा अवसर प्राप्त हुआ और तत्संबंधी अनेक सुन्दर रचनाएँ इन्होंने लिखीं।

कवल के प्रकाशित कहानी-संग्रहों में से कुछ हैं—'कण्डे', 'जिन्दगी दूर नहीं', 'मयूर' आदि।

सूर्यास्त समय भूले धानी हरियाली के बीच में यह कोठी जरूर गुलाब का पीला फूल लगता होगी जैसे चाँदनी की भरपूर अँगड़ाइयों में परी महल दीखता है। शहर से कोई दस कोस तथा गाँवों से भी मीलों दूर उजाड़ में इस परी महल को भगवान जाने कितने चाव से बनाया गया होगा। सुन्दरता के इस निर्जन तथा शान्त फिजा के लिए मैं केवल ही आत्मा की गहराइयों तक खिंच गया था। उस दोपहर को अपने साथी पन्ना लाल को मैंने साइकिल नहर से नाले पर डाल लेने का इशारा करते हुए कितना लम्बा साँस भरा था तब पन्नालाल ने मेरी तरफ भृकुटी चढ़ाकर देखते हुए साइकिल नाले की पटरी पर उतार ली था। मुझे लगा जैसे पन्नालाल डर गया है या उसे मेरे ऊपर कोई सन्देह हो गया है।

नाला गाँव वाली तरफ से चारदीवारी के अन्दर की कोठी को गाढ़ी मीठी कँप कँपी में छेड़-छेड़ कर गुजरता है। कोठी के गेट के सामने पन्नालाल ने साइकिल की

घण्टी को सतर के सलाम की तरह बजाया। झट पीछे [illegible] खाकी वर्दी वाले चौकीदार न हैरान और परेशान होते हुए फाटक खोला। शायद उसके विचार म परी महल म आदम जात नही आ सकती थी। मैं प्रतीक्षा कर रहा था वह हम देखकर पहल हँसेगा और फिर रोएगा पर उसने ऐसा नही किया। अधपकी दाढी को बाँधने म उसने जागीरदारी ठाठ की नकल की हुई थी।

माहने ! हमारा दोस्त तुम्हारी कोठी देखन आया है। नया-नया पचायत-सदस्य बनने मे पन्नालाल का और भी रोब हो गया था।

आओ आओ प्यारो भाग्यवान हो शायद यह शापित जगह आपके चरणो क स्पश स सातें स जाग पडे। माहनसिंह के अन्दर शायद पुराने दद न करवट ली थी। उसका माथा भी कोठी के पीले रग की तरह एक पल चमका।

मैंन ख्याल किया माहनसिंह किसी अहिल्या की बात तो नही कर रहा ? फिर मुझे सहसा अपन और पन्नालाल के राम-लक्ष्मण होने का भ्रम हो गया। अवश्य इस कोठी क साथ काई अहिल्या जसी अनहोनी घटना गुथी होगी नही तो आबादी से दूर उजाड म इतनी शानदार तिमजली कोठी कसे आ सकती है ?

सरदार जी चाय बनाऊ ? चौकीदार ने पूछा।

जरूर बाबा जी ! अगर दूध हो तो।" मैंने पन्नालाल क नही करने स पहले ही अपन शौक की हामी भर दी।

पन्नालाल न मेरी ओर देखकर सिर मारा। वह वहाँ चाय नही पीना चाहता था। शायद वह अपन को जबदस्ती घसीट कर लाया महसूस कर रहा था। इसके विपरीत म घास फूला नाले म कोठी की नाचती परछाईयो साफ-सुथरे बरामदा तथा खम्भा म लिपटा लताओ को देख देखकर इतना खुश हुआ कि खुशी समा नही रही थी मुझ म। जस ही मन कोठी क बरामदे म स गुजर कर कोठी के पिछवाडे अण्डे की शक्ल के तालाब म अगडाई लेती औरत की सफेद सगमरमर की मूर्ति देखी आश्चय ने मेरे सारे अगो का जगह जगह से अकडा कर एक मूर्ति बना दिया। यह अहिल्या तो नही शायद वीनस है जिसको हमारे देश म सरस्वती कहते हैं। पर इसकी वीणा ? इसका वाहन हस ? शायद बिछुड गए हैं। हो सकता है छीन ही लिए गए हा। प्यार की तरल स्थिति म भी वीनस की आत्मा भरी दोपहर म बीमार-सी लगती थी। पता नही इसन कितन समय से कुछ भी न गाया हो। कला की देवी का गाए बिना बीमार पड जाना अवश्यम्भावी है।

मुझे छाती भर भर कर श्वास आ रही थी। मैं उस समय शत लगाने के लिए तयार था कि यहाँ हर तरह का बामार, विशेष रूप म आत्मा और प्रेम का किसी भी तरह की दवाई के बिना अच्छा किया जा सकता है। ठीक यह वही जगह है जिसकी हर मनुष्य न सामाजिक बधना म पर कल्पना की थी। प्रेमियो ने दुश्मनो मे दूर 'इक वगना बन न्यारा म जीना चाहा था और मैं खुद एक उपन्यास लिखन के लिए शोर गुल म दूर एकान्त ढूढ़ता फिरता था। मैंन सोचा सौन्दय के अगडाई भरने का नाम ही ता कला है। मुझे अपनी कला को साकार करने के लिए इसस अच्छी जगह कहा

मिलगी। मैं वीणा का सुर करके सरस्वती के हाथो म दूँगा फि प्यार की मादकता म उसके होठ फडकेंगे, और उन सुरो को मैं अमर दूँगा। पहली मंजिल पर जाकर मैंने दिशा को बाहो म भरते हुए पुकारा—

"पना ! मैं किसानो के सघर्ष वाला उपन्यास यही लिखूगा। कितना एकात है आत्मा बोलती-सुनती है हवा कितनी निर्मल है कि आत्मा जन्मा की मैल उतार कर विशुद्ध हो रही है। मैं इस खूबसूरती को शाति को और महक को अपना आप देना चाहता हूँ।'

पना इतनी जोर से हँसा कि साथ ही कोठी हिल उठी। पना नही उसन मुझे दीवाना समझ लिया था या स्वय हो गया था।

पता है मेरे यार, यह कोठी किस महाराजा ने बनवायी थी ?

ताज भी एक शाहनशाह न ही बनवाया था।' मैं उस समय अपनी बेपरवाही म पन्नालाल से कहा ऊँचा था।

तेरी दलील बकवास है। पनालाल एकदम घृणा स भर गया। 'यह कोठी कभी हमारी अम्मन की कत्लगाह रही है।' उसका मुह लाल हो गया जैसे किसी खूनी इकनाव के दिन सूरज रक्ताभ हो उठता है।

पन्नालाल के मन की भडकी गर्मी को मद्दे नजर रखते हुए मैं ऊपरी बारादरी तक कुछ न बोला। मैं समझता था महाराजाओ और जागीरदारो के समय म आर्थिक नोंच खसोट के साथ अस्मतें भी लूटी जाती थी और यह कोइ अनोखी बात न थी। बारादरी म आस पास और भी खूबसूरत दीखता था। दो कोस क फासले पर पन्नालाल के गाँव म स धुआँ उठ रहा था जो ऊँचा चढकर वायु की गति दिशा मे फैलता जा रहा था। गुरु भादो म लगता था, जसे उमडती आ रही हरियाली न कोठी को अपन आगोश म समा लिया है। मैं यह भी सोच रहा था कि पन्नालाल का जागीरदारी युग की कला और खूबसूरती से क्या वैर है। मैंने लाल की ओर झाककर पीछे हटते हुए कहा —

भाई मेरे महाराजा के कुकर्मों के लिए हम इस कोठी को कैसे दोषी ठहरा सकते है ? एक गिलास म आप शराब पियें या अमृत वह हर हालत म खामोश रहेगा।

वाह मेरे यार ! तुम मरुस्थल को भी उतना ही प्यार करोगे जितने ससी को फूका, जितना कि उस ऊँटनी को जिस पर पुन्नू को उठाकर ल जाया गया। पन्ना लाल और भी चमक उठा।

यद्यपि पन्नालाल की दलील सही जवाब नही थी पर मैं उसका भाव हर पक्ष से समझता था।

शायद उसने मुझे महाराजाओ का पिट्ठू ही ख्याल कर लिया हो।

'देख, वक्त म पहले अगर ससी जाग पडती वह दोनो उस ऊँटनी पर चढकर कही भी मन भाता जगह पर जा सकते थ इस लाम्बीवाग जसी कोठी म आ सकते थे। क्या उस हालत म ऊटनी चलन स इनकार कर देती ?

मगर म तुम कलाकारो की मार ही यह है कि मानवीय हिंसा को अपना सूर

पड गये थे, और रात की रानी की सुगध से पलकें अपने आप बन्द होती जाती थी। मैं रेलिंग पर कुहनिया टेककर नीचे आँगन म देखने लगा। अब चाँदनी बुत की कमर तक उतर आई थी और छत म देखने पर ऐसा प्रतीत होता था, जसे वीनस अधेरे म डूबती जा रही है। मैंने सुगधित हवा से छाती भर कर दिमाग खुला छोड दिया। इस समय मैं हर तरह का बोझ उतार कर औपन्यासिक दुनिया मे ही विचरण करना चाहता था। पर मेरे इन विचारो को एक और ददनाक चीख न ताड फाड करके रख दिया। मूर्ति कमान की तरह झुक गई जैसे उसकी आत्मा खिची जा रही थी। मरे सीन म बुरी तरह उथल पुथल जाग पडी। खडे रहना दूभर हो गया चेतना को चक्कर आ रहे थे।

शायद यहाँ अनुभूति रखने वाली आत्मा पहले कभी न आयी हो नही तो खामोशी इस तरह कभी चीखें न मारती। फिर कितनी ही और चीखे उठने लगी। हाय भग वान! यह क्या हुआ। शायद अब कोठी का हर कोना जाग उठा था जहाँ एक नौज वान किसान औरत खुल बाला फट कपडा और नगी छातिया का बाहो से ढकती अन्दर ही अन्दर शम स मरती जा रही थी। मैं जिस तरह भी देखता था एक नई जबदस्ती का अस्थिर माडल चीखें मार रहा सिसकियाँ भर रहा और वास्ते दे देकर दम तोड रहा था। काश मुझे यह कुछ न दिखाई दे कुछ न सुनाई दे मैं चीखो स छुटकारा चाहता हूँ। मैं एक दम मुड घुमाकर भाग खडा हुआ और सीढ़ियाँ चढता हुआ उपरी बारादरी म पहुच गया।

मैंन एक क्षण विचार किया शायद यहा वह चीखें न पहुचें। पर अब तक मेरे उप यास के सभी नहा तो आधे पात्र चीखो स डर कर भाग गये थे और बाकी के मृत्यु का प्राप्त हो चुके थे। मरी चेतना का बुरा हाल हो रहा था। मैंने थककर चाँद की तरफ मुह घुमा लिया और टाँगें पसार कर रेलिंग के साथ पीठ लगादी। यह रेलिंग डेढ फुट ऊँची सगमरमर की जाली का बना हुआ था। सिर उचका कर मैंने नीचे ताल का आर देखा। उसकी सतह पर कमल म स उतरती चाँदनी नाच रही थी। पर मरी छाती ऩफरत हौन स भर गयी। यदि यहाँ म गिर पडू अवश्य मेरी एक चीख निकल जो कोठी की दीवारें फाडकर सुगधित चाँदनी को चीरकर शायद पनालान के गाँव तक ही पहुच जाय। हा सकता है बचारा मोहनसिंह सुनकर भी उठन का हौसला न कर सके। मरे काना न मण्डियो म एक दगड दगड की आवाज चढती सुनी जस कोई पशु भागा आ रहा था। परा की आवाज स मैंने अनुमान लगाया हो न हो यह घाड की टापो की आवाज है। झट पीछे स एक भारी भरकम शरीर वाला सवार काल घोडे पर बारादरी म आ घुसा। मरा सारा अन्दर एक बार ही लरज गया। नीच का मुलायम फश भी काँप जा रहा था। मैंन अपन को जल्दी जल्दी साहस दिलाना चाहा। मैं भूना प्रेतो का विश्वासी नहा था और न ही उस समय मुझे उलटी-उलटी हानत म दम्मवार के सामन हाना चाहिए था। हालाँकि तब मरी आगन की सारी शक्ति सुन हो चुकी थी फिर भी मैंन साहस नहीं छोडा। सवार इतन जोर स हँसा कि आँगन की फुलवाडी का हर कोना भीतर ही भीतर सिकुड कर रह गई और साथ म

अधिक कुम्हला गई। शायद उसने मेरे अन्दर की हालत का माप लिया था। उसका सारा मुंह काले कपड़े में लिपटा हुआ था केवल दो आंखें ही मशालों की तरह जल रही थीं। शायद वह अपना मुंह दिखाने से डरता ही हो। फिर वह रौब में गर्जा—

मुझे जानते हो?" उसने सोने की मूठ वाला चाबुक फिजा में मारा। चाबुक की शूक से बारादरी तूफान में आयी किश्ती की तरह डोलने लग गयी। हो सकता है उसने चांदनी को चीरने की कोशिश की हो। उसके घोड़े को मक्खी काट रही थी और वह बार-बार पर झाड़ता पूंछ हिला रहा था।

"तुम्हें और तुम्हारे कारनामों को कौन नहीं जानता?" मैंने काले राक्षस का भय त्याग कर आहिस्ता से मुंह मोड़ उत्तर दिया और उसे एकटक दुश्मनों की भांति देखने लगा।

नीव कब्रें देख आये हो?" वह अपनी तरह की ही डरावनी गम्भीरता में घोड़े से उतर पड़ा।

हां, अब सबसे गहरी तुम्हारी कब्र खोदने आया हूं। मैं अपनी जगह उसी तरह टांगें पसारे बैठा रहा यद्यपि अन्दर लरज रहा था और दिल छाती से बाहर आना चाहता था। उसने मेरे चाबुक दायें-बायें घुमा कर इतनी जोर से मारा कि सारा शरीर एकदम निर्जीव हो गया। कोई बिजली गगन से नीचे को करट मारती गुजर गई। पर मैं कराहा बिल्कुल नहीं बल्कि मुकाबले के लिए अपने को इकट्ठा करके उठने का यत्न किया, किन्तु उस जालिम ने फुर्ती से दूसरा चाबुक बारादरी के एक खंभे में मारा, और मैं छत समेत नीचे लुढ़कने लगा। उस राक्षस की भूकंप जैसी हँसी की एक हा-हा मैंने सुनी और नीचे-ही-नीचे लुढ़कता गया। ऐसा प्रतीत होता था मानो मेरा दिल छाती में नहीं और न ही सिर में अक्ल है। कोठी के नीचे मैं एक भयानक नहर में आ गिरा। फिर उसमें डूबने लगा। कोशिश के बावजूद भी मेरे पैर कहीं भी न लगे। मैंने सांस लेने के लिए अपना आप ताड़ा और मछली की तरह जोर लगा कर उभरा पर मैं चारों ओर से घुटा जा रहा था। अन्त में इधर-उधर हाथ मारते किसी की बांह ने मुझे अपनी तरफ खींचना शुरू कर दिया। बांह की दो चूड़ियां बता रही थीं कि यह कलाई किसी लड़की की है। पर उसका चेहरा मुझे क्यों नहीं दिखता?

मुझे निश्चय करना पड़ा कि यह लड़की दीपो ही हो सकती है जो मुझे एक तरह से भवसागर में से खींच ला रही है। फिर वह बांह इतनी ऊँची उठ खड़ी हुई कि उसने मुझे मेरी असली जगह पर ला बैठाया। अब वहां न घोड़ा था और न उसका सवार बल्कि सीढ़ियों पर से उतरती खड़-खड़ भी समाप्त हो गई थी।

मैंने सिर हिलाते अनुभव किया कि यह वही घुड़सवार महाराजा है जिसने खेतों का रोगी न जानी दीपो का मेरा था। पता न कहने के अनुसार दीपो कुमारी थी। जरूरी है कि वह खेतों में अपने बाप की रोटी लेकर आ रही होगी या भाई की। यदि वह बहुत गोरी नहीं तो चनों की मक्की अथवा गावती गेहूँ जैसी तो अवश्य होगी। उसका भरी जवानी और नाक-नक्शों की सुन्दरता ने दैत्य-कद महाराजा को जरूर पागल बना दिया होगा। मामूली रंग-रूप वाली औरत पर एक महाराजा यदि ही

टालता है जिसके पास एक से एक सुन्दर स्त्रियाँ और रानियाँ हों। कुछ नहीं कहा जा सकता महाराजा को यह किस कारण भा गई कि वह उसका रास्ता रोक कर खड़ा हो गया। दीपो ने राह रोकने वाले की तरफ पल भर जरा निगाहों वाली आन-बान से देखा होगा। फिर उसने शोख नाज और शृंगारी होने के कारण अपने को एक मूढ़ मर्द से उलझना ठीक नहीं समझा होगा और राह छोड़कर एक तरफ से निकल चली होगी। यह बात एक महाराजा को खल सकती है शायद उसने अपना अपमान भी महसूस किया हो कि उसकी अपनी प्रजा बागी हो गयी है। राजा ने दूसरी बार उसकी राह रोक ली होगी और ऊँचा अपने में पहले नर्मी से बुलाया होगा—

तू सुन्दरी ही नहीं दो पल ठहर तो सही।

इतना सुनकर दीपो ने नफरत से अपने होंठ भींचकर फुफकारा होगा और बिना उत्तर दिए पहले बराबर आगे बढ़ चली होगी। यह भी जँचता है कि महाराजा ने घोड़ा उसके साथ साथ बढ़ा लिया हो। क्योंकि एक सयाना राजा बस चलते हाथ से जन्म नहीं गँवाता, भले ही उस समय में उसकी बुद्धि ही भ्रष्ट क्यों न हो गई हो।

'सुन्दरी! एक पल तो आँखें मिला।' वह फिर कामना पर मजबूर हुआ होगा। शायद दीपो ने घृणा से देख ही लिया हो। 'पानी तेरे हत्थां दा पीना कच्चीए कुमार गढ़ने।' महाराजा ने अपनी बुढ़ौती को न देखते हुए हो सकता है बीस बरस का छैला बनने की कोशिश की हो।

यह भी स्वाभाविक है कि उस समय लड़की का भरा और रसा मन उद्धत हो पड़ा हो।

'तेरे घर माँ-बहन नहीं।' और उसने एक झुक्के जवाब से पीछा छुड़ाने के लिए कदम तेज कर दिए होंगे।

माँ बहन की गाली से महाराजा को जरूर गुस्से में आ जाना चाहिए। पर लगता है उसने यह भी पी लिया होगा। क्योंकि ऐसी स्थिति में मर्द को एक जवान लड़की की गाली फूल की सुगंध की तरह लगती है। उसने ढीठ होकर फिर कहा होगा—

'मेरी जान! मैं एक महाराजा हूँ तुझे सबसे बड़ी रानी बना दूँगा परन्तु मेरी तरफ आँख उठाकर तो देख हँसकर तो बोल। तुझे सोने और रेशम से लाद दूँगा सुच्चे मोतियों का हार अभी तेरे गले में होगा।" शायद अपनी अपनी प्रेम-कामना पूरी करने के लिए उसने हर लड़की से यही बात कही हो।

पूरे विश्वास से नहीं कहा जा सकता कि दीपो चुप रही होगी या मुँह फाड़कर कह ही दिया हो जैसे कि मान मर्यादा वाली गवाई गाँव की लड़कियाँ बदजात मर्द के मुँह पर कह मारती हैं—

'मैं तो थूकती नहीं तेरे हीरों पर।' यह भी हो सकता है उसने मुँह फेरकर थूक दिया हो।

इतना अपमान एक महाराजा कैसे बरदाश्त कर सकता है। उसने ताव खाकर घोड़े से दीपो का सारा रास्ता रोक लिया होगा।

'ऐ लड़की! खबरदार जो आगे पैर उठाया नहीं तो ...' उस समय महाराजा

की आँखों में से चाव भाँक सकता है जिसने सामने हिरनी को देख लिया हो।

नहीं तो क्या कारण ? किसान लडकी की आँखों में भी जवानी आग जल सकती है। उसकी इतनी आन-बान वाली और निधडक होने का कारण उसके बाप का दमखम हो सकता है या भाईयों का पौरुष जिनके सामने सारा गाव चू तक न करता हो।

नहीं तो मुझे साथ ले चलूगा। शायद वह गुस्से में भरी उसे और भी हसीन लगने लगी हो। वह नरम पडकर हँस भी सकता है। मर्द की खासियत है कि वह यथासम्भव औरत के साथ सख्त नहीं होता जिसको उसे प्यार करना हो। सब शान, अब तो तुझे छोडने के काबिल ही नहीं रहा।

इतनी बात सुनकर एक कुआरी लडकी का लरज जाना जरूरी है। उसके अन्दर एक भय समा गया होगा। भय और उससे में से पैदा हुई दिल्लगी के साथ उसने सभव है रास्ता रोक खडे घोड़े के मुह पर मुक्का ही मार दिया हो। घोडा चोट खा कर एक दम पीछे हट सकता है और महाराजा कोई उपाय चलता न देख अंतिम उपाय काम में लाने के लिए क्रोध में घोड़े पर से उतर पडा होगा।

मन वाली औरतो को छोड देना मर्द का काम नहीं। अत में महाराजा फिर भी मर्द थे। जबरदस्ती चाहे भी करें दिल दिमाग की भूमि सन्तुलित नहीं रह सकती।

यकीनन उस समय लडकी ने आस पास मदद के लिए निहारा होगा। वहा कोई नहीं होगा। कोई हुआ भी न हुआ हो गया। उस जल्लाद को कौन रोकता। पर उसके बाप का घर वहां से अवश्य दूर होगा, उसके महाबर भाई निकट नहीं होंगे, नहीं तो बहन की इज्जत तक पहुचने से पहले वह महादस्यु का गला परी कथा के ताने की गरदन की तरह मरोड देते पीछे देखी जाती, जो होता।

महाराजा ने आगे बढकर उस लडकी को पकडने का प्रयत्न किया होगा। लडकी डर कर जरूर पीछे हटी होगी। उसके सिर पर ऐसी हाथापाई में रोटियां और लस्सी वाली हांडी के टिके रहने का सवाल ही नहीं पैदा हो सकता। रोटियां जरूर गिर पडी होंगी जो कौवा ने उठाई होंगी और हांडी टूटकर लस्सी वह गयी होगी जिसे आवारा कुत्तों ने चाटा होगा। दस कदम महाराजा से एक चिडिया-सी लडकी भाग कर कहां जा सकती थी। उसकी लम्बी बाहों ने इर्द गिर्द घेरा डालकर भूखे बाज की तरह चिडिया को मरोड लिया होगा। पकड़ और मरोडे जाने की हालत में दीपो ने चीखें भी जरूर मारी होंगी जो किसी ने सुनकर भी अनसुनी कर दी होंगी। शायद उसने जल्लाद से दांतों से अपने आपको छुडाने की कोशिश की हो। और राजा अपने नरम रेशमी रूमाल से दीपो की जबान भी बन्द कर सकता है। वह उसका रेशम पोंछने के लिए छटपटाती रही होगी। इस तरह की हाथापाई में बहुत कुछ सभव है।

अन्त में कुदरत की सारी मदद के पास हो जाने पर लडकी ने अवश्य रोकर मिन्नतें की होंगी। यह भी किस तरह हो सकता है लडकी हर हालत में हठ ही पकड़ रखता। उसने जरूर वास्ता दिया होगा—

तुम मेरे बाप हो, राजा देश की सब कन्याओ का बाप होता है। तुम्हारा हमारा

गोत एक है, तुम्हारे पुरखे और हमारे पुरखे कभी सगे भाई थे। आप राजा और हम आप के आसामी हो गये। मैं हाथ जोड़ती हूँ गुरु का वास्ता देती हूँ, मुझे छोड़ दो, मैं कुआरी हूँ मासूम हूँ तेरी प्रजा हूँ। तुम सबके पिता हो बापू! मुझे छोड़ दो।'

यह जाहिर ही है कि पत्थरों और राजाओं के दिलों पर कोई असर नहीं होता। उस राक्षस पर क्या होना था विजय चाहे झूठी ही हो एक लालची राजा कब छोड़ता है।

यह भी हो सकता है, दीपो के साथ महाराजा की ऊपरी चर्चा न हुई हो इससे अलग तरह की भी हो सकती है। ऐसा भी हो सकता है कि शिकार खेल कर आते महाराजा ने लड़की को किसी तरह की बातचीत का मौका ही न दिया हो। और झट ही उसको चादर में लपेटकर घोड़े पर डाल लिया हो।

पन्नालाल के कहने के मुताबिक दीपो घोड़े पर डालकर कोठी लायी गई थी। यह सफेद चमकता सत्य था जो कि दिन दहाड़े घटित हुआ था। इससे आगे क्या हुआ होगा जरूर महाराजा रोती चिल्लाती या बिल्कुल ही सहमी सिकुड़ी दीपो को लेकर बारादरी में चढ़ा होगा और घोड़ा माहनासिंह अथवा उस समय के कारणसिंह ने दस्तूर मुताबिक झट आगे होकर पकड़ लिया होगा।

बारादरी में जाकर महाराजा ने उतावली न की होगी। उसने दीपो को रेशमी पलंग पर फेंक कर सबसे पहले अपनी धड़कन शान्त की होगी। शायद उसने डरी सहमी दीपो को मुस्करा कर हौसला देने का यत्न किया हो। इसके विपरीत लड़की सांप की फुंकार से मोमबत्ती की तरह बुझ भी सकती है। महाराजा ने अपनी मरी जमीर को गहरे पाताल में दबा देने के लिए पीना शुरू कर दिया होगा। शायद उसने जमीरों शमीरों से सैकड़ों कोस दूर अपने को बलवान सहर में देखना चाहा हो।

स्वाभाविक है कि लड़की महाराजा से दूसरी तरफ देख रही होगी और अपनी किस्मत को रो रही होगी—कोई चिड़िया शिकरे की ओर कैसे देख सकती है। वह अपने उद्धारक के बारे में भी सोच सकती है। अपने भाइयों की उड़ती धूल देख सकती है। हो सकता है उसने बारादरी से अपने अनाज भरे खेतों को निहारा हो। अपने बाप का हल बलात पहचानने की कोशिश की हो जिस तक उसकी चीख नहीं पहुंच सकी थी। उसने जरूर रोकर पुकारा होगा 'बापू! तुझे क्या पता तेरी बेटी पर इस समय क्या बीत रही है। तू हल का गोली मार इस धरती को आग लगा दे जहाँ से तेरी मीना उठाई गई। ढाढें मारते, बेबस होकर अन्त में उसने कहा होगा 'बापू!' और नहीं तो तू इस कोठी को ही आग लगा दे।

बहुत सम्भव है महाराजा ने दीपो को रोने ही न दिया हो। इससे उसका मूड खराब हो सकता है। शायद उसने दीपो को शराब पीने के लिए कहा हो। और पिलाने के लिए तो अवश्य ही मजबूर किया होगा। वह शराब की बोतल और गिलास लेकर आगे बढ़ा होगा और दीपो डरती या मिन्नतें करती पीछे हटी होगी। यह भी हो सकता है महाराजा ने धींगामुश्ती करना चाहा हो। कौन क्या लड़की ने अपना सतीत्व बचाने के लिए पूरी कोशिश की होगी। पर आखिर उसने कोई भी कोशिश सफल न

हाते देख पनालाल के कथनानुसार बारादरी से नाले वाली तरफ छलांग लगा दी। यह सच मानना पड़ेगा कि दीपो ने छत से गिरते एक ददनाक चीख मारी जा खेतो और रास्तो को चीरती उसके बाप के पास पहुच गई, उसके भाइयो के दिमाग को जुनून बनकर चढ गई जो पीछे पनालाल और भाई नाहरसिंह का नारा और ललकार हो गई और इस कोठी म प्रेत बनकर छा गई।

दीपो महाराजा स डरती पीछे हटती भी बारादरी से गिर सकती है। यह भी हो सकता है कि महाराजा ने गुस्से या किसी झगडे के कारण उसको खुद बारादरी स नीचे फेंक दिया हो। नाले की नानकशाही इटो के फश पर गिरकर दीपो का मारा मिर फट सकता है। यह भी ऐन कुदरती है कि उसके सिर और मुह में से लहू के परनाले बहकर नाले म मिल गए हो जिसका पानी उसके बाप के खेतो को लगता है और जिन खेतो की मैं आज रोटी खाकर आया हू।

फिर एकदम मेरी टागो के गिद से बाहो की कधो टूट गई। और मरी बठे-बठे की सुबकियाँ निकल गइ। मुझे लगा दीपो मेरी अपनी बहन थी जिसकी चाखें सुनने से मैं कान बन्द कर लेना चाहता था और सत्य देखने से आखें मीच लेना चाहता था।

उपकार

महेन्द्रसिंह जोशी, १९१९

महेन्द्रसिंह जोशी भारतीय न्यायपालिका के एक उच्च पदाधिकारी हैं और पंजाबी की प्रौढ़ पीढ़ी के एक प्रमुख लेखक हैं।

जीवन के व्यापक अनुभव, विचार, सम्पन्न सूझ और नयापन दृष्टि विवेचन के कारण महेन्द्रसिंह जोशी ने पंजाबी को अनछुए धरातलों की कहानियाँ दी हैं। उनके तीन कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं—

'भीतों के परछावें', 'ताटों से त्रिप्तीआं' और 'दिल दो दूर'।

अपने ही खून को पत्थर चीर देने वाली चीख सुनते ही एक काला-कलूटा मरियल सा बूढ़ा कच्ची कोठरी के बकिवाड़ दरवाजे में से लड़खड़ाता हुआ लपका और उसके शगुन वाले लाल साफू में लिपटे कन्धों से चिपट गया। जरी के चमकीले वाली नई जूती लड़की के हाथ से निकलकर उसके मेहदी रंगे पैरों के पास गिर पड़ी और उसकी बाँह बाप की टेढ़ी मेढ़ी उभरी नसों वाली सूखी गर्दन से लिपट गई। फिर न तो पिता के अस्थि पिंजर को झुलसाती धूप का सेक लगा और न बेटी के छाले भरे तलवे जलती हुई रेत से उकताए। देर तक कुछ पूछे-बताए बिना फूट फूटकर वे दोनों रोते रहे।

यह घटना उस छोटे-से गाँव फत्ता जलहर की है, जहाँ खाने वाले मुँह अधिक थे और कमाने वाले हाथ कम। लोगों ने जुताई कर ली, मचानें साफ कीं, मुंडेरें बाँध लीं, परन्तु धरती की भूख में कमी न आई। ऊपर से सेम आ गई, मौत की काली परछाईं की भाँति सरकती हुई। धरती फटी और दलदल हो गई, वातावरण में चाँदी की

बजाय रहा का जन्म देने लगी। खेत जिस जल की ईद के चाद की भांति प्रतीक्षा किया करते थे, वही पानी उनकी छाती पर नाग की भांति कुंडली मारकर बैठ गया। भरपूर रमना का स्थान दो दैत्या ने रोक लिया—लोहे की उलझी तारा जसी अडियल घास और हरे के फल जमे पत्ता वाली निदयी बूटी। बना के सीग भुनम गए थोथे पिंजर म रह गए। छोटे छोटे किसाना के छोटे छोटे खेतो ने मिलकर बडे बडे तालाबा का रूप धारण कर लिया और वे मेजर साहब के लिए मुर्गाबियों के शिकार के अतिरिक्त किसी काम के न रहे।

हर एक अपने कुनबे को जीना रखने के योग्य अन्न पैदा करने के लिए गाव के बडे मरदार का आर देखता था और जीवन कहार का तो कहना ही क्या जिसके पास अपना बित भी न था। जिन गाय भसो को वह चराने वाला था वे भूख म सूख सूखकर मर गई या फिर अस्थि पिंजरा की कीमत पर व्यापारियों के खूंटो म बन्ध गई थी। किसाना के लट्ठ जैसे अपने पूत बेकार बैठे अगडाइया लेते थे। जीवन को बगार पर कौन रखता? जिदगी मौत के धुधलके म युगो जसे कई असीम वर्षों तक भूख अपनी तुन्द चाक स उसकी आता को खाती रही। अत म गाव से दूर धरती का एक टुकडा लेकर मेजर साहब ने उसको आश्रय दिया और जब कुछ समय पश्चात् चार एकड धरती जोतने के लिए कह दिया तो उसने अपनी जवान बेटी उनके घर काम-काज करने के लिए भेजने म एक बार भी चर्चा न की। जीवन को अपनी बेटी पर बहुत गव था। तीतर मोर लिखती है मेरी कम्मो। —वह अक्सर कहा करता और उसे विश्वास था कि जब लडकी सुख देने लगी तो सरदार मेजर उसके लिए जमीन और बना देगा।

कम्मो का रंग अपने कुल म अलग न था—काला। पर नख शिख खूब थे। मोटे होंठ चपटा नाक, चौडे और मोटे कान बन्द सी आँखें नाना दोषो के इस सब कुछ स वह बच रही थी। कम्मो कद (कापन) सी बरा की लम्बी और सुडौल —नरमा कपास की नई पत्तियो-जसी कोमल काया निखरी उजली! तिल के तेल की धार-जसी कोमल गभीर मूक। पकी हुई ममवा जसी जवानी थी उसकी।—मीठी मीठी सहमी-सहमी। जब पानी का घडा लेकर वह गाव स निकलती लडको के हाथ म पकडे सूत की फिर किया घूमनी न रुक जाती। बारह गीटी के कंकर वही पडे रह जाते, टुम्ब के पत्तो पर पान और इंट के पत्ता पर चिडिया गिरने लगती।

जैसे सफलता लेकर वह मेजर साहब के पास गई हो—कुछ ही दिनो म कम्मो ने सब के मन मोह लिए। थक कर चूर होने के लिए वहाँ चूल्हे चौके के बिना भी बहुत कुछ था। (घर के पाच छोटे-बडे लाडले बच्चे काम ही तो पदा करने के लिए थे।) मैले कपडे गन्दे फर्श जूठे बरतन बिखरी हुई वस्तुएँ। और तो और सरदार के अपने छोटे छोटे काम ही समाप्त न होते थे। कभी सोना लाओ कभी पान बनाओ कभी चिलमी पकडा दो और कभी बिस्तर लगाओ और वह हर समय नगी ही रहती व निरायन व निकवा। झिडकियाँ मिलती गालियाँ भी। वह ऊँचा साँस न लेती आसू न गिराती। जब प्रात काल वह सरदारनी की चाय बनाने के लिए उठती तो सब सा

रह होग और अब राम को गस्पर पत्ते जिन हुए का भोग म न्गा ता मारा न्गर ता पुरा हाता । अग अग महा । हुमरो ग्न उमका मनोना नग मुमरे हुए मून के गन्ध पीता गन्ध गया और ममक की तरह मुनते हुए उसे मुम हुए पान मुम्मना की पाप ढात गया। जीवन गस्पर मन्म प गमत का लिया हावने न्गा सो बह उ वे मजर प गई। हारा हिलगी—जैस कोई निदार कविता बनाई प और ग कनो हा हाय र बादू की आवाज उमर बप्द म निकलने म न्गा हो निदन्सि म बन्द न्हे। भयभीत हुए जीवन की टागें काप न नगी भरा पंपनाई पानी न बह मार दका । क ना बाह पसारे नोटनो हुई बई सीढ़िया उतर नई । न्गने म मजर माहब म जा बोलना भोवार म निरन्तर पाल । बैचा म पर लिया नन्मर म हावर नह न्न । मेजर माहब न जीवन का कन्धा थपथपाते हुए कहा— सोनिया की विन्ता मत करना जीवन राम। हम तो गस्परनो न धरम की बिन्दिया बना लिया है।

जीवन जानता था जिसने अपनी उमर मा मा हो। बग के गम्पर हवा म कल गम उगर बम म बान्द था। बरकता भगवानो धूप म बैठा न बमर म ऊपी कलाम म म पाम पूग मार लिया था। गर्मी की कड़ी रातो म गानी बार-बार निकाल की थी। बटोर मुरण का दकारे जीवन का दानो म मगी था। क्योंकि मन म उगका गरीर धुम धुमकर बहता था। जैसा भुगता था वर मन पर बुढ़ म बर मरा जन ने उग। इन बुढ़ शरीर म इतना भी हार ता मनवा हा भी थी। परन्तु अब मन भाग्य का सितारा चमक उठा था। जो हवा कभी की पार म पानी उमम नहन के हर पत्ता की टहप थी और नाम म नाजा धूर की सुगंध। जीवन म वह नहनी कन भुपटी हुई ता रही थी और भाइकर पड़ रही थी। अमीरी न हाथ पकड़ा था और अब उसकी नाव किसी अच्छे घाट पर लगने वाली थी। गुग म रह रहो मन का मार ध्यान जाते ही जीवन को क ह मन-मनन प्यारे लगन जो मनो म आने पर उमर पहन गड़ गए थ और उसकी आंखें किसी अनुपम भावुकता म सजल हो जाता।

दिन गिन करके साल व्यतीत हो गया। जीवन का मांस घुनता गया उसकी गक्ति कम होती गई। उसक सूज हुए घुटन-टखन पांव की भांति चमकन लग। उसक जोड़ा की पीड़ा दूना जसी तीव्र हो गई—जसे त्वचा हड्डिया को छोड़ गई हो। उसका आत्मा भी शरीर म पृथक होन को तत्पर थी। बस दिन म एक आशा लिए वह जी रहा था—यही मरी आंखो के सामने ही बेटी का ब्याह हो जाय।

जब मजर साहब न एक दिन कह दिया कि निजला एकादशी को बन्नो की बारात आयगी तो उसकी यह इच्छा भी पूरी होने को आई। सरदार क बोल छुटे हुए बाझ से न्ब हुए स थ। यह क्या धन है बेटी का भी—जीवन ने सोचा। न रसोई जाय न भेजन म चन। मजर साहब ने दूसरे की ओखली म सिर दिया था और अब होश भूली हुई थी। ब्याह तो पूरा झमट होता है और फिर लड़की का। जीवन के अच्छा जी म आंसुओ का मौन था। मेजर साहब के कहने मे वह जैसे हल्का सा हो गया हो—जैसे किसी ने उस धरती से उठाकर चांद पर रख दिया हो।

कलो का काज क्या हुआ बस समान हो गया। बहारो की बारात का कोठी म

आगमन हुआ। निवार बुने पलगो पर धोबी मे धुली चादरें और तकिया वाले बिस्तर। पानी के प्यासा का बरफ वाले दूध। मेजा पर मुर्गे की प्लेटें। साडे म ह्विस्की। घर घर चर्चा हुई। 'सरदार ने धन का एक ही काम किया है।'

डोली वाले रथ के अभी चिह्न भी सडक स न मिट ये, जब कला उल्ट पार गाँव लौट आई। ससुराल उसे बसान के लिए तयार न थी—उस कई महीनो की गभवती थी।

अंधी पीसती है

सन्तोखसिह धीर

पजाबी के नई पीढ़ी के लेखको म सन्तोखसिह धीर का स्थान विशिष्ट महत्व का अधिकारी है। पजाब के ग्राम्य जीवन और उनम आती हुई सामाजिक आर्थिक क्रान्ति का चित्रण धीर की कहानिया की विशेषता है।

प्रकाशित कहानी सग्रह सिटियाँ दी छा सवर होए तक आदि।

टांगा, बाहा सिर और कधो पर भालो-गडासो क अनगिनत घावो के कारण असह्य पीडा और टीस अनुभव करता आठ नम्बर का मरीज अजु न उठ बठन की कोशिश म एक बडी गाली देकर बुडबुडाने लगा यदि मेरे बस म हो तो गोली से उडा दूँ धरक सबको मक-क सब तेल डाल कर फूकने लायक हैं मरे साले के।

छाती बड छत्तीस जख्मो से छिदा खोख्लवाने का बाबा अजु न सवा महीने से चारपाई पर पडा था। वह तग आकर दु खी हुए दिल स बोल रहा था फिर भी उसकी गालिया सुनकर दूसर सिर तक खाट म पड मरीज हस पड। जिनके घाव स्पश मात्र म दद करते थ और जो हस नहा सकते थे व भी हस पड।

जरा हसन स उसने चहरे स भी पीडा क उड बल साफ हो गए और उसकी आखें खिल उठी। उसी समय सामने क पाच नम्बर क बेड म इन्दरसिह का भाई उसक मह म निवाल डालना छोडकर कमजोर कुहनिया पर काँपते अजुन का देख झट उसकी तरफ आ गया और उस बिठाकर तह की हुई रजाई उसके पीछे रख पाट उस पकडा दिया।

कद भूठ नही बडी ही धीमी और करुण आवाज म सहार स पाठ टक,

अर्जुन की ओर देखता इन्दरसिंह बोला। रेल के नीचे आकर उसके दोनों पाँव कट गए थे। सारी-की-सारी रेल उसके ऊपर से गुजर गई थी। बस उसका भाग्य था कि उसकी जान बच गई नहीं तो बोटी-बोटी कट जाती। पिछले दो महीने से अस्पताल के पलंग पर बेजार पड़ा वह इस प्रकार के जीवन से तंग आ चुका था। कई बार वह आँसुओं के बिना ही रो लेता—'अच्छा होता मैं मर जाता अब जीता रहकर क्या करूँगा पैर ही न रहे मेरे जब। पचास वर्ष की आयु में उसके पाँव कट गए थे। वह सात पुत्रियों और दो पुत्रों का पिता था। बड़ा लड़का तो बेचारा भगत ही था और दूसरा लड़का जो सबसे छोटा था, उसके जवान होने में अब देर न थी। घड़ी दो लड़कियों की ही शादी हुई थी बाकी ढेर सी लड़कियाँ अभी पड़ी थीं कि उसके पाँव कट गए। वह सारा दिन निराश आँखों से वार्ड की दीवारों और छत को देखता रहता। कभी भी किसी से खुलकर नहीं बोलता था। केवल अर्जुन के साथ ही कभी—हूँ हाँ कर लिया करता था क्योंकि दोनों के पलंग आमने सामने थे दोनों लम्बे दिनों के मरीज थे और दोनों को ही अभी और काफी दिन यहाँ रहना था।

"मैंने कहा भाड़ में झोंकने लायक है सारा अमला, इन्दरसिंह।" लाल कंबल में पाट' लेकर इन्दरसिंह की तरफ देखता अर्जुन कहने लगा "तिनका तोड़ने का भी कष्ट नहीं करता कोई। और तो और साला भंगी भी कम नहीं जैसे अफलातून का बच्चा हो। हरामी अपने आपको सिविल सर्जन का बाप समझता है सुबह से चालीस बार कहा है भाई मुझे उठाकर पेशाब करा जाओ लेकिन सुनता ही नहीं।"

"क्या कहता है? यह तो ड्यूटी है उसकी।" छः नम्बर से अखबार आँखों के आगे से हटाकर नये आये सरदार सुखवन्तसिंह ने पूछा जिनका कल कोई छोटा आपरेशन हुआ था और जो किसी कालिज में प्रोफेसर बताए जाते थे। अब तक इस सारी बात चीत पर वह अखबार के पीछे धीरे धीरे मुस्करा रहे थे, पर अब वह भी उसकी बातों में आ शामिल हुए।

"कहना क्या है सरदार जी बस टालमटोल।" उसने सिकुड़ी हुई आँखों से देखकर कहा, जिनके कोनों पर कौए के पंजों की तरह झुर्रियों का जाल खिंचा हुआ था "टाँग घुमाता साला इधर उधर घूमता रहता है करता कुछ नहीं।"

सामने पड़े सरदारजी को हलकी हँसी आ गई। साथ ही दर्द की छोटी-सी लहर उनके चौड़े चौकोर माथे पर रेखाएँ बिखेर गई।

"सच्ची बात है पर" दस नम्बर के बेड पर सीधा पड़ा पहलवान बोला जो चार दिन हुए गाँव की एक लड़ाई में चोटें खाकर आया था "नीचे वाले भी कटी उँगली पर नोन नहीं डालते ऊपर वालों की तो कोई बात ही नहीं।" वह कहता गया क्योंकि अब तक वह भी सबके स्वभाव से परिचित हो चुका था।

"ऊपर वाले तो बल्कि अच्छे हैं" हाजियों जैसी काली और कतरी हुई दाढ़ी में सहज स्वभाव से खुजलाते हुए अर्जुन ने कहा "पर भंगी तो बड़ा ही हरामी है"

गुरबचन भंगी अर्जुन के निकट ही कहीं बाहर बरामदे में सफाई कर रहा था और जालीदार खिड़की में से उस सब कुछ सुनाई दे रहा था। बस तो सभी मरीजों

की चिड़ चिड़ करन की आदत होती है और यहाँ सभी नवाब बन बैठते हैं पर अर्जुन सा कुत्ते की तरह हमेशा भौंकता रहता था। सारे मरीज इसी ने बिगाड़ दिए थे। तभी तो सारा गाँव के पट्टीदारों से कन्धे तुड़वा कर आया है। धीरे से जालो का दरवाजा छोड़ते हुए वह लंगड़ाता जल्दी-जल्दी वार्ड में आ गया और अर्जुन की ओर बढ़ता हुआ कहने लगा ओ तू क्या बकता रहता है सारा दिन अर्जुन ? तुम्हें कहा नहा था कि अभी आता हूँ। तू तो एक मिनट में आसमान सिर पर उठा लेता है। आओ पकड़ाओ पाट फेंक आऊं। हाँ बेकार जबान चलाता रहता है सारा दिन उसने कटी हुई दाढ़ी के ऊपर घुटे सिर को हिलाया जिस पर से नीचे गर्दन तक पट्टी बंधी हुई थी।

आ अब आये हो न। आसमान उठा लेता हूँ दो घंटे हो गए मेरी जान निकल रही थी लो पकड़ो हाँ। अर्जुन ने बात को हँसी में ले जाकर बर्तन उसे पकड़ा दिया।

मैं डाक्टर से कह दूँगा। सारा दिन गालियाँ देते हो। कृत्रिम क्रोध से बुड़बुड़ करता जोर से दरवाजा बन्द करता गुरबचन बाहर निकल गया।

कह दे जिसमें कहना है लगा ले जोर कलक्टर बना है। अर्जुन कमजोर और दयनीय था पर दिन पर दिन स्वस्थ होने के हौसले में थोड़ा अकड़कर झूठी डाँट के साथ इतने ऊँचे स्वर में बोला कि बरामदे से परे शौचालय की ओर जाता गुरबचन अच्छी तरह सुन सके।

जो न देखा सो ही भला। इन्दरसिंह के बड़े भाई चननसिंह ने उसकी छाती पर कम्बल ठीक करते हुए अर्जुन की बात का एक तरह से समर्थन किया और फिर उठे बर्तन साफ करने के लिए वह बाहर चला गया।

बाहर से अर्जुन के लिए खूब कढ़ी चाय बनाकर लोटे पर लोटा रखे उसकी पत्नी आयी। डाली के पास आकर वह चाय का लोटा रख रही थी कि एक बड़ी सी गाली देकर तनिक छिपाकर अर्जुन उसे घूरने लगा कहाँ मर गई थी तू री ? इतनी देर हरामजादी कुत्ती है। ऐसा लगता था कि वह आँखों से ही उसे खा जाएगा।

बता को न तो गाली लगी और न घूरना ही। अपना पीला-सा मुँह ऊपर उठा कर आँखों से मन्द मन्द मुस्कराती वह कटोरी में चाय उड़ेलने लगी— चाय बनाकर ही तो आती। लड़का बैठा रहा पर्चा पर देर तक। चाय की कटोरी उसके होंठों के पास करती वह धीमे धीमे बुड़बुड़ाई।

लक्ख को दबा देती सड़क में मेरे साल का। गरम घूँट नीचे करता वह फिर घुड़का हाँ हाँ मैं पगाव करने को तंग बैठा रहा

बता कुछ न बोली। वह अपने पति के टेढ़ स्वभाव से परिचित थी।

सिगरेट निकाल। अर्जुन ने घौंस के साथ हुक्म दिया।

डिब्बे में से सिग्रेट निकालकर बतो ने आप उसके होंठों में पकड़ाई और फिर उसे जला दिया। दो-तीन कश खींचने के बाद बतो ने सिग्रेट अपनी उँगलियों में ले ली। थोड़े समय पश्चात बतो उसके होंठों से सिग्रेट लगा देती और अर्जुन कश

खींच कर धुआँ छत की तरफ उड़ा देना। उसकी दोनों बाहें दुश्मनों ने तोड़ दी थीं, जिनके ऊपर पट्टियाँ बँधी हुई थीं। वे अभी किसी ओर हिल नहीं सकती थीं। अपनी तरफ से तो दुश्मन बाँह काट कर ही गए थे।

अफीम की गोली के ऊपर कड़ी चाय और उसके ऊपर सिग्रेट, अर्जुन का नशा कुछ खिल गया। एक लम्बा कश खींचकर सिग्रेट को सिरे तक जलाकर, तसल्ली के साथ धुएँ को सरसरी छोड़ता वह बोला 'लड़का कहाँ है?

बरामदे में खेलता छोड़कर आई थी।"

आओ। उसे नेवर मायो? हुक्म हुआ।

छोटे-बड़े कई बरतन कपड़े में बाँध कर वह तो बाहर चली गई और सफेद, दूध-सी पोशाक में स्प्रिंगदार दरवाजे को धीरे से धक्का करती नर्स अन्दर आ गई। माथे पर रौब की हल्की-सी सिकुड़न और कंधों के ऊपर फैल रहा चौड़ा बगुले सा सफेद स्काफ जिसने आधा सिर और उसका भारी और शानदार जूड़ा ढक लिया था। वार्ड के फर्श पर नाज से चलती वह मेज की तरफ जाने लगी। एपरन के घेरे के नीचे सफेद मोज़ों में भरी और गोल पिंडलियाँ हल्के-हल्के थिरक रही थीं।

सारे वार्ड पर मानो हुस्न की छाया पड़ गई। आस पास मानो एक लपट-सी उठने लगी। दूसरे सिरे पर छः नम्बर के पास पहुँचकर मेज़ के ऊपर उसने कागज़ रख फिर वापस एक नम्बर से बारी बारी टैम्परेचर ले ले वह चार्ट भरने लगी। चार नम्बर के बेड के पास जब वह आकर खड़ी हुई तो अर्जुन ने मुँह खोल ही दिया कोई मच्छरों का बन्दोबस्त तो कीजिए बीबीजी। नित कहते हैं आपसे। एक पल को आँख नहीं लगती। सारी रात कानों के पास बीन बजती रहती है। हम तो फाड़ फाड़ के खा गए मर साले के।

उफ! ओ ससुरे! धारियों वाले सूट में पड़े सरदार ने ज़बान काटी ' कमबख्त कितना अशिष्ट है। न अदब न सलीका। आँखों के आगे अखबार करता वह दिल में खिसिया गया।

'आज दवा छिड़कती हूँ सारी जगह सिकुड़न उसके माथे पर उसी तरह पड़ी रही मच्छर यहाँ हैं ही बहुत। मूर्ख अर्जुन की गुस्ताखी को नज़रअन्दाज़ करते हुए वह अपने अन्दाज़ में कहती गई दवाई तो मिलती नहीं वार्ड के लिए पूरी ऊपर से हुक्म देते रहते हैं मक्खियाँ मारो मच्छर मारो। दवाइयाँ कोई नहीं देता। सुना-सुनाकर कहते हुए उसने जरा मुँह बनाया और साथ ही कनखियों से छः नम्बर की ओर देखकर ऊँची पर सुरीली बोली में आवाजें देने लगी जगतसिंह। वसीलाल। आ गुरबचन। उसका अभिप्राय था कि कोई जना अन्दर आ जाए कोई भी।

जगतसिंह वार्ड का नौकर था वसीलाल आपरेशन थियेटर का नौकर था और गुरबचन स्वीपर था अभी जिसकी जिम्मेदारी वार्डों-बरामदों को साफ रखने से लेकर नर्सों-कम्पाउंडरों के बच्चे खिलाने साग-सब्जी लाने डाक्टरों और सजनों के बूट साफ करने और वार्ड के मरीजों के मल-मूत्र साफ करने तक थी। नर्स की आवाज़ पर न जगतसिंह बोला न वसीलाल चौंका जहाँ एक के ऊपर दूसरा और दूसरे के ऊपर

तीसरा हुक्म करने वाला होता है। यहाँ हर किसी का दिल थोड़ा बहुत मचल मारता। हाकिम समझने और अपमानित करने का हौसला हो है। जगतसिंह समझता था कि नर्सें उसके नीचे हैं। जगतसिंह मानता था कि नर्सें उसके अधीन हैं। नर्सों के दिमाग़ में कि डाक्टरों को छोड़कर वे हर किसी से काम ले सकती हैं। पर गुरुबचन स्वीपर को इस तरह का कोई भ्रम नहीं था। वह अच्छी तरह जानता था कि जितनी भी यह दुनिया है सारी उससे ऊपर है। और आप वह किसी से भी ऊपर नहीं है और इस बात का बदला वह सबकी अवहेलना करके लेता था। लेकिन इस समय सुबह-सुबह होने के कारण शीतपाल नर्स की उसकी अवहेलना करने की ओर बाएँ टाँग से लँगड़ाता वह अन्दर आकर पूछने लगा, 'हाँ, क्या हुआ?'

'भाई, ज़रा जाकर फौरन फ्लिट ले आ, मच्छर मारें। बसी के पास पड़ा है।'

'बसी के पास फ्लिट नहीं है।' बीच ही में उसने बात काट दी।

'फिर कहाँ है? अगर उसके पास नहीं है? टाल रहे हो?' उसने थर्मामीटर को झटककर पाँच नम्बर बेड के पास जाते हुए मौन होकर कहा।

'नहीं जी, सौंह गऊ की, टालता नहीं। मेडीकल वालों के पास गई हुई है, झूठ नहीं कहता।' बिना आँख नीचे किए उसने ढीठ होकर कहा।

'सर्जिकल वार्ड की चीज़ मेडिकल वाले क्या ले गए?'

'ले न जाएँ, वे तगड़े हैं। जो तगड़ा होगा, ले जाएगा।'

'साला! नाक पर मक्खी नहीं बैठने देता।' अर्जुन उसके मुँह की ओर देखता आख़िर हँसने लगा।

'अच्छा राउंड हो चुका है या नहीं?' नर्स बेचारी ने बात का रुख मोड़कर अपनी प्रतिष्ठा बचाते हुए पूछा। क्या पता यह उल्लू का पट्ठा ऐसे ही कोई गुस्ताखी कर बैठे। उसे तो छः नम्बर पर पड़े पेशेंट का लिहाज मारे जाता था।

'राउंड?' वह थोड़ा चौंका और फिर मुँह खोलकर खड़ा रहा। उसे ध्यान ही नहीं था कि आज राउंड हो चुका है या नहीं।

तभी बड़ी ही प्यारी और सत्कार भरी आवाज़ आई, 'नहीं सिस्टर, अभी तक कहाँ आए राउंड करने डाक्टर साहब।' छः नम्बर के बेड से अख़बार को हटाकर स्वच्छ आँखें उसकी तरफ देखने लगीं।

'जी!' एकदम चौड़े और सुन्दर माथे पर से झूठे रोब की बनी सिकुड़न साफ हो गयी और उसके स्थान पर कानों तक सच्चा हुस्न दौड़ गया। 'हाँ-हाँ,' उसने एक अदा से घड़ी देखी और प्रकटतः अपने आपको पर भीतर से किसी और को सुनाने के लिए ज़रा मुँह बनाकर बोली, 'अभी तक राउंड नहीं हुआ यार? सवा दस तो हो चले हैं।'

दरवाज़े का स्प्रिंग चीखा। बगल में लड़का सम्भाले मैले कुचैले कपड़ों वाली चली आ रही थी। नर्स यद्यपि जानती थी कि यह अर्जुन की पत्नी है, सवर्ण उस्ताद की, फिर भी उसने निर्लिप्त भाव से कड़ा होकर कहा, 'बीबी, बाहर रहो, बार बार दरवाज़ा न खोलो, गन्दगी आ रही है, मक्खियाँ आ रही हैं।' दिल में उस

खयाल था कि क्या कहेंगे देखने वाले कि यही उसका प्रबन्ध है ?

पर वतो बिना उसकी ओर ध्यान दिये अन्दर चली गई। वह जानती थी कि यहाँ तो बर्तन ऊट ही लदते हैं।

सब चाट भरकर नम मेज के निकट कुरसी पर बैठ गई। और टोकरी में स स्वेटर निकालकर घुरे डालने लगी, खाली बैठा क्या आदमी मक्खियाँ मारे जाए ?

दरवाजा फिर खोल पडा। प्रोफेसर साहब का कोई दोस्त फला का लिफाफा पकड़ आ रहा था। शान्ति से सलाइयाँ घुरे टालती गई।

दरवाजा फिर खोल पडा और बार-बार चौखट पर ठक ठक बजने लगा। कितने मे लोगों का समूह अन्दर घुसा आ रहा था।

'भाई, अन्दर मत आओ। आना ही है तो एक बार ही नहीं बारी-बारी आओ, एक एक कर आओ। समझ भी जाया करो।' तेज हाकिमाना आवाज में वह बोली।

किन्तु समझ किसे थी ? गाँवों के साधारण लोग कभी कभी ही तो ऐसी जगहा पर आते हैं। भीड़ भाड़ में ही वे अपने अपने आदमियों के पलगो के पास खड़े हो गए।

कुछ नही, भाई आराम आ जाएगा

दु ख आते हैं घाड़ की चाल जाते हैं चींटी की चाल " आर वाल मरीजा का हौसला बढ़ाते थे।

दरवाजे की ओर दृष्टि करके एकदम अर्जुन कहने लगा, ' लड़का सँभाल ला मेरे पट स एक फूक लगवाकर सिलगट बुझा दो झट स। उसने पास खड़ी वतो को सकेत किया सामने धीरे धीरे, बगल में गठरी दबाए उसकी सास चली आ रही थी।

नाती का प्यार देकर गोद में लती बुढ़िया कापते मुर्झाए हाथो से दामाद का सर सहलाने लगी, "क्या हाल है मल्ल, अब तुम्हारी चोटा का ?"

माथा झुकाकर प्रणाम करता अर्जुन बोला ' अब तो अच्छा हूँ पहले स, बब। अब तो मैं बच गया समझ, अब मैं नहीं मरता।"

शुक्र है पुत्तर। बुढ़िया ने पाटी छूकर माथा नवाया। वाहगुरु तुझे उमर द, कुछ लिया दिया आ गया सामान नहीं बाकी कुछ न छोड़ा था हरामियो ने।

कोई नही, बेबे, तू कुछ फिक्र न कर जरा हड्डियो में जोर आने दे देखना एक एक का कान के छोड़ूगा।

' वे काहे पुत्तर ? जो कोई करेगा, आप ही भरेगा। अब तू वैर न करना।'

ना बेबे, बदला तो मैं जरूर लूगा और सीना ठाक कर लूँगा।'

बुढ़िया चुप कमरा देखती रही, आगे कुछ न बोली। अर्जुन की उलटी मति स उसका कलेजा दहल रहा था।

रुककर अर्जुन फिर बोला और तो मुझे किसी पर ज्यादा गुस्सा नहीं पर सवण को नहीं छोड़ूगा। उसने भाई बनके दगा दिया। आना था तो ललकार के आता। मैं तो उस समय नशे में धुत आ रहा था।

बुढ़िया ने एक आह भरी और फटी हुई नजर सारे कमरे में दौड़ाने लगी है वाहगुरु। उसके मुह से निकल गया। कितने बड़े बड़े जवान अस्पताल के पलगो

पर लाल कम्बल ओढ़े गर्दनें गिराए पड़े थे। "दुखों का अंत नहीं।" उसने दर्द भरे स्वर में कहा और एक क्षण के लिए उसे लगा कि सारी दुनिया बीमार पड़ी हुई है। फिर उसकी दृष्टि घूमकर नर्स पर आ रुकी। रूप और जवानी ऊपर से सुंदर सफेद कपड़े देखकर वह हक्की बक्की रह गई। लड़की यह भी तो किसी की लड़की है हाँ भाई क्या पार है दुनिया का। उसने नर्स और अपनी लड़की के बीच पूरी एक दुनिया का अंतर जानकर दिल में कहा।

अब तो बहुत हो चुका था, इससे अधिक अब हो भी क्या सकता था? डाक्टर अभी आजाए तो कोई कुछ नहीं कहेगा जिम्मेदारी तो उसी की है सारी। और नर्स ने अब पूरी तरह कठोर होकर ऊँचे स्वर में कहा "भाई एकदम वार्ड खाली कर दो सब। कोई न रहे अन्दर, फौरन बाहर हो जाओ। डाक्टर आने वाले हैं।" हल्की-सी सिकुड़न फिर उसके माथे पर आ गई।

सब धीरे धीरे खिसकने लगे। प्रोफेसर का दोस्त चप्पलें पटकता सीटी बजाने लगा। अर्जुन की सास गठरी में से सिवइयाँ और आटा खोलती अपनी बेटी के साथ बाहर चली गई।

'आज डाक्टर लेट है शायद' कलाई को देखकर नर्स ने कहा कौन सा खास वक्त तय होता है उनका। वह अपने ही आप लेकिन जैसे किसी को सुनाकर बोली।

बाहर बरामदे में, परे बूटों की खट्-खट् हुई। जानी पहचानी पदचाप थी। डाक्टर आ गए हैं शायद सलाइयों के ऊपर स्वेटर लपेट टोकरी में फेंकती वह कुरसी से उठ खड़ी हुई। जगतसिंह दौड़कर पनाई किनार हाथ में पकड़े जल्दी जल्दी वार्ड में मक्खियाँ मारने लगा। बसीलाल बरामदे में तेज-तेज घूमने लगा और वहीं गुरबचन फ्लिट लेकर वार्ड की दीवारों पर डी०डी०टी० के फव्वारे छोड़ने लगा।

अर्जुन मुस्करा पड़ा सौ मारे जो जोर से मरे सालो को, गिने एक ना, अब आना है ना बाप में। धीरे से होंठों में वह बुदबुदाया।

झट दरवाजा खोलकर स्टेथस्कोप गले में डाले प्रफुल्ल प्रसन्न चेहरा वाले डाक्टर अन्दर आ गए। सिविल सर्जन, साथ में डाक्टर कुंदनसिंह और सर्जन इन्द्रजीत। हाथ जोड़कर सलाम करता सारा अमला पीछे हो लिया। नहीं सी मीठी वाणी में हाल चाल पूछते वे बारी-बारी मरीजों के पास खड़े होते जाते थे कोई तकलीफ तो नहीं? कोई तकलीफ हो तो बताएँ? वे हर किसी से पूछते।

नहीं जी, कोई तकलीफ नहीं अर्जुन ने उत्तर दिया था पर उसी समय दिल में यह भी कह रहा था कि तकलीफें तो बहुत हैं डाक्टर साहब पर आप को बताकर भी क्या कर लेंगे? काम तो फिर तुम्हारे इसी अमले से पड़ना है।

राउंड खत्म होने लगा। डाक्टरों को एकाध सलाह सिविल सर्जन ने दी। दरवाजे के सामने पहुंचकर अपने अफसर के सामने डाक्टर ने अमले को थोड़ा सा कसा और फिर सब चले गए।

जगतसिंह ने आँख मारी बसीलाल खाँसा नर्स ने कुछ मुँह बनाया, गुरबचन हँस

पन्ना और फिर समझो, चारो तरफ अपना राज हो गया ।

दरवाजा फिर बजा, 'बतन लाओ, भाई दूध वाले !" बाल्टी और डिब्बा पकडे वाला बावर्ची ने आवाज दी ।

आ धीरे धीरे दरवाजा छोडकर, काकासिह, कितनी बार कहा है तुझे ।' तेवर डालकर नर्स बोली ।

'अच्छा अच्छा आगे ख्याल रखूँगा ।' काका ने उत्तर दिया ।

प्रोफेसर ने नाक सिकोडा, 'कैसे बदतमीज हैं ये ?"

'मैंने आप से कहा नहा सरदारजी ?' सामने बैठा अर्जुन हँसा ।

डोली म से मरीज बतन निकालने लगे । जब अर्जुन के बतन मे दूध पडने लगा तो उसने डाँटा 'बडी जल्दी आ गए ? यह दूध पीने का वक्त है ? ग्यारह बजे ? घण्टे म रोटी लेकर आ खडे होगे ।'

क्या करें ? ठेकेदार जब दूध लाये तभी तो मैं लाऊँ । मैं क्या अपना सिर फोडूँ ? मडन की तरह बावर्ची बोला ।

'अगर तुम्हारे दूध पर रहें तो हो गये ठीक ।"

'अच्छा अच्छा अब ले लो । और न लेना हो तो न लो । लोटे मे दूध डालता काका बावर्ची कहता गया ।

स्प्रिंगवाले किवाड एक पल को कब्जो पर रुक गए । ड्रेसिंग करने वाली पेशेंट ट्राली अन्दर आ रही थी ।

'पट्टियाँ कराने वाले, हो जाओ भाई तयार ।" ट्राली के पीछे मे पतले और मेंढक जैसे रंगवाले करमसिंह कम्पाउडर ने लम्बी आवाज लगाई ।

आ गया यह कसाई । अर्जुन धीरे बुदबुदाया । करमसिंह कम्पाउंडर उसे बहुत बुरा लगता था । वह इतना बेरहम था कि सीधे सुआ हड्डी म घुसेड देता । पटटी करता चुभा चुभाकर । और भी कई कम्पाउडर थे पर पता नही वह क्यो ऐसा था ।

इन्दरसिंह के पलग के पास ट्राली आकर रुक गई । आज उसकी पटटी थी ।

क्या हाल है इन्दरसिंह ?' इन्दरसिंह की टाँगो के कटे हुए ठूठों पर से जल्दी जल्दी पट्टी खोलते हुए करमसिंह ने ऊँचे स्वर म कहा ।

अच्छा है वह होठो म से कहने ही लगा था कि जख्म पर से रुई उखडने से उसकी सी निकल गई ।

तू ऐसे सी-सी न किया कर, इन्दरसिंह । रहने दे अब नखरे को । अब तो तू अच्छा भला है । रूखे और खुरदरे लहजे म करमसिंह ने ऊँची आवाज म फटकारा ।

इन्दरसिंह नाक सिकोडकर पीला चेहरा गिराए पडा रहा ।

गदा मास काटने के बाद जख्मो पर फाहे रखकर करमसिंह कहने लगा, 'ले, भाई जगतसिंह अब बाँध दे पटिटयाँ ।

बाँध दे अब तू ही यार । जगतसिंह ने उत्तर दिया ।

'क्या ? मैं क्यो बाँधू भला ? ड्यूटी मेरी है या तेरी ? मेरा काम तो सरदार जी,

"अच्छा भाई अब सारे हटो। कोई हम न बुलाये।" कहते हिदायत डाक्टर ने सम्बन्धियों से कहा और आप भी वहाँ से चला गया।

अद्ध घण्टे की गहरी खामोशी चारों तरफ तान लगी तो नये आये मरीज के जख्मों में दर्द जागने लगा। क्लोरोफार्म की बेहोशी धीरे धीरे दूर हो चली थी। एक-दो रातें उसकी हालत विशेष ध्यान की माँग करती थी। उसके लिए डाक्टर एक बार फिर वार्ड में आया था।

नौ साढ़े नौ हो चुके थे पर नींद किसी को नहीं आ रही थी। नींद आज किसी को आती भी कम ? तीन नम्बर के ऊँचे-ऊँचे कराहने की आवाजें सारे वार्ड में सुनाई दे रही थीं।

बाहर घास पर चौकड़ी इकट्ठी हो गई। जगतसिंह असिस्टेंट बंसीलाल आपरेशनवाला करमसिंह कम्पाउंडर काका बावर्ची और गुरबचन स्वीपर सारी सीमाएँ तोड़-ताड़कर खुली रात में आ बैठे थे। उनमें से कई की आज नाईट-ड्यूटी लगी हुई थी। सारी बातें छोड़ कर जगतसिंह ने मतलब की कही, "क्या भाई बाबू करमसिंह तनख्वाह आई कि नहीं अभी ?"

"अभी कहाँ आई तनख्वाह ?" करमसिंह ने मुँह लटकाया।

बंसीलाल बोला, "देख लीजिए अन्धेर जनवरी की अभी तक नहीं आई आज मार्च की इक्कीस जा रही है। इसे कहते हैं अन्धेर गर्दी। अन्धे की कलम में ताकत नहीं मालूम होती।" उसने सिविल सर्जन को कहा जिस की ऐनक पर बहुत मोटे शीशे थे।

"अभी कई इक्कीस गुजरेंगी बेटा। यह कांग्रेस का राज है तू चिन्ता क्यों करता है ? तेल देख तेल की धार देख।" लेखराम ने हँस कर कहा।

"सिविल सर्जन का क्या है भाई एक हजार डकारता है। वह तो बैंक में से निकाल निकालकर खाता जाएगा। मुश्किल तो हम गरीबों के लिए है—साठ-साठ वालों के लिए।" काका बावर्ची बोला।

फिर एक कहकहा उठा।

एक पल बाद काका बोला, "हाँ आज वाला वह मरीज कहाँ से आया है जिसकी गोली निकाली गई है जाँघ में से ?"

झट करमसिंह उठ खड़ा हुआ, "लो भाई मैं काम भूल गया एक..." और अगले क्षण वह जा चुका था।

वार्ड में सब ठीक ठाक था। कराहने की आवाजें धीमी होते होते अब दब गयी थीं। साढ़े दस से ऊपर का समय था। तीन नम्बर के पलंग के पास जाकर करमसिंह ने ऊँचे स्वर में कहा, "उठ, भाई आ नाहरसिंह।" स्लीपिंग डोज उसके हाथ में था।

कई मरीजों की शान्ति भंग हो गई। पर नाहरसिंह गहरी नींद सोया रहा। अब जाकर उसे नींद आई थी। नींद का झोंका आखिर सूली पर भी आ ही जाता है।

"वह तो बेचारा आराम से पड़ा है..." आधे सोये-से अर्जुन ने कहा।

"नहीं जी दवाई तो देनी ही है, कौन खाएगा यह कल को ?" कहते हुए नाहरसिंह

का कंधा हिलाकर करमसिंह और ज़ोर से बोला "उठ भाई ओ! सुनता नहीं?
हड़बड़ाकर जख्मी जागा और तीव्र पीड़ा से फड़फड़ाने लगा, 'हो-हो-हो ।"
'ले पकड़, दवाई पी।' करमसिंह ने हाथ बढ़ाया।
ओए ओए। ना-ना नीद खराब होती है।"
'ले पकड़, पी ले, पी ले, नीद की ही दवाई है यह। जबरदस्ती करमसिंह ने गिलास उसके मुंह से लगा दिया और नाहर ने आँखें मीच कर नीद आने की दवाई पी ली।
'वाह भाई, वाह! यह भी खूब है। करमसिंह के चले जाने पर प्रोफेसर के मुंह से निकला, "नीद से जगाकर नीद की दवाई देना हमारे देश में ही होता है।
'मैं कहता नहीं था, सरदारजी?" फटी-सी आवाज में अर्जुन बोला 'यही तो मैं चिल्लाता रहता हूँ। बस, एक बात मेरे बस में नहीं है, यदि मेरे बस में हो "
और आगे अर्जुन वही कुछ कहने लगा जो वह बराबर कहता रहता था।
धीरे से सरदारजी ने टोका, "नहीं अर्जुना, सभी ऐसे नहीं होते हैं।
'मैंने कहा आप मान जाइए सरदारजी, आपको पता नहीं।'
"नहीं अर्जुना, नहीं।"
'लो आप मानते नहीं पर मैं तो सौ की एक जानता हूँ झूठ हो तो पकड़ लीजिए। बस एक तरफ से गंडासा फिरने वाला है।
अपने अपने पलँगों पर कई मरीज हँस पड़े।

वारिश

बूटासिंह, १९२०

बूटासिंह का स्थान पंजाबी कहानीकारों की प्रथम पंक्ति में आता है। इन्होंने अब तक लगभग १०० कहानियाँ लिखी हैं।

फिर परिचित समस्याओं को नई दृष्टि से उभारना और [illegible] को परम्परा की [illegible] में प्रस्तुत करना इन की कला-[illegible] का प्रमुख चरित्र-लक्षण है। बूटासिंह हमारे नागरिक जीवन की ग्रामीणता प्रस्तुत करने में सिद्धहस्त हैं।

प्रकाशित कहानी-संग्रह— लो पुकार दी।

कई दिनों से हो रही बारिश से वह तंग आ गई थी। जब रात को बारिश होती तो उसे अपनी चारपाई मकान की ढकी हुई गली में बिछानी पड़ती। चारपाई बिछाने से रास्ता रुक जाता और दोनों तरफ से आने जाने वालों से उसकी नींद उचाट हो जाती। वह सो न सकती। चारपाई पर पड़ी वह अपने आपको पंखे से हवा देती रहती। अरे नन्द स्वरूप देख हमारी भी क्या जिन्दगी है! असली भर रुपये किराया देते हैं मगर रात को इस गली में ही सोना पड़ता है, और वह भी नाली के किनारे।

सामने कमरे से पढ़ाई में व्यस्त आनन्द स्वरूप जवाब में हाँ ठीक है जी कह चुप हो जाता। वह फिर अपने आपको पंखा करती रहती। मालिक मकान की ज्यादतियों पर उसे क्रोध आता, परन्तु नींद न आती।

चाहे उसके बाल अभी सफेद नहीं हुए थे परन्तु शरीर भारी होने के कारण वह कुछ बड़ी उम्र की नज़र आती। और सब उसे भाई जी कहते। उसका जवान बेटा भी उसे भाई जी कहता था और कुछ महीनों से आई बहू रानी भी भाई जी ही कहने लग गई थी।

सब उसके पुत्र और बहू की तारीफ करते। कितनी सुन्दर जोड़ी है। किस कदर मीठे हैं दोनों, आँख में पड़े महसूस नहीं होते और माँ के आगे पीछे 'भाई जी, भाई जी' करते रहते हैं। इस बेचारी ने देखा ही क्या है पति की मृत्यु के बाद? सारी जवानी इस लड़के के पीछे बरबाद कर दी है। फिर लड़का 'माँ जी, माँ जी' क्या न करे, बहू रानी भी तो हाथ लगने से मैली होती है। कितनी मीठी है। जब वह अपने बेटे और बहू की तारीफ सुनती तो उसकी आँखें बन्द हो जातीं। उस की आत्मा जुड़ा जाती। वह बहू को बरतन न मलने देती। उसे कोई मैला काम न करने देती, कहीं उसके कोमल सुन्दर हाथ मैले न हो जाएँ।

इकट्ठे बैठे बेटे और बहू को देखकर परदे खींच देती और आप बाहर दहलीज के पास छोटी खटिया बिछा कर पड़ोसिन लड़की से बातें करती रहती ताकि किसी को पता न लग सके कि उसका पुत्र और बहू अन्दर बैठे हैं। वह अवसर सोचती वे कौन सी कमबख्त माएँ हैं जो अपने बेटा और बहुआ को लोगों के सामने नंगा करती हैं, उनकी गुप्त बातें बताती हैं। यही तो उम्र होती है हँसने खेलने की। फिर तो गृहस्थ के धंधे ही साँस नहीं लेने देते। फिर कहाँ मिलेगी फुरसत इकट्ठे बैठकर हँसने की।

ऐसी बातें सोचती वह कई बार अपने आप मुस्करा देती। उसके मुँह से झट निकल जाता "मूर्ख है मूर्ख मरा लड़का। सब लोग कहते हैं 'भाई जी, आपका रघुनाथ बड़ा लायक है'" परन्तु मैंने तो उसकी कोई लायकी नहीं देखी। वह अपने पिता की तरह बेपरवाह और भोला है। सोया हुआ हो तो चादर लेने की सुध नहीं रहती बड़ा लायक बना फिरता है। मैं आप उठ उठ कर कपड़ा देती रहती हूँ। जब से कान्ता रानी आई है वह और भी सुस्त हो गया है। न तो कान्ता को होश रहती है वह कहाँ पड़ी है न ही रघुनाथ को। अब मैं भला अच्छी लगती हूँ इनके कपड़े सीधे करती। दोनों हो मूर्ख हैं कल दोनों कम सोये पड़े थे बेनाम ज़माने के। पंखे के नीचे से उठने को किसी का दिल नहीं चाहता। और बस उड़ उड़ जाते थे उनके कपड़े इतनी तेज हवा में। जब मैंने आवाज दी तो कान्ता रानी झट अपने कपड़े समेट खाट पर जा पड़ी। जैसे मैंने कुछ देखा ही नहीं। वह समझती है भाई जी तो कुछ जानती ही नहीं। अरे मैं पास हूँ तो पर्दे दे दे रखती हूँ, अगर पास न रहूँ तो हो न इनकी बदनामी

आज उसको फिर नींद नहीं आ रही थी। वह करवट बदलती अपने आपको पंखा करती तो उसके बाजू थक जाते। कभी पास से गुजरने वाले पर उसे गुस्सा आ जाता। परन्तु जब उसे खिड़की के भीतर पंखे की हवा से पर्दे उड़ते नज़र आते तो उसका मन चाहता वह भी अपनी चारपाई उठा कर भीतर जा घुसे उसे गहरी नींद आ जाए ना ऐसे ख्यालों से छुटकारा पाए। भीतर उसका पुत्र और बहू सोते थे। दोनों हो बड़े भोले हैं। सोए हुआ को होश नहीं रहती। रघुनाथ कान्ता का हाथ यों पकड़ कर सोता है जैसे वह कहीं भाग जाएगी।

ज्यों ज्यों वह अपने बहू और बेटे के बारे में सोचती उसे और भी अधिक गर्मी लगती। और उसका ध्यान पंखे से हिलते पर्दों की ओर जाता। पर्दे हिलते, बत्ती जलती। जब वह गौर से इन सबकी ओर देखती तो उसे बहू और बेटे की हँसने की

आवाज सुनाई देती, और कभी चीखने की वह सोचती, इनकी बात ही नहीं खत्म होती। न ही इनकी बत्ती बुझती है और न ही मुझे नींद आती है सामने आनन्द सरूप बत्ती जगाये रखता है, और पास से इन की खुसर फुसर नहीं खत्म होती।

सावन भादों क्या आता उसकी जान पर बन जाती। कहाँ सोए किधर जाए? ऐसी बातें सोचते सोचते जब उसने करवट बदली तो उसे कोई चीज चुभ गई। वह झट उठ बैठी। उसे ऐसे लगा मानो किसी ने पत्थर का टुकड़ा चुभा दिया हो। उसने अपने बिस्तर को हाथ से टटोला तो उसका हाथ अपनी रुद्राक्ष की मोटी माला पर जा पड़ा जिसे वह प्रातः उठकर फेरती थी। आज उसे माला पर गुस्सा आ रहा था और उसका दिल चाहता था इसे बाहर फेंक दे जिसने उसका कमर में दर्द पैदा कर दी है। मगर वह उस माला को बाहर कैसे फेंक सकती है जिसे उसने अपने गुरु देव से प्राप्त किया था। चाहे उसे माला का बहुत सत्कार था परन्तु उसकी चोट भी तो बहुत करारी थी।

वह खाट पर बैठी अपने आपको पंखा कर रही थी और सोच रही थी इस तरह जागते-जागते वह पागल हो जाएगी। उसका सिर फट रहा था। खिड़की के पीछे अभी तक पर्दे हिलते नजर आ रहे थे, बत्ती जल रही थी। और सामने कमरे में बैठा आनन्द सरूप पढ़ रहा था। उसकी परीक्षा सिर पर थी। नहीं तो आजकल अन्दर कहाँ बैठा जाता है। पिछले दिनों बेचारे को बुखार हो गया था। कोई पानी तक देने वाला नहीं था। उसने कितनी बार आनन्द सरूप को चाय बना दी और वह कहता भाई जी आप को बहुत तकलीफ दी है।' बेचारे की न माँ न बाप।

कभी-कभी उसे नींद का झोंका आ जाता, तो उसके हाथ से पंखा गिर जाता। उसकी नींद उचाट हो जाती। एक शरीर भारी उस पर गर्मी का जोर कहाँ सोया जाए? उसे अपने आप पर गुस्सा आ रहा था इतने में उसके बहू पुत्र के कमरे से एक अजीब सी आवाज सुनाई दी। उसने खिड़की की ओर देखा। पंखे की हवा से पर्दे हिल रहे थे। और वे दोनों अभी तक बातें कर रहे थे। वो सोते क्या नहीं? इतनी रात तक जागने का क्या काम है। उसके जी में आता कि उठ कर आवाज दूँ अब सो जाओ मगर वह आवाज न दे सकी और वैसे ही बैठी रही।

वह पर्दे हिलते देख रही थी बत्ती जलती देख रही थी। और उसके मन में विभिन्न प्रकार के भाव उठ रहे थे। इतने में अन्दर से आवाज सुनाई दी। 'आप तो मरवा देते हैं चाहे मेरी जान निकल जाये। यह आवाज सुनकर उसके माथे पर बल पड़ गये और उसके जी में आया कि आवाज दूँ अम्मा से कहना या कुछ खिला पिला कर भेजती

अभी ये विचार उसके मन में चक्कर लगा रहे थे कि आनन्द सरूप बाहर निकला। उसने आवाज दी सरूप तू सोया नहीं?'

सो रहा हूँ भाई जी

आज तो सरूप बहुत गर्मी है। नींद ही नहीं आती।'

आप सोती भी तो वहाँ हैं जहाँ हवा न लगे।

"जगह ही नहीं, बारिश ने तंग कर रखा है।'

'भाई जी जब बारिश हो आप मेरे कमरे में खाट बिछा लिया करें, पंखा तो है।"

'तुम्हारी पढ़ाई न खराब हो।"

मेरी पढ़ाई क्या खराब होनी है ?'

वह जानता था कि जब उसे बुखार हुआ था तो भाई ने उसकी कितनी सेवा की थी।

मैं आपकी खाट उठा लेता हूँ। आप अपना बिस्तर उठा लें।

उसने आनन्द सरूप ने छोटे से कमरे में खटिया बिछा ली तो उसकी जान में जान आई। पंखा चल रहा था, पसीना अब ठंडा-ठंडा लग रहा था।

आनन्द सरूप सो गया। और वह भी लेट गई। पंखा चल रहा था। नाईट-लाइट जल रही थी। परन्तु उसे नींद नहीं आ रही थी। उसे अनुभव हो रहा था, जैसे उसके कानों में अभी तक बहू और बेटे की बातें सुनाई दे रही हैं आप तो मुझे मरवा देते हैं कांता रानी बड़ी भोली लड़की है भला ऐसे भी चिल्लाया जाता है। मरोड़ा जाए कोई भाग्यवान हमने भी तो वे दिन देखे थे कभी ऊँचा सांस नहीं लिया था। सास ननद पास लेटी रहती। आजकल के लड़के-लड़कियाँ कितने खुल गए हैं। न किसी का लिहाज न शर्म। सुन दरवाजे खोल आते हैं इतना ख्याल नहीं करते कि भाई भात उठता है अपना आप समेट लें। उसे पुत्र और बहू की ऐसी हरकतें याद आने लगीं तो अपना आप गन्द से भरा प्रतीत होने लगा। वह उठ कर बैठ गई। उसने पास ही सोये हुए सरूप की ओर देखा। वह बेसुध सोया हुआ था। उसके बाल बिखरे हुए थे और उसका एक हाथ भाई की खाट की ओर लटक रहा था। कितना फासला था उसके और भाई जी की खाट में बालिश्त डेढ़ बालिश्त। यह भी कोई बहुत बड़ा फासला होता है ?

वह उठ बैठी, और सरूप के मुंह की ओर देखती रही। उसके बिखरे बाल बंद होंठ और लटकते हाथ की ओर कितनी देर तक निहारती रही। उसने सोए हुए सरूप को एक बार सिर से लेकर पाँव तक इस तरह देखा जैसे उसकी लम्बाई नाप रही हो। कितना लम्बा हो गया है दिनों में लम्बा-लम्बा प्यारा-प्यारा।

उसके जी में आया, सरूप के माथे पर बिखरे बाल पीछे हटा दे उसके मुंह को हाथ से छुए और अपने होंठों को उस के चमकते होंठों पर रख दे। उसका दिल धक धक करने लग गया। उसने कई बार अपने ख्यालों को रोकने का प्रयत्न किया, परन्तु जब भी उसकी नजर सरूप की ओर पड़ती उस की धड़कन तेज हो जाती। वह सरूप के लटकते हुए हाथ को देखती कितना फासला है दोनों की खाटों में ! यह भी कोई फासला होता है ?

अब उसके मुंह से गर्म-गर्म साँस आ रही थी और वह अपने आप को रोक रोक रखती मगर उसका ध्यान सरूप की ओर से न हटता।

वह समझ रही थी कि इन ख्यालों का कारण नीली नाइट-लाइट है। जिसको

चमक सरूप के मुह पर पडती है और वह बिना देखे रह नही सकती। उसने उठकर छोटी बत्ती को बुझा दिया और जब वह लेटने लगी तो उसका हाथ सरूप के हाथ पर जा पड़ा उसे अनुभव हुआ जैसे उसके शरीर के भीतर बिजली दौड रही है। उसका हाथ काँप रहा था। उसका शरीर काँप रहा था, मगर उसने अपना हाथ सरूप के हाथ से न उठाया। अब उसकी कपकपी हट गई थी परन्तु उसका हाथ सरूप के हाथ मे वैसे ही पडा रहा जैसे रघुनाथ के हाथ मे क्राता रानी का हाथ।

वह कितनी देर वैसे ही लेटी रही। फिर किसी आवेग मे आकर वह उठ बैठी। उसने धीरे धीरे सरूप का हाथ अपनी छाती से लगाया अपनी आँखो से लगाया और अपने हलके गालो से छुआ चूमा। वह कितनी देर ऐसा ही करती रही और उसे ऐसे अनुभव हुआ जैसे सब डर उड गये है।

साथ वाले कमरे से घडी का अलारम बजा तो उसने सरूप का हाथ छोड दिया और झट से बत्ती जगा दी। वह काँपती टाँगो से उठी और बिस्तर लपेटने लगी। जब खटिया उठाने लगी तो चारपाई की आवाज से सरूप की आँख खुल गई। उसने आँखे मलते हुए कहा भाई जी, मालूम होता है आपको नीद नही आई '

हाँ।

जल्दी से खाट उठाते हुए फर्श पर गिरी रुद्राक्ष की माला उसके पाँव मे पडी थी। उसे महसूस हुआ जैसे माला के आधार पर बनाई फौलादी दीवार आज की बारिश ने चूर चूर कर दी है।

दूध की तलैया

कुलवन्तसिंह विर्क, १९२१

नई पीढ़ी के सशक्त कथाकारों में कुलवन्तसिंह विर्क अग्रगण्य हैं। विर्क की कहानियों में मास्टर टच जैसा एक स्पर्श है जो उनकी लोकप्रियता में बहुत सहायक हुआ है। विर्क ने ग्राम्य जीवन के केवल बाह्य स्तर को ही नहीं देखा बल्कि उसकी आत्मा को भी पहचाना है। शहरी मध्यवर्गीय जीवन का चित्रण भी उन्होंने बड़ी कुशलतापूर्वक किया है।

प्रकाशित कहानी-संग्रह 'शाह वेला', 'धरती ते आकाश', 'तूड़ी दी पंड', 'एकस के हम बारक', 'दुद्ध दा छप्पड़', आदि।

संगृहीत कहानी 'दूध की तलैया' ग्राम्य जीवन के एक पारिवारिक चित्र को बड़ी मार्मिकता से प्रस्तुत करती है।

चचेरे भाई होने के नाते लाल तथा दयाल का आपस में बड़ा स्नेह था। वे खेती भी इकट्ठी करते थे। गाँव के अन्दर एकता का बड़ा प्रभाव पड़ता है। दो सगे भाइयों की अपेक्षा यदि चचा-ताऊ के बेटे आपस में मिल कर चलें, तो उन्हें और भी बड़ी ताकत समझा जाता है। कारण कि ऐसा मेल बहुत कम देखने में आता है। दो सगे भाइयों का मिलकर रहना तो स्वाभाविक है। इसीलिए गाँव वाले इन दोनों—लाल और दयाल का नाम लेते थे। मजदूरों को काम के लिए बुला सकना उनके लिए आसान था, क्योंकि वे तुरन्त उनका कहा मान लेते थे। गाँव की गलियों के अन्दर चलना उन्हें सुहाता था क्योंकि वहाँ उन पर पड़ने वाली दृष्टि आदर भरी होती थी।

बिना प्रयास के मिले इस आदर के अतिरिक्त उनका खाने जोतने का काम भी सुगमतापूर्वक चलता था। मिलकर रहने से वे दो हलों की जुताई करते थे। एक मज

दूर रख लेने मे प्रतिदिन उनम कोई एक आराम कर सकता था और काम भी निर्विघ्न चलता रहता था।

यदि जोत केवल एक हल की हो तो एक तो उसम आनन्द नहा आता, दूसरे वह काबू म भी नही रहती। अकेले रहते हुए खुद को तो पशुओ के साथ पशु बनना ही पडता है यदि कोई मजदूर रखा हुआ हो तो गुजारा नहा हो सकता।

यह इकट्ठी खेती जिस तीसरे आदमी को पूरा आराम देती थी वह था दयाल। दयाल गौर वर्ण का सुदर नखशिखवाला भरे बदन का जवान था। दिन क पहले पहर तो वह खेतो म जाकर थोडा-बहुत काम करता परन्तु पिछले पहर वह नित्यप्रति उजले कपड पहनकर गाव के अन्दर गश्त लगाता रहता या फिर चौपाल मे बैठकर गप्पें हाकता रहता। लोग उसमे आख मिलाकर बातें करके खुश होते।

परन्तु गाँव वालो और दयाल को मिल रही यह खुशी केवल लाल के कारण थी, जिस गरीब को बाद म सारा काम करना पडता।

'कल तू पिछले पहर गाँव स बाहर ही नहा निकला। गहूँ के खेत को बाड देनी थी। दो आदमियो को तुझे पता है बाड देने म बडी मुश्किल होती है।' लाल कभी गिला करता।

'वैसे ही आलस आ गया। गाँव म थानेदार आया था। मैंने सोचा कुछ बातो का पता लगेगा।' दयाल धीमे स्वर मे उत्तर देता और लाल आगे कुछ न कहता।

लाल की पत्नी को भी दयाल अपने घर घूमता हुआ दिखाई देता। लाल जिस समय खेता म काम पर होता उनके घरो की साझी दीवार के उस पार दयाल की पगडी इधर उधर घूमती दिखाई देती। कभी वह अपने लडके को गोद मे उठाकर एक लकडी का टुकडा हाथ म ले बढई के घर की ओर चल देता और वहा स बालक क लिए गाडी आदि बनवा लेता। कभी अपनी पत्नी का साग काटने का हसिया उठा कर उस लुहारा क यहा तेज करवाने ले जाता और कभी सत्तो जुलाहिन क सिर पर चरखा उठवाकर उसकी तकली सीधी करवाने के लिए चल देता।

उधर लाल की पत्नी के सारे काम बिना हुए पडे रहते। दयाल के घर म घूमती हुई पगडी तथा वहा स आती हुइ आवाज उसक मन म कई आकाक्षाए जगाती—यदि कही लाल भी इस समय घर आ सक तो वह उसे गरम दूध पीने को दे गाव क अन्दर जाने क लिए उस उजले कपड पहनाये और जब तक वह कपडे पहन तब तक उसकी पगडी को कलफ लगा दे। अभी तक तो उसे न कपड धोने म आनन्द आता था न कपड पहनवाने म। आठ इस दिनो म लाल कभी रात को सोने समय धुल कपड अपने सिर हाने रखवा लेता और सुबह उठकर मैले कपडे सिरहाने रखकर धुले कपडे पहन लेता। लेकिन जल्दी ही वे फिर मैले हो जाते और अगले कई दिनो तक वह उन्हे ही पहन रहता। काश कहीं लाल भी दयाल की तरह शाम घर पर बिता सकता।

और जब वह रात को घर को आता तो वह उसे डाँटती तू कोई उसका नौकर! रखा हुआ है। स्वय तो वह नवाब बना गाँव म घूमता रहता है और तू वहाँ मिट्टी म मिट्टी बना रहता है।

'गाँव के अन्दर घूमने में क्या रखा है। पानी लगाने के बारे में बात करनी थी इसलिए वह आया था।' लाल बात को टालता और फिर दिलासा देते हुए कहता, 'कभी कोई हल आदि ठीक करवाना रहता है, कभी कोई रस्सी बटनी होती है कभी किसी आदमी को काम के लिए कहना होता है—गाँव में आने के ऐसे सैकड़ों काम रहते हैं।

"गाँव में काम रहते हैं, तो तू भी आ जाया कर। क्या यह जरूरी है कि गाँव के सारे काम वही करे ?'

'अच्छा, मैं आ जाया करूँगा इसमें कौन सी बात है। वह कह देता है कि मैं चला जाता हूँ। मैं कह देता हूँ अच्छा तू ही चला जा।

लाल इस प्रकार आने को कह तो देता, परन्तु वह आता कभी न। इस साँझे में असल में वह अन्दर की ओर का बैल था। वह भोर तारे के साथ उठ जाता और अपने मजदूर के साथ हल जोतने को निकल पड़ता। दयाल बाद में दिन चढ़े उठकर भैंसों को बाहर निकालता उन्हें घास डालता और फिर उन्हें दुहता। वह पशुओं के खाने योग्य घास काटकर रख देता, उन्हें खोलकर बाहर घुमा लाता और फिर उन्हें अपने अपने स्थान पर बाँध देता। शाम को वह किसी टोली के साथ बैठकर शराब पीता कभी कहीं बैठकर ताश खेलता रहता। कभी अखबार की खबरें सुनता और उन्हें कहीं समझने की कोशिश करता। खेती का सारा भार दिन प्रतिदिन लाल के ऊपर पड़ता जा रहा था। दयाल हमेशा दोस्ती गाँठने और अपना रसूख बनाने में लगा रहता। साझेदारी में ऐसा ही होता है। एक पक्ष अधिक काम करता और दूसरा कम। जब तक अधिक काम करने वाला पक्ष चुप किए रहता है, साझेदारी चलती रहती है और जहाँ उसे अधिक काम खटकने लगा उसी समय साझेदारी टूट जाती है।

फसलों की कटाई के बाद एक दिन लोहारों के लड़के किसानों के यहाँ गेहूँ की पूलियाँ इकट्ठी कर रहे थे। लाल किसी और किसान के खलिहान में बैठा था। लोहार का एक लड़का उस किसान से पूली माँगने आया। उस लड़के का साथी सिर पर पूली रखे पास ही रास्ते में से गुजर रहा था।

'यह पूली तुम कहाँ से लाये ?' किसान ने पूली माँगने आये लोहार के लड़के से दूसरे लड़के के सिर पर रखी पूली के बारे में पूछा।

'यह तो वहाँ दयाल के खलिहान से लाये हैं।'

लाल ने यह बात सुनी तो उसे अपना खून जमता सा प्रतीत हुआ। खलिहान तो साझे का था लेकिन उस पर अकेले दयाल का नाम चल रहा था। काम में व्यस्त लाल का तो अपनी भूमि और उस की पैदावार से नाम मिटता जा रहा था। उसने दयाल से पृथक होने का फैसला कर लिया। फसल की कटाई के बाद वैसे ही ये जोतों को बदलने के दिन थे।

अनाज तो हर बार वे बाँटते ही थे अब उन्होंने भूसा भी अलग-अलग कर लिया। भैंसें अपने अपने खूँटों पर अलग बाँध ली गयीं। एक थोड़े दिनों की ब्याई भैंस की थोड़ी मुसीबत थी। उसकी बछिया मर चुकी थी। वह दयाल से हिली हुई थी किसी—

और को दूध न देती थी। लाल ने कुछ दिना तक उसको चने के आटे में नमक घोल-कर पिलाया, अपने हाथों उसे घास खिलाया, अपने हाथ की हथेली पर दूध की धारें डालकर उसे चटायीं और फिर दूध की धारें अपने मुँह में भरकर उसकी फुहारें उसके नथनों पर डालीं। ये सब उपाय करने से धीरे धीरे भैंस उसको दूध देने लग गयी। लेकिन दयाल से भैंस का मोह फिर भी बना रहा। जब कभी वह खुल जाती सीधी जाकर उसके पास खड़ी हो जाती या उसकी भैंसों में शामिल हो जाती।

भैंस का दयाल के साथ प्यार बना रहा किन्तु लाल व दयाल आपस में एक-दूसरे से दूर होते गये। खेत उनके पास पास होने के कारण पशु खुलकर कभी कभी एक-दूसरे के खेत में चले जाते। इस पर बड़ी-बड़ी तकरारें होतीं। ऐसे अवसर पर दोनों में से कोई कम न बोलता। कोई अपने आपको छोटा कहलवाने को तैयार न होता। जब दयाल की छोटी सी बछिया लकड़ी के फिरके में से निकलकर सारी रात लाल के सींचे हुए शलगमों को रौंदती रही तो दयाल अकड़ कर बोला मैं बछिया के साथ बंधने से तो रहा। इन छोटे छोटे जीवों का कोई पता है कि कब दायें-बायें से निकल जाते हैं।

और अगले दिन जब लाल की घोड़ी साकल समेत दयाल की फूली हुई कपास के पौधे तोड़ती और गिराती रही तो लाल ने रूखे स्वर में कहा, घोड़ी तो कपास को मुँह नहीं लगाती। पौधे तो उस समय टूटते हैं जब कोई साकलवाली घोड़ी को पीछे से धमकाता है। यदि उसे आराम से निकाला जाता तो पौधे नहीं टूटते।"

दयाल को इस बात से बड़ा क्रोध आया। शलगम तो आखिर खाने की चीज थी, लेकिन कपास तो पैसे वाली फसल है। खैरियत अभी तक यही थी कि लाल और दयाल दोनों में से किसी ने अभी एक दूसरे से उलझने की नहीं ठानी थी।

कुछ दिना बाद वर्षा हुई। दयाल के पास बाहर एक छाया हुआ घेरा था। लाल ने अभी तक कोई ऐसा घेरा नहीं बनाया था फिर भी वह दयाल के घेरे में जाकर सिर छुपाने को राजी न था। उसका शहतूत का पेड़ था उसके नीचे कुछ बचाव हो सकता था। वर्षा होती रही और एक चादर ओढ़कर वह उस पेड़ के नीचे ही बैठा रहा। गाँव भर में यह बात फैल गयी। शहतूत के पेड़ पर बगलों के घोंसले थे। लोग खिल्ली उड़ाने लगे ऊपर बगले स्नान करते रहे, नीचे लाल नहाता रहा।

इस घटना के बाद यह चर्चा आम हो गयी कि एक न एक दिन लाल और दयाल में लड़ाई जरूर होगी। कोई कहता दयाल तगड़ा है, वह मारेगा। दूसरा दलील देता, लाल के अन्दर गुस्सा बहुत है वही मारेगा।

ये सब चर्चाएँ लाल की पत्नी के कानों तक भी पहुँचतीं और वह कभी कभी घबरा कर पूछती 'सुना है दयाल तेरे साथ उलझने को उतावला है।'

मेरे साथ उलझकर अपनी मौत बुलाएगा वह। वह तो मेरे पास खड़ा तक नहीं हो सकता। लाल तन कर उत्तर देता।

अपने आपको ऊँचा दिखाने के लिए एक दिन तो लाल सब सीमाएँ पार कर गया। गेहूँ की फसल बोने के पहले दयाल अपने खेत में खाद बिखेरना चाहता था। गाड़ी का

रास्ता लाल के खेत म मे होकर था। खेत को अभी जोता नही गया था, इसलिए उसम स गाडा ले जाने म कोई हानि नही थी। लेकिन जब दयाल गाडी ले आया तो लाल लट्ठ लेकर अपनी खटिया के ऊपर खडा हो गया और उसने दयाल को गाडी वापस ल जाने पर मजबूर कर दिया।

रात के समय लाल ने जब यह बात अपनी पत्नी को बतायी तो उसको विश्वास हो गया कि दयाल जरूर उसके पति स डरता है। दयाल को भी अपनी हालत अखरने लगी थी। अब वह खाहमख्वाह लाल के साथ उलझने पर उतारू था।

एक दिन सूरज डूबने के थोडी देर बाद लाल अपनी घोडी पर सवार गाँव की ओर आ रहा था। रास्ते म पानी की एक नाली पर दयाल एक और आदमी के साथ बैठा शराब पी रहा था। लाल और दयाल ने एक-दूसरे को देख लिया। नाली पार करने के लिए घोडी की चाल धीमी करनी ही थी। लाल के हाथ म एक खाली लोटा था।

'कौन है ?' दयाल स्वर को जरा लटकाते हुए बोला।

'मैं हूँ।' लाल ने कडकती आवाज मे कहा और फिर तरऊ-तरऊ करके घोडी को पानी पिलाने लगा जस वह कह रहा हो आ जाओ मैं तो खडा हूँ। लेकिन आया कोई नही और लाल घोडी को पानी पिलाकर चल दिया। घर आकर लाल ने अपनी पत्नी को बताया मैंने सोच रखा था कि अगर वह आगे आया तो उसके सिर पर लोटा दे मारूँगा। घोडी पर सवार आदमी वस भी चार आदमियो से भारी होता है। जिसे चाहे घोडी के नीचे डालकर रौंद दे।"

'शाबाश!' लाल की पत्नी न कहा।

फिर एक रात थोडी बूदाबांदी हुई। शरीर पर पडी बूदो से पैदा हुए आलस्य के कारण लाल ने तडके भस को घास न डाली। घास की भूख स तुनकी भस न मोकल खीचकर वर्षा के कारण ढीला हुआ खूटा उखाड लिया। काफी दिन चढने पर लाल उठकर बाहर रास्ते म घूमती भस को पकड लाया और बैठकर उसे दुहन लगा। भस की मोन आज बहुत गम थी। ऐसा लगता था जसे किसी ने पहले उसे दुहा हो अब केवल दान क लालच म ही वह दोबारा दूध दे रही हो। लेकिन दुह कौन सकता है? दयाल के अलावा वह किसी और को तो पास फटकने तक नहीं देती। उस दयाल न ही इस दुहा होगा। दो-दो, चार चार धारें निकलन के बाद चारो स्तन खाली हो गये।

लोटे क अन्दर तीन चार गिलास दूध की जगह सिफ करीब एक गिलास दूध था। अब क्या होगा। दयाल न बहुत ही मूखता की थी। अपनी पत्नी से लाल अब क्या कहे? उसे पता था कि दयाल द्वारा भस को दुहाकर अपनी पत्नी के आगे वह चुपचाप कसे बठ सकता था। वह भस के स्तनो को हाथ म लिये अकारण ही बैठा रहा, पर और अधिक धारें न निकल सकी। दूध की आखिरी बूदें भी समाप्त हो चुकी थी। अचानक लाल को एक तरकीब सूझी। जमीन पर गिरे दूध के बारे म यह अदाजा लगाना मुश्किल है कि वह मात्रा म कितना है। थोडी मात्रा मे गिरा दूध भी बहुत सा मालूम देता है। यदि वह लोटे के दूध को गिरा दे, तो वह अपनी पत्नी स कह सकता

है कि भैंस ने जोर लगाकर दूध गिरा दिया । हाथ में पकड़ा हुआ दूध का लोटा उसने उलट कर दिया । वर्षा के कारण सब ओर कीचड़-ही-कीचड़ था और कहीं-कहीं पानी की छोटी छोटी तलैया भी बनी हुई थी । इस कारण गिरा हुआ दूध और अधिक मालूम हो रहा था । लोटे का पेंदा जिस पर दूध लगा था ।

दूध तो आज गिरा दिया लाडी ने । उसने अपनी पत्नी से आकर कहा ।

“हाय हाय ! कैसे ?”

मैंने टाँग उठाकर लोटे पर मारी और लोटा उलट गया ।

असल बात सोमा को क्या मालूम थी । पत्नी को आज पहले बिना दूध के रहने की बात पर गुस्सा आ रहा था ।

नहीं मारा न क्या होगा । किसी मक्खी ने काट लिया होगा । मक्खी के काटने से, पशु बेबस हो जाता है । है तो बेचारी बड़ी अच्छी ।

चूल्हे के पास से उठकर पत्नी भैंस के पास आयी । असाधारण कोई घटना को देखने की उत्सुकता हरेक के अन्दर जाग उठती है ।

“हाय कितना सारा दूध था । तलैया भरी पड़ी है दूध की ।” कहकर उसने सास के मन को शांत कर लिया ।

ए शाला डाकात

गुरमुखसिंह जीत, १९२२

गुरमुखसिंह पजाबी के एक ग्रालोचक भी हैं ग्रौर कहानीकार भी। ग्रमृता प्रीतम की काव्य कला ग्रौर समकालीन पजाबी कहानी पर उनकी ग्रालोच्य पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। समकालीन पजाबी उपन्यास पर उनकी पुस्तक शीघ्र ही प्रकाशित हो रही है।

जीत के पजाबी में तीन कहानी-सग्रह प्रकाशित हो चुके हैं— काले ग्रादमी' 'धरती सोन सुनहरी', 'दसवाँ ग्रह'।

'केमान दादा ?

भाना ग्राछी ! नमस्कार।'

मुकर्जी बाबू के जुडे हुए हाथ नीचे ग्राते हुए कुरते की जेब म गये ग्रौर उसम से नस्वार की डिब्बी निकाली। बायें हाथ की हथेली पर थोडी सी रखकर उसने मसलते हुए दोनो नासिकाग्रो म थोडी-थोडी चढाई। उसे मामूली सी छीक ग्राई ग्रौर इसके पश्चात् वह चटर्जी बाबू स कुशल-क्षेम पूछने लगा।

हर रोज की तरह ग्राज भी मुकर्जी रात का खाना खाकर घर से बाहर टहलने क लिए निकल ग्राया था। कलकत्ता निवासियो की तरह उससे भी मई मास की गर्मी सहन नही हो रही थी। वह खाने से निपट कर ग्रपनी पत्नी के साथ दो चार बातें करता ग्रौर जल्दी-जल्दी हवा की तलाश म मैदान म ग्रा जाया करता। कई बार तो वह ग्रपने मुह का कुल्ला भी बाहर ग्राकर ही फेंकता। उसका हृदय घर म बहुत ही घबराने लगता था। ग्राज भी उसने ग्राड होटल के निकट बठे एक पनवाडी स तम्बाकू-वाला पान लिया ग्रौर एक सिगरेट उसके यहाँ सुलग रही रस्सी म सुलगाई। फिर

वह आहिस्ता आहिस्ता चौरंगी पार करता मानुमेन्ट के पास से गुजरता हुआ मैदान की सड़कों पर चक्कर लगा रहा था। इसी समय उसे उसका मित्र चटर्जी बाबू मिल गया था।

ट्राम की कंडक्टरी के हल्ले-गुल्ले से तंग आया हुआ चटर्जी बाबू भी कुछ सहारे के लिए मैदान की सड़कों के चक्कर काट रहा था। दोनों दोस्तों ने एक मेड़ा में हो रहे एक पसारा युद्ध के सम्बन्ध में बात चीत करने लगे। बातचीत के दौरान अपनी धोती को ठीक करते हुए चटर्जी बड़े जोश के साथ बोला — ट्राम कम्पनी वाला। महंगाई को तो निश्चय करता फिर हमें भी करना मांगता। हम लोग का वतन नहीं बढ़ान सकता एक पैसा किराया बढ़ती करना मांगता।

मुकर्जी बाबू इस बात से पहले ही तंग बैठा था। उसका वेतन बहुत थोड़ा होने के कारण उसका गुजारा भाग ही नहीं हो रहा था। और उसके सिर पर कर्ज का भार चढ़ता जा रहा था। इधर ट्राम कम्पनी ने एक पैसा की टिकट बढ़ा दिया था। इस एक पन के युद्ध से उन को पूरी सहानुभूति थी। उसने फिर नम्बार चढ़ाह और अपने दफ्तर में हुई हड़ताल की बात सुनाने लगा। वह हड़ताल इस युद्ध के साथ सहानुभूति व्यक्त करने के लिए की गयी थी।

कलकत्ते में इस आन्दोलन ने बहुत अधिक जोश पैदा किया हुआ था। लोग स्थान स्थान पर दल बनाकर खड़े हो जाते और इस आन्दोलन के सम्बन्ध में बातें करते। देखने वाले भी कई इस एकत्रित भीड़ में बड़ी उत्सुकता से आकर सम्मिलित हो जाते और अपने पीड़ित भावों को व्यक्त करते।

जिस समय मुकर्जी और चटर्जी बाबू बातें करते मैदान की सड़कें पार करते विक्टोरिया मेमोरियल के सामने पहुंचे तो उन्हें एक पेड़ के नीचे भारी भीड़ इकट्ठी हुई दिखाई दी। उन्होंने देखा कि मैदान के हर ओर से लोग भागते हुए इस भीड़ की ओर आ रहे हैं। बट के नीचे बहुत भारी शोर होता सुनाई दे रहा था पर दूर होने के कारण उन्हें कुछ समझ में नहीं आ रहा था। अपनी धोतियों के किनारों को मजबूती से हाथों में सम्भालते हुए वे भी उत्सुकता से भाग रहे लोगों के साथ-साथ शीघ्रता से पग उठाते बट के नीचे पहुंच गये।

उनका सांस फूल गया लम्बे सांस लेते हुए उन्होंने लोगों से बात पूछने का प्रयत्न किया परन्तु सभी लोग बट के ऊपर की ओर देखकर शोर करते जा रहे थे — शाला डाकात। ऊपर बैठा नजर आता।

हम उसको देखा रहा, रेसकोरस रोड से इधर भाग आया ए शाला डाकात। भीड़ में से किसी ने बड़े भेद भरे ढंग से कहा।

शाला चोरी सामान का थैली भी हाथ में पकड़ा रहा — एक अन्य बाबू ने भी अपनी जानकारी लोगों को बताई।

एई शाले का और साथी तो रहा। शाला भाग गिया। मूंगफली बेचने वाले किसी लड़के ने लोगों का ध्यान अपनी ओर खेंचते हुए कहा।

ए शाला डाकात

लोगो मे तरह-तरह की आवाजें उठ रही थीं। कुछ लोगों को वट की घनी शाखाओं और पत्तों में कुछ दिखाई नहीं दे रहा था। पर वे भी हर नये आने वाले को यही बात बताते थे कि वट के ऊपर एक डाकू चढ़ा हुआ है।

फिर अचानक पत्तियों की खर-खर हुई और बिजली के खम्भे के प्रकाश में लोगों ने देखा कि ऊँचे लम्बे वट के शिखर पर एक बिलकुल नंगा मटमैले रंग का कोई व्यक्ति था। अपने आप को नटक रहे एक रेशे से बाँध कर एक शाखा के किनारे पर बैठा था। उसको देखते ही लोगों ने और अधिक शोर मचाना आरम्भ कर दिया था। कइयों ने उसको नीचे आने के लिए मनुहारा। 'नीचे नव एशो रे ए ए' जोर जोर से चिल्लाया। पर उस पर इस प्रेरणा का भी कोई प्रभाव नहीं हुआ।

'ए शाला डाकात'—किसी ने बड़ी खुरदरी आवाज से कहा—'पाथर मारो।' इससे वट के ऊपर पत्थरों की वर्षा शुरू हो गयी। वह बहुत ऊँचा बैठा था। जिस किसी को पत्थर न मिलता वह वट के नीचे पड़े वटबटठे ही मारने लग जाता ताकि वह भी डाकू को काबू करने की वीरता का भागीदार बन सके। जिस समय कोई पत्थर उसके नजदीक पहुँचता वह रस्से में बँधा हुआ होने के कारण बन्दर की तरह एक शाखा से झूल कर दूसरी पर जा बैठता।

कई लोगों में उसके लिए हमदर्दी भी जागृत हो गयी थी कि कहीं गिर कर बेचारा मर ही न जाय। बूट पालिश करने वाले एक लड़के ने अपने बक्से को जमीन पर रख कर अपना हाथ मुँह के आगे जोड़ उसको मरने के खतरे से परिचित कराते हुए नीचे उतर जाने के लिए जोर से आवाज दी, "मारे जावे नेवे एशो रे ए ए।" पर वह जैसे समझ ही नहीं रहा था, या उसे बात सुनाई ही नहीं दे रही थी। उस पर किसी भी प्रेरणा का प्रभाव नहीं हो रहा था।

गश्त करते-करते पुलिस के कुछ सिपाही भी भीड़ में आकर सम्मिलित हो गये, और वे सारी बात को समझने का यत्न कर रहे थे। बल्ब की रोशनी में पहिचानने की कोशिश करते हुए भीड़ में से ट्राम कम्पनी के किसी कर्मचारी ने उसे आवाज दी 'नेवे ऐस, दिल बहादुर दादा।' पर इसका भी उस पर कोई प्रभाव नहीं हुआ। तब सिपाही ने लोगों से डाकू के सम्बन्ध में पता लगने पर दौड़कर विक्टोरिया मैमोरियल में फायर ब्रिगेड को टेलीफोन किया। ब्रिगेड वाले तुरन्त अपने सभी साजो सामान सहित वहाँ पहुँच गये। कुछ रात अँधेरी थी और कुछ वट के पत्ते भी बड़े घने थे। फायर ब्रिगेड वालों को ऊपर दिल बहादुर दिखाई ही न दिया। इसके अतिरिक्त वह भी टारजन की तरह कूदकर एक शाखा से दूसरी शाखा पर चला जाता था। अपनी जान बचाने के लिए वह अपना स्थान बराबर बदल रहा था क्योंकि नीचे से अब भी कई बाबू डाकू को पत्थर मार रहे थे। फायर ब्रिगेड वालों ने दिल बहादुर की तलाश करने के लिए वड़ पर सर्च लाइट फेंकी। सर्च लाइट के प्रकाश में बड़ के साथ के वृक्षों के लाल-लाल फूल और फल चमक पड़े। उस चौंधिया देने वाले प्रकाश में दिल बहादुर का मटमैला गठा हुआ शरीर भी वट के घने पत्तों में अलग उभर दिखाई दे गया। लोगों में उसे पकड़ने की उत्सुकता बढ़ती जा रही थी। उनके विचार

वह आहिस्ता आहिस्ता चौरंगी पार करता मानुमटम के पास से गुजरता हुआ, मैदान की सडको पर चक्कर लगा रहा था। इसी समय उसे उसका मित्र चटर्जी बाबू मिल गया था।

ट्रामो की कडकटरी के हल्ले-गुल्ले से तग आया हुआ चटर्जी बाबू भी कुछ सहारे के लिए मैदान की सडको के चक्कर काट रहा था। दोनो दोस्तो ने एक लडके से चीना बादाम लिया। एक एक दाने को बडे रस के साथ तोड कर खाते हुए वे नगर में हो रहे एक पसारा युद्ध के सम्बन्ध में बात चीत करने लगे। बातचीत के दौरान अपनी धोती को ठीक करते हुए चटर्जी बडे जोश के साथ बोला एई शाला डाकात ट्राम कम्पनी वाला। महँगाई का तो निन्दा करता फिर छाँटी भी करना माँगता। हम लोग का वेतन नही बढाने सकता एक पसा किराया बढती करना माँगता।

मुकर्जी बाबू इस बात से पहले ही तग बठा था। उसका वेतन बहुत थोडा होने के कारण उसका गुजारा आगे ही नही हो रहा था। और उसके सिर पर कर्ज का भार चढता जा रहा था। इधर ट्राम कम्पनी ने एक पसा की टिकट बढा दिया था। इस एक पसे के युद्ध से उन की पूरी सहानुभूति थी। उसने फिर अखबार पढाई और अपने दफ्तर में हुई हडताल की बात सुनाने लगा। वह हडताल इस युद्ध के साथ सहानुभूति व्यक्त करने के लिए की गयी थी।

कलकत्ते में इस आन्दोलन ने बहुत अधिक जोश पदा किया हुआ था। लोग स्थान स्थान पर दल बनाकर खडे हो जाते और इस आन्दोलन के सम्बन्ध में बातें करते। देखने वाले भी कई इस एकत्रित भीड में बडी उत्सुकता से आकर सम्मिलित हो जाते और अपने पीडित भावों को व्यक्त करते।

जिस समय मुकर्जी और चटर्जी बाबू बातें करते मदान की सडकें पार करते विक्टोरिया मेमोरियल के सामने पहुचे तो उन्हे एक पेड के नीचे भारी भीड इकट्ठी हुई दिखाई दी। उन्होने देखा कि मदान के हर ओर से लोग भागते हुए इस भीड की ओर आ रहे है। बट के नीचे बहुत भारी शोर होता सुनाई दे रहा था, पर दूर होने के कारण उन्हे कुछ समझ में नही आ रहा था। अपनी धोतियों के किनारों को मजबूती से हाथों में सम्भालते हुए वे भी उत्सुकता से भाग रहे लोगों के साथ-साथ शीघ्रता से पग उठाते बट के नीचे पहुँच गये।

उनका साँस फूल गया लम्बे साँस लेते हुए उन्होने लोगों से बात पूछने का प्रयत्न किया परन्तु सभी लोग बट के ऊपर की ओर देखकर शोर करते जा रहे थे शाला डाकात। ऊपर बठा नजर आता।

हम उसको देखा रहा रसकोरस रोड में इधर भाग आया ए शाला डाकात। भीड में से किसी ने बड़े अन्दाज भरे ढंग से कहा।

शाला सारा सामान का पैसे भी हाथ में पकडा रहा एक [illegible] बाबू ने भी अपनी जानकारी लोगों को बताई।

एई स्यान को और माया तो रहा। शाला भाग गिया। मूँगफली बेचने वाले किसी लडके ने लोगों का ध्यान अपनी ओर खींचते हुए कहा।

लोगो म तरह-तरह की आवाजें उठ रही थी। कुई लोगो को वट का घना शाखाम्रो और पत्ता म कुछ दिखाई नही दे रहा था। पर वे भी हर नये आने वाले को यही बात बताते थे कि वट के ऊपर एक डाकू चढा हुआ है।

फिर अचानक पत्तिया की सरसर हुई और बिजली के खम्भे के प्रकाश म लोगो ने देखा कि ऊँचे लम्बे वट के शिखर पर एक बिलकुल नगा मटमले रग का कोई व्यक्ति था। अपने आप को लटक रहे एक रेने स बाँध कर एक शाखा के किनारे पर बैठा था। उसको देखत ही लोगा न और अधिक शोर मचाना आरम्भ कर दिया था। कइयो ने उसको नीचे आने के लिए मनुहारा। नीचे नवे एगो र ए ए जोर-जोर स चिल्लाया। पर उस पर इस प्रेरणा का भी कोई प्रभाव नही हुआ।

" साला डाकात,' किसी ने बडी खुरदरी आवाज स कहा पत्थर मारो। इसस वट के ऊपर पत्थरो की वर्षा शुरू हो गयी। वह बहुत ऊँचा चढा था। जिस किसी को पत्थर न मिलता वह वट के नीचे पड़े बटबटठे ही मारने लग जाता ताकि वह भी डाकू को धराशायी करने की वीरता का भागीदार बन सके। जिस समय कोई पत्थर उसके नज दीक पहुचता वह रेने स बँधा हुआ होने के कारण बन्दर की तरह एक शाखा स झूल कर दूसरी पर जा बठता।

कई लोगो म उसके लिए हमदर्दी भी जागृत हो गयी थी कि कही गिर कर बेचारा मर हो न जाय। बूट पालिश करने वाले एक लडके ने अपने बक्स को जमीन पर रख कर दोना हाथ मुह के आगे जोड उसको मरने के खतरे से परिचित कराते हुए नीचे उतर जाने के लिए जोर से आवाज दी, मारे जाव नवे एयो रे ए ए।' पर वह जैसे समझ ही नहा रहा था, या उसे बात सुनाई ही नही द रही थी। उस पर किसी भी प्रेरणा का प्रभाव नही हो रहा था।

गश्त करते करत पुलिस के कुछ सिपाही भी भीड म आकर सम्मिलित हो गये, और व सारी बात को समझने का यत्न कर रह थे। बल्ब की रोशनी म पहिचानने की कोशिश करते हुए भीड म से ट्राम कम्पनी के किसी कमचारी न उसे आवाज दी, नवे एसे दिल बहादुर दादा । पर इसका भी उस पर कोई प्रभाव नही हुआ। एक सिपाही न लोगो से डाकू के सम्बन्ध म पता लगने पर दौडकर विक्टोरिया मैमोरियल म फायर ब्रिगेट को टेलीफोन किया। ब्रिगड वाले तुरन्त अपन सभी साजो सामान सहित वहा पहुच गय। कुछ रात अधेरी थी और कुछ वट के पत्ते भी बडे घन थे फायर ब्रिगेड वालो को ऊपर दिल बहादुर दिखाई ही न दिया। इसके अतिरिक्त वह भी टारजन की तरह कूदकर एक शाखा स दूसरी शाखा पर चला जाता था। अपनी जान बचाने के लिए वह अपना स्थान बराबर बदल रहा था क्योकि नीचे स अब भी कई बाबू लोग को पत्थर मार रहे थे। फायर ब्रिगेड वालो ने दिल बहादुर की तलाश करने के लिए वड पर सर्च लाइट फकी। सर्च लाइट के प्रकाश म बड के साथ के वृक्षा के लाल-लाल फूल और फल चमक पडे। उस चौधिया देने वाले प्रकाश म दिल बहादुर का मटमला गठा हुआ शरीर भी वट के घने पत्ता म अलग उह दिखाई दे गया। लोगो मे उसे पकडने की उत्सुकता बढ़ती जा रही थी। उनके विचार

में यह डाकू बड़ा साहसी और बहादुर था जो मैदान में ही एक वृक्ष पर चढ़कर किसी की पकड़ में नहीं आ रहा था। भीड़ में से कहीं-कहीं अब भी आवाजें उठ रही थीं 'ए शाला डाकात पाथर मारो' मारे जाबे 'नेब एन रे ए ए ।'

सर्च लाइट के प्रकाश में दिल बहादुर की आँखें चौंधिया गयी थीं। अब वह पहले जैसी सुविधा से तमाशा पर घूर नहीं रहा था। लाइट की सीध में फायर ब्रिगेड वालों ने अपनी उस बड़ी सीढ़ी को जोड़ा जिसे खोलकर उसकी लम्बाई बढ़ा सकते भी ऊँची जा सकती थी। ब्रिगेड के कर्मचारी सीढ़ी खोलते गये और साथ-साथ ऊपर चढ़ते गये। जब सीढ़ी बड़ के पहले पत्ते के पास पहुँची लोगों की उत्सुकता तीव्र होती गयी। उनकी साँसें कोई बड़ी उपलब्धि के लिए रुक गई और वे डाकू के पकड़े जाने की प्रतीक्षा करने लगे। तब ही जब सीढ़ी दिल बहादुर से चार फुट के लगभग नीची थी कि उसमें कुछ मशीनी गड़बड़ हो गयी और आगे न खुल सकी। उस समय फायर मैनों की निराशा के अतिरिक्त खड़े लोगों की भीड़ की निराशा भी देखने योग्य थी। सभी हैरान थे कि यहाँ तक पहुँच कर भी डाकू काबू में नहीं आ रहा। उन सबकी बहादुरी को डाकू चुनौती देता मालूम होता था।

अपने यत्नों की असफलता पर सटपटाते हुए फायर मैन सीढ़ी को ठीक करने में लगे थे और इस सारे समय में सर्च लाइट बराबर दिल बहादुर पर पड़ रही थी। कभी कभी यह लाइट चक्कर खाकर साथ के वृक्षों के फूलों और फलों को चमका जाती। लोगों का जोश कम होने के स्थान पर बढ़ता ही जा रहा था। इसी तरह भीड़ भी बढ़ती जा रही थी।

इससे पूर्व कि फायर ब्रिगेड वाले सीढ़ी उतारें अथवा कोई अन्य यत्न करें एकाएक पत्तों की खड़खड़ाहट के साथ लोगों ने देखा कि डाकू ने अपने आपको टहनी से खोल लिया है और वह लंगूरों की तरह शाखाओं पर कूदता नीचे आ रहा है। लोगों की साँसें वहीं रुक गई। सबकी नजरें सर्च लाइट के प्रकाश में बड़ के शिखर पर लगी हुई थीं। उन्हें यह डर लगने लगा कि वह अभी गिर कर मर जायेगा।

मुकर्जी बाबू ने चटर्जी बाबू के कन्धे पर हाथ रखते हुए अपने डर को बड़े जोर से व्यक्त किया 'मारे जाबे दादा रे ए ए।'

अब भीड़ के किसी कोने में से भी पाथर मारो की आवाज नहीं आ रही थी। रुकी हुए साँसों से सबकी आँखें दिल बहादुर का पीछा कर रही थीं। वह आहिस्ता-आहिस्ता बड़ के शिखर से नीचे उतर रहा था। जैसे-जैसे वह नीचे आता जा रहा था लोगों को कुछ सन्तोष होता जा रहा था। जिस समय वह बिलकुल नीचे की शाखा के पास पहुँचा 'पकड़ो रे धरो रे के जाने पाबे न' की आवाजें ऊँची होने लग गयीं। नस्वार चढ़ाते छींकें मारते चीना बादाम खाते माथे का पसीना पोंछते हुए तथा बार-बार अपनी धोतियों के किनारों को सम्भालते कुछ लोग पुनः शोर करने लग गये ए शाला डाकात !

दिल बहादुर वहाँ पहुँच कर रुक गया जहाँ बड़ की दो शाखायें अलग अलग होती थीं। इसके साथ ही लोगों की जो साँस तनिक चलने लग गयी थी पुनः रुक गयी

और उनकी काना फूसी भी बन्द हो गयी। पर तुरंत ही दिल बहादुर ने उस स्थान से अपने मोटे-वाले बूट उठाये और पैरों में डाल कर बड़ी दीनता से नीचे उतर आया।

उसके जमीन पर उतरने की देर थी कि लोग उस पर टूट पड़े, परन्तु पुलिस के सिपाहियों ने उसे घेरे में ले लिया।

मुकर्जी और चटर्जी बाबू ने उसके चेहरे पर उभरी भूख और गरीबी देखी और उनके हृदय में उसके लिए सहानुभूति जागृत हो आई। दोनों ने मिलकर सिपाहियों की सहायता की और लोगों को दिल बहादुर से परे रखा।

दिल बहादुर के होंठ सूखे हुए थे। उसका पेट अन्दर को धंसा हुआ था। उसने एक फटी हुई निकर पहिन रखी थी और उसके शरीर पर स्थान-स्थान पर खरोंचें लगी हुई थी। चेहरे की अवस्था तो बहुत ही शोचनीय थी। इस तरह अनुभव होता था कि वह किसी अपरिचित स्थान से कलकत्ते के मैदान में आ गया है। वह बार-बार अपने पेट पर हाथ रख कर उसे दबाता और अपनी शुष्क जीभ को अपने सूखे होंठों पर फेरता हुआ बोलने का प्रयत्न करता। पर उसके मुंह से एक शब्द भी नहीं निकल रहा था, उसकी जीभ मुंह में ही चल चल करके रह जाती।

उधर लोग अधीर हो रहे थे। बड़ी कठिनता से उन्होंने डाकू को पकड़ा था। वे घर जाकर अपनी सो रही पत्नियों तथा सम्बन्धियों को जगाकर अपनी वीरता की वार्ता सुनाना चाहते थे। यह देर उनके लिए असह्य बनती जा रही थी।

मुकर्जी बाबू भाग कर नल पर गया और पानी का एक लोटा भर लाया। दो घूंट पानी पीने से दिल बहादुर की सांस तनिक ढंग से चलने लगी। अभी वह बोलने का मनुहार कर ही रहा था कि दुबला-सा लड़का भीड़ को चीरता हुआ आया और दिल बहादुर की कमर पर जोर से मुक्का लगाते हुए चीख पड़ा, 'शाला डाकात!'

इस पर पुलिस के सिपाहियों ने भीड़ को पीछे हटाया और दिल बहादुर को धीरज देते हुए उससे सारी बात पूछने लगे।

दिल बहादुर भी अपनी घायल हुई जीभ से इतना ही कह सका 'हम हम भूखा है बाबू।'

'शाला डाकात!' भीड़ में से एक आवाज पुनः उठी, शायद बोलने वाला कहना चाहता हो कि देखो दिल बहादुर ऐसे ही बनने की कोशिश कर रहा है।

इस समय तक ट्राम कम्पनी वाला बाबू जिसने बट पर बैठे दिल बहादुर को पहिचान कर आवाज दी थी भीड़ को चीर कर आगे आ गया। दिल बहादुर के हाथ को दबाता वह पूछने लगा 'तुम इधर कैसे? दिल बहादुर दादा।'

हम भूखा है भट्टाचार्य बाबू।

फिर भट्टाचार्य ने भीड़ को मुखातिब करते हुए कहा, दिल बहादुर खराब आदमी नहीं। हमारा माफक ट्राम कम्पनी में कंडक्टरी करता रहा। कम्पनी ने इसको नौकरी से निकाल दिया। हमारे दिल बहादुर को भूख लग नहीं सकती। अन्तिम वाक्य जैसे उसने दिल बहादुर को धीरज देने के लिए ही कहा हो।

लोटा अभी मुकर्जी के हाथ में ही था। उसने दिल बहादुर की रुकी सांस को देख

उसकी अजलि म पानी के दो घूट और डाले ।

भीड के दूसरे कोने पर जहाँ भट्टाचाय बाबू की आवाज नहीं पहुची थी कोई छींक मारता हुआ बोला 'शाला डाकात ! पाथर मारो।" परन्तु साथ खडे लोगा ने उसे ठडा किया ।

सूखे हुए होठो पर जबान फेरता हुआ दिल बहादुर बोलन का यत्न करने लगा। उसकी नजर भीड पर टिकी हुई थी पर वह पागलो की तरह देख रहा था । उसे यह समझ नहीं आ रही थी कि वह क्या कहे । कडवे थूक को गले म से बडी कठिनाई स गुजारते हुए उसके माथ पर बल पड गए ।

उसके पैर टूटी हुई चप्पलो स बाहर निकल रहे थे । फटी हुई निकर के कारण वह कोई गुदडी वाला भिखारी लगता था ।

जस जसे भट्टाचाय की बताई बात लोगो के पास पहुचती गयी लोगो का जोश ठडा पडता गया । भीड जो चुपचाप अपने परो पर खडी थी अब आहिस्ता आहिस्ता कम होन लग गयी थी ।

दिल बहादुर चुपचाप खडा टुकर टुकर देख रहा था। उसकी पथराई आखो की पुतलियाँ किसी समय फिरती हुइ लोगों पर एक नजर मार लेती थी । अपन खुरदरे शुष्क बालो पर हाथ फेरते हुए उसकी उगलियाँ उसम अड गयी । उसने जोर से झँझोडा जिससे उसके कुछ जुडे हुए बाल टूट गय । पीडा की दबी हुई टीस से उसके मुह का बोल खुनकर दिए की तरह हो गया । बालो को एक बार आखो के सामने करके उसने एक ओर फेंक दिया । फिर एक हाथ अपनी टाँगो की खरोचो पर फेरता हुआ बोला बाबू हम कल शाम मदान म बठा रहा कुछ बाबू लोग हमको ।

शब्द उसके मुह से रुक रुककर निकल रहे थे और उसकी आत्मा लोगो के व्यव हार म पीडित हुई उसकी जबान से बहुत कठिनाई के साथ शब्दो को बाहर धकेलन का यत्न कर रही थी ।

पाथर मारा रहा डाकात भी बोलता रहा हम पड पर चढ गया बात करते-करते उसने अपने पट को दोनो हाथो स जोर स दबाया और कुछ दद हाती व्यक्त की और साथ ही सिर चकरा जान स वह धम से जमीन पर गिर गया ।

उस समय तक लोगो का जोश समाप्त हो चुका था । कानाफूसी करत और छींकें मारत बड-बड करते अपन अपन रास्ते पर हो गय ।

सिपाही भी दिल बहादुर को छोडकर अपनी गश्त पर चले गय । चटर्जी बाबू न उसके अन्दर धँसे पट की ओर देखत उस सहारा देकर जमीन म उठाया और सहानु भूति म पुचकारते हुए कहने लगा दिल बहादुर दादा ! हमार साथ चलना माँगता। भात खाना माँगता ।

उनके साथ भट्टाचाय बाबू भी मिल गया था । मुकर्जी बाबू ही साथ था ।

बिखर रही भीड म स पानी की कहन वाला वह लडका जिसने पत्थर मारा था भाग हाथ जोडकर नम्रता म कहने लगा नमस्कार दादा ! तुमा आमार बधु ।

और फिर उसने बडा नम्र-सा मुँह बनाकर अनुनय विनय की आमा कि मिमा

करा दाना।

दिल बहादुर की भवें कुछ-कुछ ढीली हुई पर वह बोला कुछ नहीं। उसने अपने पेट की टीसों को दबाया हुआ था।

भट्टाचार्य बाबू ने दिल बहादुर को अपने अर्ध आलिंगन में लिया और चटर्जी बाबू और मुकर्जी बाबू ने भी उसे सहारा दिया।

पालिग वाला लटका दिल बहादुर के पैरों पर गिरकर उसके चपलों पर दृश मारता हुआ जोर से कहने लगा 'तुमी आमार भाई! तुमी आमार गरीब बंधु!! तुमी डाकात नहीं, दादा!!!'

उसकी अंजलि में पानी के दो घूंट और डाले।

भीड़ के दूसरे कोने पर जहाँ भट्टाचार्य बाबू की आवाज नहीं पहुँची थी, कोई छींक मारता हुआ बोला 'साला डाकू है! पत्थर मारो।" परन्तु साथ खड़े लोगों ने उसे ठंडा किया।

सूखे हुए होंठों पर जबान फेरता हुआ दिल बहादुर बोलने का यत्न करने लगा। उसकी नजर भीड़ पर टिकी हुई थी पर वह पागलों की तरह देख रहा था। उसे यह समझ नहीं आ रही थी कि वह क्या करे। कड़वे थूक को गले में से बड़ी कठिनाई से गुजारते हुए उसके माथे पर बल पड़ गए।

उसके पैर टूटी हुई चप्पलों से बाहर निकल रहे थे। फटी हुई निकर के कारण वह कोई गुदड़ी वाला भिखारी लगता था।

जैसे-जैसे भट्टाचार्य की बताई बात लोगों के पास पहुँचती गयी, लोगों का जोश ठंडा पड़ता गया। भीड़, जो चुपचाप अपने पैरों पर खड़ी थी अब आहिस्ता आहिस्ता कम होने लग गयी थी।

दिल बहादुर चुपचाप खड़ा टुकर टुकर देख रहा था। उसकी पथराई आँखों की पुतलियाँ किसी समय फिरती हुई लोगों पर एक नजर मार लेती थीं। अपने खुरदरे रूखे बालों पर हाथ फेरते हुए उसकी उँगलियाँ उसमें अड़ गयीं। उसने जोर से झँझोड़ा जिससे उसके कुछ जुड़े हुए बाल टूट गये। पीड़ा की दबी हुई टीस से उसके मुँह का बोल खुलकर निर्धन की तरह हो गया। बालों को एक बार आँखों के सामने करके उसने एक ओर फेंक दिया। फिर एक हाथ अपनी टाँगों की खरोंचों पर फेरता हुआ बोला 'बाबू, हम कल शाम ... मैदान ... में बैठा रहा ... कुछ बाबू लोग ... हमको ...।

शब्द उसके मुँह से रुक रुककर निकल रहे थे और उसकी आत्मा लोगों के व्यवहार से पीड़ित हुई उसकी जबान से बहुत कठिनाई के साथ शब्दों को बाहर धकेलने का यत्न कर रही थी।

... पत्थर मारा रहा ... डाकू भी बोलता रहा ... हम पेड़ पर चढ़ गया।' बात करते-करते उसने अपने पेट को दोनों हाथों में जोर से दबाया और कुछ देर हानी व्यक्त की ओर साथ ही सिर चकरा जाने से वह धम से जमीन पर गिर गया।

उस समय तक लोगों का जोश समाप्त हो चुका था। कानाफूसी करते और छींकें मारते बड़-बड़ करते अपने अपने राह पर हो गये।

सिपाही भी दिल बहादुर को छोड़कर अपनी गश्त पर चल गये। चटर्जी बाबू ने उसके अन्दर धँसे पेट की ओर देखते उसे सहारा देकर जमीन से उठाया और सहानुभूति से पुचकारते हुए कहने लगा 'दिल बहादुर दाजू! हमारे साथ चलना माँगता। भात खाना माँगता।'

उनके साथ भट्टाचार्य बाबू भी मिल गया था। मुकर्जी आगे हो साथ था।

... भीड़ में से पहचान करके बाबा एक लड़का जिसने पत्थर मारा था आगे हो हाथ जोड़कर नम्रता से कहने लगा 'नमस्कार दादा! तुमी आमार बन्धु।'

और फिर उसने बड़ा नम्र-सा मुँह बनाकर अनुनय विनय की 'आमाके क्षमा

करो दादा।"

दिल बहादुर की भवें कुछ कुछ ढीली हुइ पर वह बोला कुछ नहीं। उसने अपने पेट की टीसो को दबाया हुआ था।

भट्टाचार्य बाबू ने दिल बहादुर को अपने अर्ध आलिंगन में लिया और चटर्जी बाबू और मुकर्जी बाबू ने भी उसे सहारा दिया।

पालिश वाला लड़का दिल बहादुर के परों पर गिरकर उसके चपलों पर अश्रु झारता हुआ जोश से कहने लगा, 'तुमी आमार भाई! तुमी आमार गरीब बन्धु!! तुमी डाकात नहीं दादा!!!"

युद्ध

तरलोक मसूर, १९२३

तरलोक मसूर भारतीय सेना म एक अधिकारी हैं और पजाबी के एक गतिशील कहानीकार हैं। वे अब तक लगभग २०० कहानियाँ लिख चुके हैं और युद्ध जीवन पर लिखी हुई उनकी कहानियाँ पजाबी म ही नही वरन् सभी भारतीय भाषाम्रा म अपना विशिष्ट स्थान रखती हैं। मसूर की कुछ कहानियो का अनुवाद पूर्वी यूरोप की भाषाम्रा म हुआ है और एक कहानी मास्को से प्रकाशित भारतीय लेखका की कहानियाँ सग्रह म भी सकलित हुई है।

'अधूरी कहाणी' 'मौसम खराब है' पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। 'धरती ग्रहण' 'फुल्ल ते कडे' और 'शीशे विच परी' प्रकाशन माग पर हैं।

युद्ध-जीवन से सम्बन्धित एक कहानी यहाँ सग्रहीत है।

स्वप्न म करमसिह को लगा मानो किसी मजबूत दुश्मन के हाथा ने उसे पकड लिया हो। उसने चौंक कर आँखें खोल दी। ठडी रेत पर उसके साथ ही युद्ध से भागा हुआ अजीतसिह बेहोश सो रहा था और उसकी दाइ बाह करमसिह की गदन से लिपटी थी। करमसिह ने चारा ओर डरा और सहमी नजरा से दूर-दूर तक देखा। हर तरफ रेतीली धरती फली हुई थी। पूरब की ओर से चढता हुआ सूय अपना सिर उठा रहा था।

आज स तीन दिन पूव वह दोना दुश्मन के घेरे से निकल भागे थे। बगाजी शहर की बाहरी खाइया मे उन लोगा न मोर्चे लगाय हुए थे जब उन्ह खबर मिली कि

जमना ने घेरा डाल लिया है। फिर दिना दिन वह घेरा सँकरा होने की खबरें पहुंचती रही। वह प्रतिदिन काहिरा स अपनी मदद का इतजार करते, पर वह पन कभी न ग्राया, जब कोई ग्राकर कहता कि काहिरा से पहुची हुई फौजा ने दुश्मन को हराकर घेरा तोड दिया है।

घेरा दिन प्रतिदिन तग होता जा रहा था और सिर पर ग्राते हुए खतर से वे भलीभांति परिचित थे। वह जानते थे कि जब शत्रु का टिड्डी दल सिर पर ग्रा पहुचा ता फिर सिवाय हाथ ऊँचे करके युद्ध के बदी हो जान के और कोई चारा न रहेगा और पिंजड म पकड हुए चूहो की भाँति युद्ध के बँदी के साथ व्यवहार विजयी की इच्छा पर होना है, जैसी मौत चाहे वह मार सकता है।

अत म बड कमाडर ने अफसरा की एक बैठक बुलाई और फैसला हुग्रा कि रात-ही रात म मार धाड करके, घेरा तोड कर भाग जाना चाहिए। वह रात कयामत की रात थी। शत्रु ने उनकी हलचल को ताड लिया था, और अपनी तोपा के मुह खोल दिय थ। प्रकाश फलाते हुए गोल ऊपर और फिर उनकी रोशनी म धबरा कर इधर-उधर भागत मनुष्य तड-तड करती गोलियो से चने के समान भून दिये जाते जिधर किसी का मुह उठा शत्रु की पक्तियो के बीच से भाग लिया।

इस तरह ताडव नत्य से दूर जब करमसिह जल्दी जल्दी भागा जा रहा था तो रात के अधकार म किसी ने ग्राकर उसका हाथ थाम लिया। डर से करमसिह का शरीर सुन हो गया। एक निदयी झटके से उस पकडने वाले का हाथ झटक देना चाहा पर दूसरे ही पल उसके कानो न सुना 'मुझे भी ले चल भाई' पलट के उसन देखा तो हाथ पकडनेवाला यही अजीतसिह था।

फिर दो रात और दो दिन इस मरुस्थल को पार करते रात को वह यहाँ तक पहुचे थे। थकावट से उनका बुरा हाल था नीद ककड क समान उनकी आँखो म चुभ रही थी।

"दोस्त अब नही चला जाता अजीतसिह ने सिर हिलाकर कहा था और फिर दोना ने सलाह की कि चाहे वे शत्रु के हाथो पकडे जाएँ पर एक रात इस रेत के बिछौन पर गबदम ग्राराम करेंगे। अपन फौजी थला से नमकीन बिस्कुट का बचाखुचा चूरा खा कर इस विशाल रेगिस्तान के भयानक एकात म वह दोनो एक-दूसरे के साथ लग कर सो गए थे।

अपने साथी के कधे को हिलाते हुए करमसिह बोला अजीत! ग्रा अजीत।' अजीत ने एक गहरी साम लेते हुए ग्राखें खोल दी।

उठ अब किधर जाना है?

अजीतसिह उठकर बठ गया। निचले होंठ पर लकडी हुई जीभ को फेरता हुग्रा बोला 'मेरा मुह ग्राक के समान कडवा हो रहा है।

यही हाल मेरा भी है।"

'कुछ खाने को मिल जाता तो

रेत ही है खानी है?

यह तो चलते चलते मारी ही पड़ेगी।

[illegible] को चार बार पैना गाली बगल मारे थे फिर भी उनका दिल इस तरह [illegible] को मानना नहीं चाहता था इसलिए उन्होंने गाली पैना का उत्तर बरबस [illegible] यह गपशुप गाली थे।

तेरी बस्ती में जाना है न? अजीतसिंह ने अपना गाली बकना का लिहाज [illegible] हुए पूछा। अपना बकना का भाव मानता हुआ करमसिंह बोला [illegible] पूरा मालूम नहीं पड़ता है।

इस पर अजीतसिंह ने भर लिया और दूसरा करमसिंह ने और फिर बिना एक मिनट बेकार किए दोनों पूरब की ओर चलने लगे थे। पिछले तीन दिनों से वह इस राह पर चलते आ रहे थे। उनके अनुमान से इस ओर आदिलपुरबाबा का शहर पड़ना था। आदिलपुरबाबा और कितनी दूर था? इस बियावान में इस बात का पता ही लगना था। किन्तु यह आशा ही है जिसका मनुष्य मरने दम तक पकड़े रहता है। उसी आशा का दामन पकड़ वह दोनों पिछले तीन दिनों से भूखे-प्यासे हुए मैदान में भटक रहे थे।

ऊपर से सूरज अग्नि के बाण बरसा रहा था। नीचे रेत तपिश छोड़ रही थी। जहाँ तक नजर काम देती थी रेत के ऊँचे-नीचे टीले ही नजर आते थे। कोई पशु कोई जन्तु वनस्पति बस्ती किसी आबादी के आसार कुछ भी नहीं बस चारों ओर एक भयानक शान्ति थी और उस शान्ति में लाल मोटे से गुनगुन सूप के नीचे दो इनसान जिन्दगी को पुकारते हुए इधर से उधर भटक रहे थे। जब धूप ने उनको जलाना शुरू किया और पसीना सिर से बह-बह कर फौजी जूतों में पैरों को भिगोने लगा तो वह ठहर गए। अपनी बन्दूकों को पास पास गाड़ दिया और अपनी कमीजें उतार कर दोनों बन्दूकों पर डाल कर थोड़ी छाँव बनाई और एक-दूसरे से सट कर दोनों बैठ गए। सूखा घूँट गले के नीचे उतारता हुआ अजीतसिंह बोला—गला बिल्कुल सूख गया है बतली को निचोड़ देना? खाली बोतलियों के काग खोल कर उन्होंने अपनी हथेलियों पर उलटा रखा। पाँच छः बूँदें उनकी हथेलियों पर आ गईं अमृत समझ कर वह दोनों उन्हें जीभ से चाट गए। जरा-सा सुस्ता लेने के बाद अजीतसिंह ने कहा मेरा विचार है हम पूरब की ओर आने के बजाय बाईं ओर चले आदिलपुरबाबा इतनी दूर नहीं हो सकता। हम जरूर राह भूल गये हैं।

करमसिंह ने उत्तर दिया कहीं भी जायें हमारी खैर नहीं। दो ही प्रकार के लोग हमें मिलेंगे। एक वह जिनको हम गुलाम बना चुके हैं और दूसरे वह जिन्हें हम गुलाम बनाने के लिए लड़ रहे हैं। किसी के भी हाथ लग गये कोई भी हमें छोड़ेगा नहीं। एक कड़वी सच्चाई का पहली बार अजीतसिंह को अहसास हुआ। एक मोटी सी गाली अंग्रेजों को दे कर बोला हरामी! कहाँ ला कर छोड़ गये हमें। अपने देश से हजारों मील दूर मौत की गोद में बैठे हुए उस पल करमसिंह को अंग्रेजों पर बहुत गुस्सा आया। निचले होंठ को क्रोध से दाँतों में चबाते हुए वह बोला तुझे मालूम है उन्होंने हमें इस तरह बेसहारा क्यों छोड़ दिया है?

"क्या ?"

'इसलिए कि उनको हमारे जैसे और सोलह सोलह रुपए पर बदले में मिल जायेंगे।'

"उनकी मा की " एक अति गन्दी गाली अजीतसिंह ने अंग्रेजों को और दी। 'एक बार मुझे गांव पहुंच लेन दे फिर अगर मेरे गांव से कोई भी भरती हो गया तो मेरा नाम बदल देना। मैं गाँव-गाँव घूम कर लोगों को युद्ध की बरबादी के विषय में बताऊंगा और कहूंगा, भाइयो मांगी रोटी खा लेना पर भरती न होना।

कहूंगा तो मैं भी यही, किन्तु घर पहुंच गये तब न। करमसिंह के कन्धे पर हाथ मार कर अजीतसिंह बोला, घबराओ नहीं दोस्त ! हम जरूर घर पहुंचेंगे। मुझे तेरा भगवान के समान आसरा है। अगर तू न होता तो मैं कब का इस मरुस्थल में तड़प-तड़प कर मर गया होता।'

कुछ समय तक दोनों चुपचाप बदन पर टपकते पसीने की धारा को पोंछते रहे। फिर करमसिंह बोला 'एक बात है।'

'क्या ?

चाहे हम मर जाएँ हमारे गाँव से कोई भरती नहीं होगा।

कैसे ?

'जब हमारे जैसे हजारों जवानों की मौत की खबरें उनके रिश्तेदारों को मिलेंगी तो उनके विलाप को सुनकर लोग त्राहि त्राहि न कर उठेंगे।

इस दलील में सहमत होता हुआ कुछ समय तक अजीतसिंह करमसिंह को देखता रहा और फिर बोला रोटी का तो कुछ नहीं थोड़ा-सा पानी ही मिल जाता।

पानी ?

'हां पानी।

पानी के विषय में करमसिंह के पास कोई उत्तर न था। तपते मरुस्थल में जगह-जगह से रेत की आँधियाँ उठ उठ कर आकाश को छू रही थीं और टीलों के पीछे नाचती धूप की लहरें भूतों का धोखा दे जाती थीं। अचानक उनके कानों ने फड़ फड़ की आवाज सुनी दोनों ने सिर उठाया हवाई जहाज ऊपर चक्कर लगा रहा था। आशा से अजीतसिंह की आँखों में जिंदगी नाच उठी। बोला 'अपना ही लगता है।

करमसिंह ने गौर से देखा और बोला नहीं, शत्रु का लगता है।

अपना है यार क्या बातें करता है।' अजीतसिंह ने कहा और खुशी से पागल हो कर उठ खड़ा हुआ।

नहीं शत्रु का है।

अरे भाई अपना ही है मान भी जा कह कर अजीतसिंह ने हाथ ऊँचे कर के इशारे किये और जहाज की ओर भागना शुरू किया।

पहले जहाज गोश्त के ऊपर झपटता चील के समान नीचे आया जैसे नीचे हवाई छूटती है शाँ शाँ करता एक गोला नीचे आता हुआ उन्होंने देखा।

'बम्ब ! बम्ब !' चिल्लाते दोनों रेत पर लेट गए। एक जोर का दिल हिला देने

यह तो अपने आप आती ही रहती।

रात को चाहे वह कैसा [illegible] गए थे फिर भी उनके लिए इस तरह [illegible] को मानना नहीं चाहता था इसलिए उन्होंने [illegible] कर सारा यह सबकुछ माना था।

नहीं कमली ॥ जाता है क्या ?" अजीतसिंह ने कहा। साथी करमी को [illegible] हुए पूछा। [illegible] करमसिंह [illegible] पूछ मालूम तो पड़ता है।

एक था अजीतसिंह [illegible] और दूसरा करमसिंह था और [illegible] बिना एक मिनट रुके बिना दोनों पूरब की ओर चलते रहे थे। पिछले चार दिनों से वह इस तरह पर चलते आ रहे थे। उनके अनुमान से इस ओर आदिसअबाबा का शहर पड़ता था। आदिसअबाबा और कितनी दूर था ? इस बियाबान में इस बात का क्या अन्दाज़ा हो सकता था। किन्तु एक आशा ही है जिसको मनुष्य मरते दम तक पकड़ रखता है। उसी आशा का दामन पकड़े वह दोनों पिछले तीन दिनों से इस तपते हुए रेगिस्तान में भटक रहे थे।

ऊपर से सूरज अग्नि के बाण चला रहा था। नीचे रेत तपिश छोड़ रही थी। जहाँ तक नज़र काम देती थी रेत के ऊँचे-नीचे टीले ही नज़र आते थे। कोई पक्षी कोई जन्तु वनस्पति बस्ती किसी आबादी के आसार कुछ भी नहीं। बस चारों ओर एक भयानक शान्ति थी और उस शान्ति में सान तोड़ते सुलगते सूरज के नीचे दो इनसान ज़िन्दगी को पुकारते हुए इधर से उधर भटक रहे थे। जब धूप ने उनको जलाना शुरू किया और पसीना सिर से बह-बह कर फौजी जूतों में पैरों को भिगोने लगा तो वह ठहर गए। अपनी बन्दूकों को पास पास गाड़ दिया और अपनी कमीज़ें उतार कर दोनों बन्दूकों पर डाल कर थोड़ी छाँव बनाई और एक-दूसरे से सट कर दोनों बैठ गए। सूखा घूँट गले से नीचे उतारता हुआ अजीतसिंह बोला— गला बिल्कुल सूख गया है मशकी को निचोड़ भला ? खाली केतलियों के काग खोल कर उन्होंने अपनी हथेलियों पर उलटा रखा। पाँच छः बूँदें उनकी हथेलियों पर आ गई अमृत समझ कर वह दोनों उन्हें जीभ से चाट गए। ज़रा सा सुस्ता लेने के बाद अजीतसिंह ने कहा 'मेरा विचार है हम पूरब की ओर जाने के बजाय बाईं ओर चलें आदिसअबाबा इतनी दूर नहीं हो सकता। हम ज़रूर राह भूल गये हैं।

करमसिंह ने उत्तर दिया, कहीं भी जायें हमारी खैर नहीं। दो ही प्रकार के लोग हमें मिलेंगे। एक वह जिनको हम गुलाम बना चुके हैं और दूसरे वह जिन्हें हम गुलाम बनाने के लिए लड़ रहे हैं। किसी के भी हाथ लग गये कोई भी हमें छोड़ेगा नहीं। एक कड़वी सच्चाई का पहली बार अजीतसिंह को अहसास हुआ। एक मोटी सी गाली अंग्रेजों को दे कर बोला हरामी ! कहाँ ला कर छोड़ गये हमें।

अपने देश से हजारों मील दूर मौत की गोद में बैठे हुए उस पल करमसिंह को अंग्रेजों पर बहुत गुस्सा आया। निचले होंठ को क्रोध से दाँतों में चबाते हुए वह बोला, तुझे मालूम है उन्होंने हमें इस तरह बेसहारा क्यों छोड़ दिया है ?

"क्या ?"

इसलिए कि उनको हमारे जैसे और सोलह सोलह रुपए पर बहुत-से मिल जायेंगे।

उनकी मा की ' एक अति गन्दी गाली अजीतसिंह ने अंग्रेजों को और दी। 'एक बार मुझे गाव पहुच लेने दे फिर अगर मेरे गाँव से कोई भी भरती हो गया तो मेरा नाम बदल देना। मैं गाँव-गाँव घूम कर लोगों को युद्ध की बरबादी के विषय में बताऊँगा और कहूँगा, भाइया, माँगी रोटी खा लेना पर भरती न होना।

'कहूगा तो मैं भी यही, किन्तु घर पहुच गये तब न।' करमसिंह के कन्धे पर हाथ मार कर अजीतसिंह बोला, घबरामो नही दोस्त! हम जरूर घर पहुचेंगे। मुझे तेरा भगवान के समान आसरा है। अगर तू न होता तो मैं कब का इस मरुस्थल में तड़प-तड़प कर मर गया होता।'

कुछ समय तक दोनो चुपचाप बदन पर टपकते पसीने की धारा को पोछते रहे। फिर करमसिंह बोला 'एक बात है।

'क्या ?

चाहे हम मर जाएँ हमारे गाव से कोई भरती नही होगा।"

कैसे ?

'जब हमारे जैसे हजारों जवानों की मौत की खबरें उनके रिश्तेदारों को मिलेंगी तो उनके विलाप को सुनकर लोग त्राहि त्राहि न कर उठेंगे।

इस दलील से सहमत होता हुआ कुछ समय तक अजीतसिंह करमसिंह को देखता रहा और फिर बोला रोटी वा तो कुछ नही, थोड़ा-सा पानी ही मिल जाता।

पानी ?

'हा, पानी।

पानी के विषय में करमसिंह के पास कोई उत्तर न था। तपते मरुस्थल में जगह-जगह से रेत की आंधियाँ उठ उठ कर आकाश को छू रही थी और टीलों के पीछे नाचती धूप की लहरें भूतों का धोखा दे जाती थी। अचानक उनके कानों ने फड़ फड़ की आवाज सुनी दोनों ने सिर उठाया हवाई जहाज ऊपर चक्कर लगा रहा था। आशा से अजीतसिंह की आखों में जिन्दगी नाच उठी। बोला 'अपना ही लगता है।

करमसिंह ने गौर से देखा और बोला नहीं, शत्रु का लगता है।

अपना है यार, क्या बातें करता है। अजीतसिंह ने कहा और खुशी से पागल हो कर उठ खड़ा हुआ।

नहीं शत्रु का है।

अरे, भाई अपना ही है मान भी जा कह कर अजीतसिंह ने हाथ ऊँचे कर के इशारे किये और जहाज की ओर भागना शुरू किया।

पहले जहाज गोश्त के ऊपर झपटती चील के समान नीचे आया, फिर नाच हवाई छूटती है शाँ शाँ करता एक गोला नीचे आता हुआ उन्होंने देखा।

बम्ब! बम्ब!' चिल्लाते दोनों रेत पर लेट गए। एक जोर का दिल हिला देन

वाला धमाका हुआ। चारों दिशाएँ धुएँ की चादर में समा गईं। धीरे धीरे धुआँ छट गया। करमसिंह ने भयभीत आँखें खोल दीं।

क्या हाल है भई ?' कहता हुआ करमसिंह उठ कर जिस ओर अजीत लेटा था चल पड़ा। दस कदम आगे अजीत की एक लात पड़ी हुई मिली, पाँच कदम और आगे अजीत का एक हाथ पड़ा था। जहाँ अजीत लेटा था वहाँ एक गहरा गड्ढा खुदा हुआ था और उसके चारों ओर बारूद से जली हुई अजीत की बोटियाँ पड़ी थीं।

किसी डर से करमसिंह के दोनों हाथ ऊपर उठे और

मैं हार मानता हूँ। मुझे कैद कर लो।' यह चिल्लाता हुआ करमसिंह उस तपते मरुस्थल में इधर उधर भागने लगा।

धूल तेरे चरणों की

लोचन बक्शी, १९२३

लोचन बक्शी न भारतीय वायुसना म भर्ती होकर द्वितीय महायुद्ध म अराकान तथा बर्मा क युद्धा म भाग लिया और बहुत-सी कहानिया सैनिक जीवन मे सम्बधित लिखा। युद्ध स लौटकर सिविल सप्लाई विभाग म काम किया और अब आकाशवाणी के दिल्ली केन्द्र म हैं।

लोचन बक्शी की कहानियो म चरित्र चित्रण और वातावरण की प्रधानता है। एसी ही वातावरण प्रधान और मानवीय भावो को उद्वेलित करने वाली उनकी एक कहानी यहा सग्रहीत है।

प्रकाशित कहानी-सग्रह—'पाप-पुन तो परे', 'दर द सराप' आदि।

जे मिने ता मस्तक लाइए
धूड तेरे चरणां दी।'

साधु-सगत पढ रही थी और पाकिस्तान स्पेशल [illegible] हुए छकाछक उडी जा रही थी। वाहर दूर तक रगिस्तान [illegible] को लिए बाजरे के खेत दिखाई दे जाते या फिर कही-कही पील [illegible] था। कभी-कभी दार पेड दीख पडते। इनसे हटकर सारा दृश्य हरियाली [illegible] बबूल के काटे था। पालासिह खिडकी मे वाहर देख रहा था। उसकी [illegible] और सुनसान थी। रेतीले मैदान स एक बगूला उठा और हवा के [illegible] धूल से अटी हुई [illegible] और गाडी के अन्दर आ गया।

"खिड़की बन्द कर दो" जत्थेदार जी बोले।

पालासिंह मुस्करा दिया। 'यही तो हमारे देश का मेवा है, बादशाहो तुम इस रेत कहते हो इस रेत के लिए तो मेरी आँखें तरस गई।'

आज चौदह साल के लम्बे अरसे के बाद पालासिंह देश जा रहा था। आज से चौदह साल पहले यह उसका अपना देश था—यह रेगिस्तानी देश। रावलपिंडी के पश्चिमी रेतीले इलाके में उसका गाँव था घर घाट था जमीन थी एक दुनिया थी। फिर न जाने क्यों लोगों के सिर पर पागलपन का भूत सवार हुआ और बैठे बिठाए अपने पराए हो गए। पालासिंह अपना सब कुछ पीछे छोड़कर सरहद के इस पार चला आया। अब यू तो उसके पास सब कुछ था घर घाट था माल असबाब था लेकिन वह दुनिया न थी। अपने दालान का कुआँ उसे कभी न भूला। यूँ तो उसे अपने देश की हर चीज़ प्यारी थी लेकिन कुएँ से उसे विशेष स्नेह था।

पालासिंह का गाँव उस इलाके में था जिसके चारों ओर रेगिस्तान फैला था। यहा की खुश्क बंजर धरती में और कोई फसल पैदा नहीं होती थी केवल बाजरा होता था जिसके बारे में लोग कहा करते थे यह रूखे लोगों की रूखी पैदावार है। सारे इलाके में न कहीं पानी था और न कहीं पानी का निशान। लोग मीलों का सफर तय करके ऊँटों और गधों पर मशकें लाद हजारों मुसीबतें झेलकर पीने का पानी लेने जाया करते थे।

पालासिंह का बाप चौधरी हीरासिंह सचमुच एक हीरा ही था—एक अनमोल हीरा। सुबह उठने पर अगर किसी को उसके दर्शन हो जाते तो वह समझता कि आज का दिन भाग्यशाली है। हीरासिंह बड़ा दमदार व्यक्ति था—पूजा पाठ में व्यस्त रहने वाला साधु स्वभाव जिसके दालान में सदा साधु सन्तों की भीड़ लगी रहती। एक बार उसके द्वार पर एक महात्मा आए। चौधरी ने उसकी बहुत सेवा की। चौधरी की सेवा से प्रसन्न होकर महात्मा ने कहा जोगी चौदह बरस का चिल्ला काट कर आया है। माँग क्या मांगता है?

सब आपकी कृपा है चौधरी बोला।

देख ले चौधरी तेरी खुशी है।

महाराज चौधरी ने कुछ सोचते हुए कहा इस धरती को किसी का शाप लगा है। कई साधु महात्मा यहा आए यह धरती उनके चरणों से पवित्र हुई लेकिन लोग उसी तरह दुखी रहे।

क्या?

यहाँ की धरती बाँझ है और पानी खारा। पीने का पानी लाने के लिए लोगों को बहुत दूर जाना पड़ता है। महाराज यदि आप कृपा करके हम लोगों के इस कष्ट का निवारण कर सकें तो बहुत लोगों का भला होगा।

बहुत अच्छा। फिर तू ही इसका पात्र है क्योंकि तू सभी की भलाई चाहता है। ऐसा करना कि जिस जगह जोगिया का यह चूल्हा है यहीं से धरती खुदवाना और इस जगह कुआँ बनवाना। किसी को पानी भरने से मना मत करना। जा, भगवान तेरा

भला करें।

महात्मा जी तो चल गए लेकिन हीरासिंह ने उसी दिन उनकी बताई जगह पर मिट्टी खुदवानी प्रारम्भ कर दी। कई मजदूर जुट गए। दिन रात काम होने लगा। कई दिनों की खुदाई के बाद भी पानी की एक बूंद तक न मिल सकी। वैसी ही सूखी और खुरदरी रेत निकलती रही।

यूं ही कोई बहकाने वाला जोगी था। अगर बालू घरती में इस तरह पानी के सोते फूटने लगते तो इस रेगिस्तान में इतनी रेत दिखाई न देती—लोग कहते। लेकिन चौधरी हीरासिंह का हृदय सागर की तरह अथाह और विशाल था। वह अपनी धुन में मग्न और अपनी प्रतीक्षा पर दृढ़ मिट्टी खुदवाने पर लगा रहा। उसने आशा का छोर न छोड़ा। अंत में पूर्णिमा के दिन उसके खुदवाए हुए कुएं में पानी का सोता फूट पड़ा—पानी भी इतना मीठा कि कुछ न पूछिए।

चौधरी हीरासिंह ने भगवान को धन्यवाद दिया और अपने इस खजाने का मुंह खोल दिया। उसका कुआं सारे इलाके में बेजोड़ था। रात दिन वहां मेला लगा रहता। लोग आते अपनी प्यास बुझाते और उसे दुआएं देते चले जाते।

जब से पालासिंह ने होश सम्भाला यह कुआं उसके विचारों पर छाया रहा और विचारों पर ही क्या उसके मन की गहराइयों में पानी की इस मिठास ने अपना घर सा बना लिया था। यदि वह अपनी स्मरण शक्ति पर जोर भी देता तो भी वह उस कुएं के संसार में आगे नहीं जा सकता था। चारदीवारी वाली बड़ी हवेली में उस कुएं को विशेष महत्त्व प्राप्त था। वास्तव में इस हवेली में अगर कोई महत्त्वपूर्ण वस्तु थी तो यही कुआं था। इसके चारों ओर चबूतरा बना हुआ था। चबूतरे के आगे और सीढ़ियां थीं। मुंडेर के पास बड़े-बड़े शहतीर गड़े हुए थे जिन पर रस्सी की रगड़ से कुछ धारियां-सी बन गई थीं और उनसे रस्सी फिसल फिसल जाती थी।

पालासिंह ने सोचा जब उसने जिन्दगी में पहली बार आंख खोली होगी तो सचमुच उसकी छोटी छोटी आंखों ने पहली निगाह में इस कुएं को ही देखा होगा जहां रेगिस्तान की अल्हड़ नौजवान लड़कियां और औरतें कच्चे घड़े गागरें और कलसे लेकर पानी भरने आया करती थीं। उसे याद आया कि पहले पहल यहीं पर उसकी भेंट अपनी पत्नी हरनामकौर से हुई थी। झुटपुटा सा हो रहा था। उसने देखा कि हरनामकौर जल्दी जल्दी कदम उठाती हुई आई और कुएं की मेड़ पर चढ़ गई।

उसने गागर वहीं रखी और कुएं में लोटा लटका कर उसके पीछे सारी रस्सी छोड़ दी। रस्सी रेशम की डोर की तरह फिसलती हुई चली गई और दूर पानी में 'छप' से गिरने की आवाज़ आई। उसने दोबारा लोटा पानी में लगाया और फिर जल्दी-जल्दी रस्सी समेटने लगी।

पालासिंह इन तमाम घड़ियों में उसे देखता रहा। गागर भरकर उसने कुएं की मेड़ पर रख दी और इधर उधर झांकने लगी। सांझ सांवला हो चली थी और बबूल के पेड़ की परछाइयां घनी हो गई थीं।

पालासिंह कुछ झिझकते हुए आगे बढ़ा और बोला, 'मैं हाथ बंटा दूं?'

चल, परे हट भो छोकरे। बडा आया पहलवान कही का। मैंने भी तो इसी कुएँ का पानी पिया है ।' और उसने पालासिह के हाथों से गागर को एक झटका दिया उसे अपने सिर पर रख लिया और फिर रेत पर छमछम पाँव रखती हुई पलक झपकते बबूल के पेडो की छाँव म वह गुम हो गई थी।

अगर अँधेरा ज्यादा गहरा न होता तो पालासिह उसके पैरा की रेत पर बनाई हुई उस जजीर को देर तक देखता रहता। परो के निशान देखना भी उसका एक शौक था। ये निशान उस कुएँ से आरम्भ होकर रेगिस्तान म चारो ओर बिखर गए थे। इन निशानो की उसे इतनी पहचान हो गई थी कि वह यह बता सकता था कि अनगिनत निशानो म से कौन से निशान हरनामकौर के बाप की चारदीवारी म जाकर गुम हो जाते थे।

और फिर हरनामकौर के साथ उसकी दोस्ती हो गई। वे दिन भी खूब थे। दोनो सारा दिन बाजरे के खेतो म किलकारियाँ मारते रहते। वह उस ढोल सिपहिया बाँकिया माहिया (सजीला जवान बाँका प्रेमी) कहा करती और वह उसको खूह ता पानी भरेंदिए मुटियारे नी (कुए पर पानी भरती हुई अल्हड नवयुवती) वाला गीत सुनाया करता था।

अगर कभी उन्ह गाँव के बाहर जाना पडता तो वे दोनो उदास हो जाते।

हरनामकौर तू असल म बाजरे की कोपल है जिसके पलने फूलने और बढने के लिए रेगिस्तानी धरती ही उपयुक्त है।

रतीली धरती तो खर ठीक है लेकिन तुम्हारे कुएँ का ठण्डा और मीठा पानी भी तो सौ दवाओ की एक दवा है।

'यह तो बिल्कुल सच कह रही है हरनामकौर। अपने कुएँ के पानी के लिए तो मैं खुद भी तरस गया हूँ।

अपने वतनाँ दियाँ ठडियाँ छाइ वे
अपने वतनाँ दियाँ सद हवाइ वे।

(अर्थात् अपने देश की ठडी छाँव अपने देश की ठडी हवाएँ।)

गीत के अगले बोल हरनामकौर पूरे कर देती है

लगिया निभाइ वे मिघी छोड न जाइ वे
दम्मा दिया लोभिया वे परदेस न जाइ वे।

(अर्थात् प्रीत की रीत निभाना और मुझे छोड न जाना। ओ पैसे के लोभी परदेस न जाना।)

और आज पालासिह काले कोस तय करके अपने देश पहुचा था। पाकिस्तान एक्सप्रेस छक्छक उडती जा रही थी और खिडकी से बाहर कही कही बबूल के पेड खुले हृदय स स्वागत कर रहे थे। उसके विचारा पर एक झीना सा आवरण छाया हुआ था और उस पर कई पगडण्डियाँ उभरी हुई था और यह सब उसके देश को जाती थी कुए वाल गाव को जहा बाजरे की कोपल बढ कर पक जाती है और काटो भरे बबूल के पीले फूल खिलते है।

छकछक करती हुई रेलगाडी रेगिस्तान से गुजरती हुई बाजरे के खेतों को पार करता जब आउटर सिगनल के पास से गुजरी, तो उसकी चाल धीमी पड गई थी। पालासिह मन-ही मन बहुत खुश हुआ कि कुछ पलो के बाद वह अपनी मंजिल पर पहुच जाएगा। उसने दूर स्टेशन पर खडे हुए आदमियो को पहचानने की कोशिश की। ये तमाम लोग उसके स्वागत के लिए आए थे जो पाकिस्तान के रेगिस्तानी इलाकों की यात्रा के लिए वहाँ पहुच रहे थे। जब पालासिह को इस यात्रा की खबर मिली थी तो वह बहुत ही खुश हुआ था, क्योंकि यात्रा के स्थानो मे उसका गाँव भी शामिल था। उसके गाव के पास ही एक धार्मिक स्थान था।

गाडी स्टेशन पर पहुची, तो ढोल-ताशे बजने लगे। पालासिह को लगा जैसे वह यात्रा पर नही किसी की बारात म आया था। उसका और उसके साथियो का उल्लास भरा स्वागत किया गया। उसके गाँव के मुसलमान मित्र उससे और उसके साथियो से बारी-बारी मिल रहे थे। पालासिह से हरेक आदमी गले मिला। इस भीड म उसके कितने ही मित्र थे—अल्लारक्खा, मिर्जा अशरफ और राजा जहांदाद।

सुना यार अल्लारक्खे तेरा क्या हाल है?

बस उसका फजल है। तू अपनी सुना।

इस तरह एक-दूसरे से गले मिलते और कितनी ही छोटी मोटी बातें पूछते और सुनाते हुए व सब गाँव की ओर चल पडे।

रेलवे स्टेशन गाँव से दो मील की दूरी पर था। पालासिह ने जीवन म इस दो मील की यात्रा को कई बार पूरा किया था। उस समय जब वह बहुत छोटा था तो अपने साथियो के साथ दिन म दो बार स्टेशन पर जरूर आया जाया करता था। उस छोटे-से स्टेशन पर ब्रांच लाइन की दो गाडियां तो दिन म जरूर आया करती थीं—अप और डाउन। वे गाडी आने के पहले ही स्टेशन पर पहुच जाया करते थे और जब तक गाडी स्टेशन से रवाना न हो जाती मन्त्र मुग्ध से वहा खडे रहते थे।

उसे याद था कि एक बार गाडी के डिब्बे म कुछ गोरे सिपाही बैठे हुए थे। उन सब ने जब नीली निगाहो से उन लोगों की ओर देखा तो एक गोरे ने उन्हे डांट पिलाई थी। इस पर सब हस पडे थे। एक गोरे ने संतरे और माल्टे के ढेरों छिलके उन पर फेंके मारे थे।

जब गाडी चलने लगी तो एक गोरे ने माल्टों की टोकरी उनकी ओर फेंक दी था। सब ने एक एक माल्टा बाट लिया था। खाली टोकरी को औंधा करके अल्लारक्खा ने सिर पर रख लिया था और फिर वह गोरों की नकल उतारता हुआ अकड कर चलने लगा था। उसे याद था, वह खिलखिलाकर कह उठा था टोपी वाले साहब के क्या कहने!

साव' पालासिह ने कहा। उसके मुह से साव शब्द सुनकर अल्लारक्खा उस पर निछावर हो गया। किसे मालूम था कि इस तरह से भी भेंट होगी।

अरे अभागे कुएँ से कुआँ नही मिल सकता लेकिन इनसान से इनसान मिल सकता है।

सच कहा तूने, यार।'

पालासिंह ने अपने कुएँ के बारे में पूछा, अपने मवेशियों के बारे में पूछा और अपनी हवेली के बारे में पूछा। सारा रास्ता इसी तरह कट गया।

पालासिंह के मकान में अब कोई महाजर अर्थात् शरणार्थी परिवार बस गया था।

'यह तो बहुत अच्छा हुआ। हमारा घर तो आबाद है।'

'और तुम्हारी जमीन भी किसी महाजर के नाम अलाट हो गई है।'

'जमीन उसकी होनी है जो उसकी सेवा करता है, भाइयो! अब वह मेरी कैसी?'

'और तुम्हारी हवेली में हम लोगों ने पंचायत घर बना लिया है।'

'यह तो और भी अच्छा किया। आज पालासिंह तुम सबका साझी बन गया है। इससे बड़ी खुशी और क्या होगी।' पालासिंह ने पूछा, 'मेरे कुएँ का हाल तो सुनाओ।'

उसे यूं लगा जैसे अल्लारक्खा कुएँ के बारे में कुछ कहते-कहते झिझक गया था।

'क्या बात है गिराइयों (ग्रामभाई) चुप क्यों हो? तुम कुछ कहो।'

लेकिन अल्लारक्खा बात टाल गया। पालासिंह यात्रियों के साथ धर्मस्थान की ओर चल पड़ा।

यात्रियों ने पूरे धर्म स्थान को अच्छी तरह झाड़ पोंछ की, धो धोकर फर्श की ईंटें चमकाईं और जैसे जैसे ईंटें निखरती जातीं लगता कि उनकी आत्माएँ किसी अलौकिक प्रकाश से प्रकाशित होती जा रही थीं। तीन दिनों तक शब्द-कीर्तन चलता रहा और अखण्ड पाठ होता रहा।

तीसरे दिन जब यात्रियों का जत्था लौटने वाला था, पालासिंह मुंह अंधेरे जाग गया। अभी झुटपुटा ही था। वह अपने गांव की ओर चल पड़ा। यह वही गांव था, जहां उसने जन्म लिया था, जहां वह पला था, जहां वह जवान हुआ था।

उसके पैरों में नरम नरम रेत इस तरह बिछ बिछ जाती थी जैसे धरती ने उसके स्वागत के लिए मखमली कालीन बिछा दिया हो। बहुत दिनों बाद उस रेत पर चलना बड़ा भला मालूम हो रहा था। हवा के झोंकों में बाजरे की बालियां झूम रही थीं। फिर हवा का एक और झोंका आया और पालासिंह को अपने खेतों की यह गंध जानी-पहचानी सी लगी।

अपने गांव की हरेक गली को वह जानता था, हर मोड़ को वह जानता था, यहाँ तक कि वह अंधेरे में पांव रखते ही बता सकता था कि इस जगह से कितनी दूरी पर एक गड्ढा है। वहां पहुंचकर पालासिंह को यूं लगा जैसे गड्ढा अभी तक भरा नहीं गया था। वह चलता गया। सरदारों की हवेली की पथरीली दीवार उसके साथ-साथ चल रही थी। उसे याद आया कि जरा आगे जाकर जहां बाईं ओर मुड़ते हैं, पत्थर का एक कोना आगे को निकला हुआ है। अगर वहां से असावधानी से निकला जाए, तो आदमी के हाथ पर टूट सकते हैं।

उस जगह पहुंचकर उसने अनजाने ही उस पत्थर को स्पर्श करने के लिए हाथ बढ़ाया। वह वैसा-का-वैसा आगे की ओर निकला था। कहीं कोई परिवर्तन नहीं हुआ था। वही गांव था, वही गलियां थीं, सिर्फ वहां पालासिंह न था।

वह अपने आप आगे बढ़ता जा रहा था। सरसों और तारामीरा की मिली-जुली गंध से उसने अनुमान लगाया कि वह तेलियों के मुहल्ले से गुजर रहा है। कुछ आगे जाकर चमड़े की सड़ांद आने लगी। उसने समझ लिया कि वह चमारों के घरों के पास से जा रहा है। उसने एक लम्बी सांस ली। गीली मिट्टी की सोंधी-सोंधी गंध उसके दिमाग तक पहुंच गई। अब कुम्हारों के घर पास आ गए थे। बस अगले मोड़ पर वह अपनी हवेली में पहुंच जाएगा। उसका घर आ जाएगा। उसका कुआं आ जाएगा।

लेकिन यह क्या ? उसके कुएं पर श्मशान जैसा सूनापन क्यों ? वे झांझरों और गागरों के स्वर, वे चंचल अठखेलियां आज यहां क्यों नहीं ? और वह भौंचक्का-सा सीढ़ियां चढ़कर अपने कुए के पास जा खड़ा हुआ।

उसने देखा कि कुएं पर कोई लोटा न था। चरखी के साथ हमेशा लिपटी रहने वाली जंजीर भी नहीं थी। लोटे की तो खैर कोई बात नहीं, लेकिन जंजीर के न होने पर उसे अचम्भा हुआ। उसने अपने स्वभाव के अनुसार पड़ोस के मकान की दीवार पर निगाह दौड़ाई। यहां रस्सी के साथ उनका लोटा हमेशा लटका रहता था। उसने वैसे ही खोए-खोए लोटा दीवार से उतारकर कुएं में लटका दिया। चरखी की आवाज एक भयानक चीत्कार के साथ चारों ओर गूंज उठी। निंदियारे वातावरण में यह आवाज बहुत अनोखी मालूम हुई। जितनी देर में उसने लोटा कुएं से निकाला, सारा गांव उसके चारों ओर इकट्ठा हो चुका था।

"पालासिंह ! अरे ओ पालासिंह, यह पानी न पीना।

'क्या ?

'तुझे मालूम नहीं इस पानी में जहर मिला हुआ है।'

'जहर ! यह क्या कह रहे हो ?'

खत्री इसमें जहर मिला गए हैं।

पालासिंह को याद आया कि देश के बंटवारे के समय बहुत सी स्त्रियां अपना सतीत्व बचाने के लिए इस कुएं में कूद गई थीं। उसे बहुत दुख हुआ। अमृत आज विष में बदल गया था। वास्तव में अमृत और विष इकट्ठे रहते हैं—जब देवताओं और राक्षसों ने मिलकर अमृत निकालने के लिए समुद्र को मथा था तो अमृत और विष साथ साथ निकले थे।

पालासिंह जोर से चीखा नहीं यह पानी जहर नहीं अमृत है—अमृत। यह भतियों का कुआं है। हमारे बुजुर्गों ने हम सभी की भलाई के लिए इस कुएं को खुदवाया था लेकिन तुमने इसे जहर बनाकर बंद करवा दिया। अरे नासमझो यह जहर नहीं यह अमृत है—अमृत। और सारे गांव वालों के देखते-देखते पालासिंह उस पानी को गटागट पी गया। लोग आश्चर्यचकित पत्थर की मूर्ति बने खड़े थे। उन्हें विश्वास नहीं आ रहा था कि वे कम चौदह वर्षों तक अनजान बने रहे। अपने पास ही अमृत का स्रोत होते हुए भी वे कितनी मुसीबतें उठाकर कोसों दूर पानी लेने के लिए जाते रहे।

पालासिह ने सम्मान और श्रद्धा के साथ अपने कुए का पानी एक बोतल म भर लिया।

दिन का जब पालासिह और उसके साथियो का जत्था बडी चारदीवारी वाली हवेली के पास स निकला तो उसकी आँखो म आसू छलक रह थे।

यह मेरा घर है। यह मेरी जमीन है। यह मेरी हवेली है। यह मेरा कुआँ है। और यह जो कुएँ पर पानी भर रही है मेरे मित्र अल्लारक्खा की बेटी है। अल्लारक्खा की कहाँ खुद मेरी अपनी बेटी है, नानी जी। म बहुत खुश हूँ। तुम्ह क्या बताऊँ मैं बेहद खुश हूँ।

'छोडो भी पालासिह। जिस गाँव को छोड दिया उसका अब नाम क्या लना।'

साधु-सगत चली जा रही थी। पालासिह पल भर क लिए रुका उसने झुक कर धरती को प्रणाम किया मुट्ठी भर रेत उसन अत्यन्त स्नेह श्रद्धा और सम्मान के साथ कागज म लपेट कर अपनी जेब म रख ली और जोर जोर स शब्द क वही बोल पढता हुआ जत्थे से जा मिला

'जे मिले तां मस्तक लाइए धूड तेरे चरणाँ दी।'

प्रेम कहानी

प्रभजोतकौर, १९२४

प्रभजोतकौर पंजाबी की प्रमुख कवयित्री हैं। सन् १९५७ में उन की कविताओं का एक संग्रह फारसी भाषा में अफगानिस्तान में प्रकाशित हुआ था। अंग्रेज़ी, रशियन, फ्रेंच, इटालियन और रूमानियन आदि भाषाओं में भी उन की कविताओं के अनुवाद प्रकाशित हुए हैं। पबी नामक कविता-संग्रह पर उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार भी प्राप्त हो चुका है।

प्रभजोतकौर ने पंजाबी में गीतात्मक तत्त्व से युक्त सुन्दर कहानियाँ लिखी हैं। उन की कहानियों के दो संग्रह किरणें और अमन दे ना शीर्षक से प्रकाशित हुए हैं।

प्रभजोतकौर के पति ब्रिगेडियर नरिन्दरपालसिंह भारतीय सेना के एक उच्च पदाधिकारी और पंजाबी के प्रमुख उपन्यासकार हैं।

तुम्हें देखते ही मुझे लगता मानो तुम्हारी आँखों में से प्यार की कुछ किरणें मेरी ओर आ रही हैं। मैंने साड़ी का पल्ला अपने ऊपर अच्छी तरह लपेट लिया जैसे यह मेरा रक्षक हो।

पल्ला खिसक गया था और बालों की एक लट मेरे माथे पर फिसल आई थी। मैंने बाएँ हाथ से उसे पीछे झटक दिया।

'हैलो! अमीन मेरा नाम है।

और मेरा बीणा।

तुमने मेरा हाथ दबा लिया और फ्रांसीसी प्रथा के अनुसार हल्के से हाथों को तुमने

छुवाया। मुझे, लगा मानो ऐसा करते हुए तुमने साधारण से अधिक समय लगाया था। मेरी उँगलियों में झनझनाहट सी हो गई।

और मेरा दिल धड़क रहा था।

शायद तुम्हारा भी धड़क रहा होगा।

फिर कितनी ही देर हम उस कोने में खड़े बातें करते रहे। हमारे आस पास असंख्य लोगों की भीड़ थी।

यह झाँकी उस जीवन की है जिसमें लोग हाथ दबाते हुए मिलते और कितनी कितनी देर तक कुशल-क्षेम पूछते रहते हैं। हर रोज पार्टियाँ होती हैं जिनमें बार बार वही चेहरे दिखाई देते हैं। वही बातें होती हैं। कुशल-क्षेम पूछी जाती है और सरसरी तौर पर मौसम का जिक्र भी आता है। जाने पहचाने मित्रों की बात छिड़ती है और बीच बीच में कहीं कहीं राजनीतिक हालतों की भी बातचीत होती है।

विदेश में एकत्र ऐसे ही अलग अलग देशों के प्रतिनिधि ऐसे ही एक दूसरे के ढंग की थाह लेते रहते हैं। और ऐसे ही बार-बार इकट्ठे होते हैं। लंच पार्टियाँ काफी पार्टियाँ डिनर और शाम पार्टियाँ। यह है जिंदगी राजदूतावास के कर्मचारियों की।

ऐसे ही एक दिन हम भी मिले और हमारी आँखों में एक रोशनी फैल गई और एक मद्धिम मद्धिम सी खुशी मैं अपने साथ घर ले गई। ढाई घंटे खड़ी रहकर भी मैं जरा थकी नहीं थी। लगता था कि उस खुशी के परों पर मैं उड़ रही हूँ। रात अर्ध नींद्री अवस्था में बीत गई। दिन चढ़ने पर मैंने बेसब्री से शाम की प्रतीक्षा की। शाम को तुम फिर मिलोगे।

हाँ हम मिले और एक दूसरे को देखकर सकुचित हो गए। ऐसे लगा मानो हमारे प्यार का भेद हमारे चेहरों पर लिखा हुआ हो।

हम एक दूसरे से दूर-दूर भीड़ में खो जाने का प्रयत्न करने लगे। पर हमारी आँखें सब कुछ भूलकर एक दूसरे को ही पढ़ती रहीं और एक दूसरे के अस्तित्व से हमारे दिल धड़कते रहे।

न प्यार की बात तुमने की न मैंने।

फिर मैंने तुम्हें अपने घर पर बुलाया। पहले औपचारिक ढंग से लोगों की तरह और फिर अपनों की तरह तुम आए। तुमने मेरे घर की, मेरे व्यवहार की जी भरकर प्रशंसा की। मेरे बच्चों के साथ तुमने मोह पैदा किया। यहाँ तक कि मेरे नौकरों के साथ भी तुम्हारी मैत्री हो गई।

कभी कभी खाली समय में शाम को तुम हमारे घर आ जाते और हम घंटों तक इकट्ठे बैठे रहते। शाम को मन्द मन्द-सी रोशनी में मधुर संगीत सुनते रहते या कुछ पढ़ते रहते और या फिर तुम मेरे पति से किसी गम्भीर विषय पर विचार करते रहते।

इस तरह बैठना छोटी-छोटी बातचीत की बातें करना मुझे बड़ा अच्छा लगता। तुम्हारी निकटता का अहसास मेरे भीतर उभार भरता रहता और समय खिसकता

जाना। तुम्हारे लौटने का समय होता तो मैं हठ करती—

नहीं।"

क्या नहीं ?"

खाना खा कर जाना।'

नहीं।

"क्या नहीं ?

घर वाले नाराज होंगे।

नहीं होंगे कह देना यहां आया था।'

ज़िद नहीं करते।'

और अन्त में मैं ही जीतती। तुम्हारे साथ बच्चों वाला हठ करना मुझे बड़ा अच्छा लगता था। जाते-जाते भी कितना समय बीत जाता। दरवाजे के पास खड़े-खड़े ही आध-आध घंटा बीत जाता और तुम्हें कोई-न-कोई आवश्यक बात याद आती रहती। जब जाने का ख्याल आता तो तुम मुझ से खफा हो जाते—

देखा फिर देर हो गई।'

मैंने तो नहीं की।'

मेरी माँ इन्तजार करती होगी।

"उन्हें मालूम तो है कि तुम यहाँ हो।

यही तो मुसीबत है।

मुसीबत ?

दुख।

दुख ?

इससे पहले कि मैं कोई और प्रश्न करूँ और तुम उत्तर दो, तुम साइकिल पर पाँव रख रात के अँधेरे में विलीन हो जाते। और मैं सोचती कि एक दिन मेरे जीवन में भी ऐसे ही अनजाने से फिसल जाओगे। जानती थी कि तुम मेरे कोई नहीं मेरे हमवतन भी नहीं।

और हमारे बीच में बड़ी दरारें थीं, बड़ी खाइयाँ। सोचती-सोचती मैं अन्दर आ जाती और अन्दर आकर मुझे उस सर्दी का अहसास होता जिसमें मैं बाहर खड़ी रही थी और मैं काँपने लगती।

पहाड़ी सर्दियों की शाम। चारों ओर जमी हुई सफेद बर्फ मानो सन्ध्या के घने अँधेरे में दूध घोल रही हो। आस पास ऊँचे-ऊँचे पहाड़ बर्फ की कोमलता से ढके हुए मानो अपनी प्रिया के आलिंगन का रसपान कर रहे हों। उस समय में मैं अपनी बैठक एक छोटे-से कमरे में ले आती। बड़े कमरे में वह उष्णता नहीं आती थी। यह छोटा कमरा मैं बड़े चाव से सजाती। दोहरी खिड़कियों पर रंगीन चित्र। एक कोने में मेरे पढ़ने लिखने का मेज होता दूसरे में बैठने का प्रबन्ध। सर्दियों में जो भी मुझे मिलने आता, मैं उसे इसी कमरे में बैठाती। सारा दिन यहाँ पर अंगीठी जलती रहती थी।

उस दिन मैंने मन ही मन तुम्हे याद किया। पता नही यह मेरी याद का आकर्षण था या तुम्हारे अपने दिल की बेचैनी, तुम सचमुच ही आ गए। धन्यवाद म मेरी आँखें भीग गइ।

तुम अन्दर आ गए मैं बोल न सकी। केवल उठी और फिर पता नहीं कैसे मैं तुम्हारी बाहो म थी।

वीणा वीणा वीणा, तुम धीरे धीरे कह रहे थ। मैं कुछ भी न कह सकी। मेरा मुह गुम हो गया।

इस आलिगन की कल्पना म अनेक बार मैंन चाहा था। इन बाहो के स्पर्श न अनेका बार मेरे प्राणा को झकझोरा था। शायद तुम्हारे साथ भी ऐसा ही बीती होगी। हमारी यह निकटता समय पाकर गहरी हो गई थी। चाहे एक दूसरे से किसी सम्बन्ध का मान हम नहा था।

वीणा वीणा वीणा

तुमने मेरी ठुड्डी को उठाया और मेरी आँखो म झाँकना चाहा। कमरे की मन्द-सी रोशनी म तुम्हारे नयन कोमल और पिघल पिघले से थे।

अमीन!

मैंने तुम्हारे वक्ष म अपना मुह छिपा लिया। पता नहीं क्यो मेरी आखें बरस पडी और आँसू अपन आप पलको पर उतर आए पर मुझे इसका बिल्कुल एहसास नहीं था।

तुम्हारी आखो म एक मस्ती थी। तुमने मेरे आँसू चूम लिए।

पगली!

तुमन मुझे बैठा दिया और स्वय मेरे सामने घुटनो के बल बैठ गये।

'वीणा वीणा तुने यह क्या किया?

मैंने? '

नही, नही तूने कुछ नहीं किया। यह मेरा ही कसूर है मेरा ही।'

कसूर?

किसी का भी कसूर नही," तुमन स्वय ही कहा 'शायद ऐसा ही होना था।

और तुमन अपना मुह मेरी गोद म छिपा लिया। अब आपकी बारी थी रोने की और मेरी थी चुप कराने की।

तुम पूर्ण स्त्री हो वीणा सपूर्ण तुझे पाकर मर्द किसी चीज की इच्छा नही कर सकता।'

मेरे कान अमृत पान कर रहे थ।

तेरा स्नेह '

'अमीन!

तुम चुप हो गए। और फिर जितनी देर हम चुपचाप एक दूसरे की ओर देखते रहे। हम दुनिया भूल गए। याद था तो केवल अब का क्षण तुमने मेरे दुपट्टे का चूमा मेरे हाथो का

तुम स्वतन्त्र नहीं हो तुम मेरी नहीं बन सकती। मैं आजाद नहीं। मैं तुझे अपना बना नहीं सकता।'

तुम मुझ से नहीं, अपने आप से बातें कर रहे थे।

तुम भी उदास हो गए। मेरी खुशी में तो पहले से ही उदासी घुली हुई थी।

कभी बवसो था।

कई प्रकार के भावों के बोझ से मैं भर गई थी। मेरा रंग जरूर पीला पड़ गया होगा। मेरी टाँगें बेजान हो गईं।

जीवन में अर्थहीन अन्तहीन भावों के वेग से अधिक थकाने वाला और कौन-सा परिश्रम हो सकता है।

मुझे ख्याल आ गया कि यदि मैं कभी कुछ समय पहले या कुछ समय बाद चलती या अगर मैं अपने कदम तेज या धीरे उठाती तो शायद मैं ठीक मौके पर इस मोड़ पर पहुंच जाती। पर क्या पता पहुंचती भी या नहीं। क्या पता जिस समय मैं एक रास्ते पर भटकता रहती, तुम किसी दूसरे बिल्कुल अलग रास्ते पर भटक रहे होते।

एक पल के लिए एक क्षण के लिए मुझे पूर्णता मिली। मुझे लगा मैं पहले कभी जी नहीं रही थी। केवल सांस लेती रही थी अभी तक। यही क्षण मेरी जिन्दगी का धड़कता पल था।

कैसा दुर्भाग्य था तुम्हें जानना तुम्हें पहचान लेना।

कैसा सौभाग्य था तुम्हें पाना चाहे पल ही पल का था।

तुमने मुझे बड़ा दुःख दिया है, अभी न पर मेरे सारे सुख और सभी खुशियां तुम्हारी ओर से ही आई हैं।

तुम्हें देखने पर मैंने उस जीवन की झांकी देखी है जो शायद मेरा हो सकता था।

मेरी रातों के अंधेरे में तुम्हारा प्यार बिजली की तरह चमका। मेरी आत्मा की सब अंधेरी गुफाएं जगमगा उठीं। मैं प्यार के इस अनुभव के लिए अब तुम्हारी ऋणी हूँ तुम्हारी देनदार हूँ। तुम्हें मिले बिना शायद मुझे प्यार का अहसास कभी न होता।

हाँ प्यार की कल्पना मैंने ऐसी ही की थी। यह अनिद्रा की मीठी पीड़ा ही तो प्यार है न।

क्या सच यही प्यार है न?

नहीं। नहीं। नहीं।

मैं छटपटाती और तुम्हें पुकारती। प्यार वियोग नहीं मिलन है। प्यार पीड़ा नहीं शान्ति है

पर हमारी खुशी किसी ने चुरा ली थी और हमारी राह पर पीड़ा के ढेर उभर आये थे।

हम मिलते तो थे परन्तु बड़े घुट घुट में। तुम मेरा हाथ दबाते तो ये पर झट ही झटक देते मानो कांटे चुभ गए हों। और मैं कितनी कितनी देर तक उस हाथ में समाये हुई तुम्हारे स्पर्श को अपने दूसरे हाथ में सहलाती रहती।

मैं देखती प्रतीक्षा ही मेरी प्रतीक्षा का उत्तर था।

तुम आते विह्वल होकर मिलते परन्तु जाते समय जरूर वचन हो जाते। इसमें न मेरा दोष था न तुम्हारा।

भाग्य में मैं विश्वास नहीं करती कि इसके आगे सिर झुकाऊँ।

मेरे लिए यह एक सच्चाई थी जो घटित हो गई। मैं इससे डरती नहीं और न ही भागती। मेरे पति को मेरी इस उत्कंठा का पता था। भला ऐसी बातें भी कभी छिपायी जा सकती हैं। यह असहनीय और असम्भव प्यार जिसका प्रगट करना भी कठिन था और छिपाना तथा खत्म कर देना तो उससे अधिक कठिन था।

जो पीड़ा मैंने ली उसकी थाह तुम नहीं ले सकते। कोई भी नहीं ले सकता। भला कोई किसी के दिल में उठते तूफानों का अंदाजा लगा सकता है? कवि और चित्रकार भी यथार्थ की सुन्दरता और तीव्रता को पहुँच नहीं सकते।

मैंने तुम्हें प्यार किया है, करती हूँ और करती रहूँगी। चाहे मैं अपना घर छोड़ कर तुम्हारे पास नहीं आ गई। चाहे मैंने अपनी जिंदगी के बने हुए प्रबन्ध को खराब नहीं किया। पर मेरी जिंदगी सदा तुम्हारे लिए तड़पती है और मैं रह रह कर पूछती हूँ कि क्या अमूल्य मानव जन्म का यही अन्त है।

मैं बार-बार उन क्षणों को जीती हूँ जो मैंने तुम्हारे मिलन में बिताए थे। चाहे हमारा मिलन थोड़े समय का है पर हमारा प्यार चिरकालीन है। जब से मेरी सूझ में प्रकाश की पहली किरण फूटी मैंने तुम्हें ही प्यार किया है।

और फिर कई बार मैं इस प्यार पर हँस पड़ती मज़ाक करती जब तुम बूढ़े होगे तो अपने पुत्र पौत्रों को मेरी कहानी सुनाओगे?

हमारे प्यार की कहानी तुम कहते।

क्या कहोगे?

जो हुआ जो बीता।

और हँसती हँसती मैं रोने लगती और मेरी मुस्कराहटें सिसकियों में बदल जातीं।

तुम मुझे चुप कराते।

इकट्ठे रहने का सपना मैंने कभी नहीं देखा था। मैं तुम्हारे साथ यह ज्यादती कभी नहीं कर सकती थी। मैं जानती थी तुम्हारे सामाजिक बंधन मुझसे भी कठोर हैं।

हम फिर बिछुड़ गए। बिना अलविदा कहे तुम्हें कहीं जाना पड़ गया। पहले तुम्हारे पत्र आते रहे। तुम दूर-दूर देशों की बातें मुझे लिखते रहे। फिर वे पत्र कम हो गए और फिर बंद—

मैं जानती हूँ यह भी जीवन की गति है। यह गति कभी तेज और कभी मंद पड़ जाती है। मुझे इस बात का कोई गिला नहीं। मैं जानती हूँ मुझे विश्वास है कि तुम्हारे सपनों की सीमा में अब भी मेरे प्यार की परछाई जरूर पड़ती होगी।

जिन्दगी का कोई भी प्यार व्यर्थ नहीं जाता, बल्कि भावनाओं के खजाने को भरपूर कर जाता है।

भटकना प्रतीक्षा करना ढूढना मिलना और बिछुड जाना।

फिर ढूढना प्रतीक्षा करना और भटकना।

जिंदगी कभी सम्पूर्ण नही हो सकती। इस ढांचे म जहा सच्चाई की परछाइयां देखकर ही मनुष्य सन्तुष्ट हो जाता है।

और सच्चाई की परछाइया सदा पडती रहेगी।

मुझे भरोसा है कि एक दिन मैं तुम्हे मिलूगी और पूछूगी "क्या तुमने मेरी कहानी अपने बच्चो को सुनाई है ?"

जन्म-दिवस

सविन्दरसिंह उप्पल, १९२४

डा० सविन्दरसिंह उप्पल पजाबी के प्राध्यापक आलोचक एव कथाकार हैं। हाल म ही उन्हें पजाबी कहानी का विकास विषय पर दिल्ली विश्वविद्यालय से पी एच०डी० की उपाधि प्राप्त हुई है।

उप्पल ने अपनी कहानियो म पजाब के ग्रामीण एव नगर जीवन की विषमताओ का सफल चित्रण किया है। उनके चार सग्रह प्रकाशित हो चुके हैं—कुडी पोठोहार दी कहिंदे सुनार भरा भराया दे तथा 'दुध ते बुध।

ज्योही जुगलप्रसाद का वेतन पांच रुपये और बढा उसने अपने कनिष्ठ पुत्र ज्योति को एक ऐम स्कूल म प्रविष्ट कराने की अपनी चिर आकाक्षा पूरी करनी चाही जो कि आरम्भ से ही अग्रजी की शिक्षा देता हो तथा नवीन शिक्षा पद्धति पर आधारित हो। दूसरी ओर उसकी पत्नी देवकी पति के वतन की बढोतरी स घर के लिये आवश्यक वस्तुए जुटान की आस लगाये बैठी थी। ज्योति को ऐम स्कूल म प्रविष्ट कराने की बात सुनकर देवकी थोडी देर तक तो सोच म पडी रही पर इस बात को कहे बिना भी उससे न रहा गया—

मैं तो कहती हूँ कि ज्योति को किसी छोटे मोटे स्कूल म भरती करा दो हम पाच रुपया महीना फीस कहा दे सकते है।

भली मानस! यही समझ ले कि यह पांच रुपय बढे ही नही।"

राम राम। ऐसी बात जीभ पर मत लाओ।'

फिर ज्योति को नये ढग स चलने वाले स्कूल म बडे उत्साह के साथ प्रविष्ट करा

लिया गया। जुगलप्रसाद जहा यह चाहता था कि उसका पुत्र अंग्रेजी म प्रवीण हो जाय वहा वह इसलिए भी उसे ऐसे स्कूल म प्रविष्ट कराना चाहता था क्योंकि वहा प्रत्येक बालक को अपने व्यक्तित्व के विकास का अवसर प्रदान किया जाता था। कभी कभी वह दफ्तर के समय से कुछ देर पहले घर से चल पडता। और ऐसे स्कूल के बाहर खडा होकर देखता कि वहा लगे हुए सुदर पुष्पो के समान बालक साफ-सुथरे एक जैसे वस्त्र पहन, ऊँच नीच म परे खिले हुए धीरे धीरे आपस म प्रेमपूवक बातें करते और हसते तथा गालीगलौच करना तो वे अपनी और अध्यापिकाओ के आदेशानुसार पाप समझते थे। बिना सकोच के वे सबके साथ बात कर लेते, उत्साहपूवक और आत्म विश्वास के साथ व यथावसर वाद विवाद कर सकते। कुछ ऐसी ही बातें थी जिनके कारण जुगलप्रसाद की चिर अभिलाषा थी कि वह अपने कनिष्ठ पुत्र को किसी ऐसे ही स्कूल म प्रविष्ट कराए।

इन स्कूलो म पढाने के लिये तो प्रत्येक की इच्छा होती है पर पढा विरला ही सकता है क्योंकि इन स्कूलो की मूछें दाढी से भी बहुत लम्बी होती हैं—दाखिला, वर्दी खेलो की फीस खान पीने के पैसे आदि कुछ ऐसे खच थे जिनको देने मे साधारण आदमी का कचूमर निकल जाता है। पर जुगलप्रसाद इरादे का बडा पक्का था, इसलिए उसने इधर उधर से मागमूग कर बडी कठिनाई स एकत्र किये गए चालीस रुपये देने के समय तनिक भी चू चाँ न की। लडके को स्कूल म प्रविष्ट कराके वह अधिक प्रसन्न हुआ। आज तो उसके पैर भी धरती पर न पडते थे। वह सोचता कि ज्योति ऐसे निखरे और स्वच्छ वातावरण म पढकर बहुत योग्य बनेगा। स्वतन्त्र भारत का वह ऊचा और अच्छा अफसर बन सकेगा। उन्नति के माग पर अग्रसर हमारे देश को इस समय ऐसे मनुष्यो की बडी आवश्यकता है। सारे खानदान और भारत के लिए ज्योति ज्योति बन कर दिखा देगा।

ज्योति जहा योग्य था वहा सुदरता म भी वह कम न था। उसकी अध्यापिका उसके स्वच्छ और धुले हुए कपडो म चमकते हुए उसके रूप और सुदर नाक-नक्शो को देखकर उसे प्रतिदिन प्यार किए बिना न रह सकती। वह उसका विशेष ध्यान रखती।

महीने के बाद जब परीक्षा हुई तो ज्योति अपने सहपाठियो म हर बात म आगे था। उसकी प्रिंसिपल ने रिपोट मे प्रसन्नता प्रकट करने के साथ-साथ जुगलप्रसाद को ऐसे योग्य बालक का पिता होने के लिए बधाई लिख भेजी।

अब तो जुगलप्रसाद अपने जैसा भाग्यशाली पिता किसी और को समझता ही न था। दफ्तर म वह अपने कई क्लक साथियों स ज्योति की योग्यता के विषय म बड गव से बातें करता और घर म वह दूसरे बच्चो को ज्योति जैसा योग्य बनने की प्रेरणा देता था। देवकी को तो कई बार कहता—

मैं कहता था कि ज्योति सारे खानदान का नाम चमका देगा।

यह बात सुनकर उसकी पत्नी देवकी भी अपने मन ही मन म गव करती कि आखिर ऐसा योग्य पुत्र जन्मा तो मैंने ही है।

अभी छ: महीने ही बीते थे कि स्कूल से एक चिट्ठी आई। जुगलप्रसाद उस पत्र को पा फूला न समाया—

'मैंने कहा सुनती हो ज्योति की मां ! यह देखो।' और वह ज्योति को उठा कर रसोई घर में ही ले गया। उसने ज्योति को इतनी बार चूमा जैसे वह आज चूमने का रिकार्ड ही तोड़ कर रख देना चाहता हो और ज्योति आश्चर्यचकित होकर पिता के मुंह की ओर देख जा रहा था। 'मैंने कहा आखिर बात तो बताओ। आखिर बात क्या है जो इतने प्रसन्न हो रहे हो।' देवकी भी बात जानकर इस खुशी में शीघ्र ही सम्मिलित होने के लिए उतावली हो रही थी।

'चलो कमरे में चलो। यह बात जरा आराम से बतलाने वाली है।' और जुगलप्रसाद ज्योति को उसी प्रकार उठाये हुए कमरे में आ गया।

देवकी भी बड़ी आतुरता से पति के पीछे पीछे कमरे में आ गई।

'जरा चारपाई पर बैठ जाओ।' जुगलप्रसाद मुस्कराया और कुर्सी पर बैठ कर आई हुई चिट्ठी को फिर से पढ़ने के लिए ऐनक को नाक के ऊपर जमाने लगा।

एकाध मिनट के लिए वह अंग्रेजी में लिखी हुई चिट्ठी को फिर पढ़ता रहा जिससे कि वह अपनी जीवन संगिनी को इस शुभ-समाचार की प्रसन्नता में पूर्ण रूप से सम्मिलित कर सके।

'बतलाओ भी', देवकी ने मुस्कराते हुए ऐसे कहा मानो और प्रतीक्षा उसके लिए असह्य हो रही थी।

'लो सुनो।' और फिर उसने ऐनक को ऊंचा करके धीरे धीरे देवकी को समझाते हुए कहा—

'ज्योति की प्रिंसिपल ने लिखा है कि इस रविवार को प्रान्त के प्रसिद्ध मंत्री ज्वालाप्रसाद का जन्म दिवस यहां की नागरिक-सभा की ओर से मनाया जा रहा है। शहर के कुछ चुने हुए स्कूलों के दो दो विद्यार्थियों के साथ मंत्री जी इस अवसर पर मिलना पसन्द करेंगे। के०जी० कक्षा में से हमारे ज्योति को चुना गया है। यह उनका हार पहनायेगा।'

यह सुनते ही देवकी ने उठकर ज्योति को अपनी गोद में ले लिया।

'यह मेरा लाल जायगा इतने बड़े मंत्री के पास। बलिहारी इस पर।' फिर उसने चुम्बनों की बौछार लगा दी मानो अपने पति के द्वारा स्थापित रिकार्ड को तोड़ने का प्रण कर लिया हो। फिर उठाकर ज्योति को छाती से लगा लिया। देवकी का चेहरा उस समय किसी तजस्वी के चेहरे से कम नहीं चमक रहा था।

पत्नी को प्रसन्न होता देखकर जुगलप्रसाद और भी गद्गद् हो गया। ज्योति ने आज उनकी अभिलाषा को साकार कर दिया था। फिर उसने आंखें बन्द कर लीं ताकि सम्पूर्ण प्रसन्नता और उल्लास को अन्तर्मुखी कर ले।

पर शीघ्र ही आंखें खोल कर उसने देवकी से कहा 'अरे हां यह तो शुभ बतलाना भूल ही गया कि ज्योति के लिये कुछ विशेष प्रकार के वस्त्र तैयार करने हैं वहीं पहनकर जाने के लिये।' फिर ऐनक को ठीक करके चिट्ठी को पढ़ता पढ़ता कहता गया—

"सफेद कमीज, सफेद नकर, सफेद जुराबें सफेद जूत और एक सुनहरी हार।'

इन चीजों का नाम सुनते ही देवकी का उल्लास काफूर हो गया। उसके मुख पर आती हुई प्रसन्नता वहीं-की-वहीं रुक गई और फिर धीरे धीरे प्रसन्नता का स्थान चिन्ता और क्लेश ने ले लिया। उसने ऐसा अनुभव किया मानो वह उल्लास के महल को केवल बाहर से ही देखकर प्रसन्न हो गई थी और जैसे ही आतुरता के साथ उसने अन्दर पग रखने के लिये प्रयत्न किया कि किसी ने अचानक ही उस उल्लास रूपी महल का द्वार बन्द कर लिया हो।

क्या बात है तुम उदास क्यों हो गई हो ?" जुगलप्रसाद को इस प्रसन्नता की घड़ी में उसका चेहरा तनिक भी अच्छा न लगा।

'मैं सोचती हूँ कि इन चीजों के लिये पैसे कहां से आवेंगे। आज तो महीने की २६ तारीख है और घर में कुल १० १२ आने साग सब्जी के लिये पड़े हैं। अभी तो पिछले माँग हुए ४० रु० ही नहीं उतर पाये।

इस कटु सत्य ने तो मानो जुगलप्रसाद को भी ऊपर से पटक दिया। वह तो अभी तक उल्लास के गगन में वात्सल्य के पंख लगाकर उड़ान भर रहा था। इस आवश्यक पहलू की ओर उसका पहले ध्यान न गया था। जैसे स्वादिष्ठ भोजन जल्दी जल्दी खाते समय दांतों के नीचे आ जाने से कटी जीभ सम्पूर्ण भोजन का स्वाद मार देती है ठीक इसी प्रकार की कड़वाहट जुगलप्रसाद ने देवकी की कटु सत्य जैसी वास्तविकता में अनुभव की। उसे अपनी आर्थिक अवस्था के ऊपर खीझ आई जो पग पग पर आकर उसका मार्ग रोक लेती थी। फिर उस की यही खीझ क्रोध बनकर देवकी के ऊपर बरस पड़ी।

बस तुम तो हर समय यहां रोना रोती रहती हो। लोग तो ऐसे अवसरों के लिए तरसते हैं। और तुम हो कि

'आप तो बस ही गरम हो रहे हैं। क्या मैं नहीं चाहती मेरे लाल की शान बने ? पर इन चीजों का प्रबन्ध तो करने से ही होगा न। ऐसे थूक से तो बड़े नहीं पकते।

चाहे कुछ भी हो, इन चीजों का प्रबन्ध तो करके ही रहूँगा। जुगलप्रसाद ने दृढ़ता के साथ कहा।

अच्छा मैं देखती हूँ कि मुन्ना की गुल्लक में कितने पैसे हैं। वह रोएगी तो सही पर मैं उसे बहला लूंगी।' और वह गुल्लक लेने चली गई।

देवकी के जाने के बाद जुगलप्रसाद ने सोचा— मैं तो यों ही बेचारी देवकी पर गुस्सा होने लग जाता हूँ। पर पैसे की कमी मुझे सदैव क्रुद्ध कर देती है। यह भी कोई जीवन है कि पैसे-पैसे के लिए हाथ सिकोड़ना पड़े। क्या हम गरीबों का इतना भी अधिकार नहीं कि हम अपने एक होनहार बच्चे की एक छोटी सी प्रसन्नता को भी खरीद सकें ? और यह अमीर हैं कि हजारों रुपये ऐसे ही ऐयाशी में बहाते फिरते हैं। हम गरीब लोग तब तक न उठ पायेंगे जब तक हम स्वयं प्रयत्न नहीं करते। अमीर न तो हमें उठाएगा और न ही हमें उठने देगा।

फिर उसका ध्यान देवकी की ओर गया जो विवाह के समय से ही तंगी-तुर्शी के

पाटा में पिसती आ रही थी। अब उसके मन में देवकी के लिए अधिक दया थी—बेचारी क्या करे ? बड़ी कठिनाई से डेढ़ सौ रुपये में पाँच बच्चों का पालन करती है। स्त्री वास्तव में कुछ अधिक यथार्थवादी होती है। घर में बात-बात पर उसे आर्थिक दृष्टि से अभाव का अनुभव होता है। उसे गिनी चुनी आय में निर्वाह करने के लिए सौ उपाय निकालने पड़ते हैं। उस बेचारी को अधिक समय तक घर की चारदीवारी के घिरे वायुमण्डल में ही तो रहना पड़ता है। साथ में वह प्राय कमाती भी तो नहीं। ऐसा विचार आना स्वाभाविक ही है। इस प्रकार के विचारों ने उसके मन में देवकी के प्रति अधिक सहानुभूति और दया उत्पन्न कर दी।

'मैंने कहा गुड्डी की गुल्लक से साढ़े सात आने निकले हैं और ज्योति की गुल्लक से सवा बारह आने।"

जुगलप्रसाद ने देखा कि वह बेचारी यह प्रयत्न कर रही थी कि किसी प्रकार मेरा लाल स्कूल वालों की इच्छानुसार तैयार होकर इतवार को जा सके। उसने सोचा—स्कूल वालों ने तो अपनी ओर से हमारे बच्चे को मान दिया है। पर वे क्या जानें कि यह मान हमारे लिए मुसीबत बन जायेगा। अच्छा कोई बात नहीं। कुछ भी हो जाय मेरे बच्चे को इतवार तक यह चीजें मिलनी ही चाहियें। आज बृहस्पतिवार है। बीच में दो दिन हैं—शुक्र और शनि। कोई बात नहीं। यह सोचकर। वह दृढ़ विश्वास से बाहर निकल गया जिससे किसी से कुछ रुपये उधार ले सके।

एक घण्टे के बाद जब वह लौटा तो उसकी जेब में एक एक रुपये के तीन नोट थे। उसे ये तीन रुपये भी उधार लेने के लिए कितने लोगों के आगे हाथ फैलाना पड़ा, तब जाकर वह एक एक करके तीन रुपये उधार ले सका था।

घर आकर बजट पर विचार किया गया।

'एक फटी सफेद चादर में से इसकी कमीज तो मैं पड़ोसिन की मशीन से तैयार कर लूँगी। हाँ सफेद नेकर का कपड़ा भी बाजार से लेना पड़ेगा और सिलाई भी उसकी दर्जी से करानी पड़ेगी—मुझे नेकर सीना नहीं आता।' देवकी ने पति के इन पैसों से ही काम चलाने की युक्ति बताते हुए कहा।

देवकी से गुल्लकों में से निकली रेजगारी को लेकर जब वह जाने लगा तो उसने देखा कि ज्योति घर पर नहीं था। इधर उधर ढूँढने पर वह कहीं दृष्टिगत न हुआ। यद्यपि इस समय थोड़ा थोड़ा अँधेरा हो गया था पर जुगलप्रसाद न चाहता था कि इस काम में विलम्ब किया जाय। वह स्वयं ज्योति को ढूँढने चला गया। उसने देखा कि बाहर गली में लड़कों के साथ ज्योति खेल रहा है। उसको इस प्रकार निश्चिन्त देखकर उसने सोचा सच कहते हैं कि बचपन बादशाहत होती है उसको अपने वस्त्रों का प्रबन्ध करने की कोई चिन्ता ही नहीं माँ-बाप स्वयं ही चिन्ता करेंगे।

लगभग दो घण्टे बाद जब जुगलप्रसाद और ज्योति घर लौट रहे थे तो दोनों के मुखों पर प्रसन्नता के चिह्न थे। ज्योति इस लिए प्रसन्न था कि आज उसके लिए नए बूट नई जुराबें और नेकर का कपड़ा आदि वस्तुएं खरीदी गई थीं। और जुगल प्रसाद इस समस्या का हल कर लेने पर इसलिए प्रसन्न था कि वह अपने होनहार

पुत्र का मन्त्री जी के स्वागत के अवसर पर भेज सकेगा। दर्जी को उसने इस बात के लिए ठहरा दिया था कि वह नेकर शनिवार को अवश्य ही दे दे। वह रास्ते में सोचता आया—सच कहते हैं एक होनहार पुत्र भी घर को चमका देता है। इतवार के दिन जहाँ और चुने हुए स्कूलों के योग्य बालक स्टेज पर जाकर मन्त्री जी को हार पहनायेंगे उनमें मेरा ज्योति भी होगा। जब इसका नाम पुकारा जाएगा ज्योति प्रसाद, लड़का लाला जुगलप्रसाद तब वहाँ उपस्थित अभ्यागतों और मन्त्रियों को पता लगेगा कि वह लड़का लाला जुगलप्रसाद का है। फिल्म ली जाएगी। समाचार पत्र में इसका नाम आएगा और हो सकता है कि इसका चित्र भी आवे—यह सोचकर उसकी बाँछें खिल गई और वह मन-ही-मन इस बात के लिए अपना ही साधुवाद करने लगा कि कम-से-कम एक बच्चे को तो अच्छे स्कूल में प्रविष्ट कराने की मैंने बुद्धिमानी की थी। जो प्रतिष्ठा मेरे और चार लड़के लड़कियाँ न मिलकर भी नहीं बढ़ाई वह इस अकेले ने ही कमाकर दिखा दी है।

घर आते ही जुगलप्रसाद ने देवकी को बुलाया और बहुत मान और उत्साह के साथ उसने उसे बताया—'ज्योति की माँ! मैं नेकर का कपड़ा खरीद कर दर्जी को दे आया हूँ और शनिवार के लिए पक्का भी कर आया हूँ। तुम ये बूट जुराबें और हार थैले से निकालकर जरा सँभाल कर रख दो और कमीज कल अवश्य बना देना। फिर कुछ और स्मरण कर वह दृप के साथ बोला—'ज्योति की माँ! आज ईश्वर ने एक और काम बना दिया। मैं जब स्थानीय पत्र के दफ्तर के पास से निकला तो विचार आया कि पता किया जाय कि उस दिन के अवसर पर किसी प्रकार हार पहनाते हुए ज्योति के चित्र का भी प्रबन्ध हो सके। ज्योंही मैं दफ्तर के भीतर गया एक फोटोग्राफर कमरा लटकाए बाहर आ रहा था। मैंने उससे बात की तो पता चला कि इस बार वाले समारोह पर वही जा रहा है। मैं उससे भी बात कर आया हूँ कि जब रिपब्लिक स्कूल का के० जी० कक्षा का प्रतिनिधि मेरा यह लड़का मन्त्री को हार पहनाए तो वह अवश्य ही उसका चित्र खींचे।

देवकी के मुँह पर कुछ चिन्ता के चिह्न देख कर अपनी प्रसन्नता में बिना अन्तर डाले वह बोल पड़ा— बाकी रही पैसों की बात, फोटो बनने तक पहली तारीख तो आ ही जाएगी भली मानस। ईश्वर आप ही गरीबों के काम करता है हा हा हा।' जुगलप्रसाद सारी की-सारी बात एक साँस में ही कह गया और फिर कभी-कभी ऐसे अप्रत्याशित अवसर में पूरा-पूरा लाभ उठाते हुए वह हँस-हँस कर दोहरा हो गया।

देवकी चित्र सम्बन्धी इस फिजूलखर्ची के सम्बन्ध में कुछ कहना तो चाहती थी पर पति के रंग में भंग पड़ने के डर से कुछ न बोली और बाहर चली गई।

सुबह लड़के और लड़कियों को स्कूल और जुगलप्रसाद को दफ्तर भेजने के बाद देवकी ने एक पुरानी सफेद चादर निकाली। पहले तो उसे खूब निरखा परखा। फिर काट-छाँट की और दिन भर मगज पच्ची करके पड़ोसिन की मशीन पर शाम तक बड़ी कठिनाई से कमीज तैयार कर सकी।

उधर जुगलप्रसाद ने दो घण्टे की छुट्टी ली और नागरिक सभा के कार्यालय में

जाकर प्रयत्न किया कि किसी प्रकार उसको भी निमन्त्रण पत्र मिल सके जिससे वह स्वयं अपने नेत्रों से अपने प्यारे पुत्र को मान प्राप्त करता देख सके। पर उसे ज्ञात हुआ कि उस समारोह में तो बड़े बड़े राजनीतिज्ञ नेता, धनवान लखपति, ऊँचे अधिकारी और कुछ बुलाए गए बच्चे ही जा सकते हैं और तब उसने सोचा कि मैं तो इनमें से किसी गिनती में भी नहीं आता। बेचारा मन की उमंग मन ही में दबाए रह गया।

इतवार का दिन आया। ज्योति को उसकी माँ, बहनों, भाइयों और स्वयं जुगलप्रसाद अथवा सारे परिवार ने तैयार किया। आज सारे परिवार को ज्योति पर मान था जिस कारण सभी जुटे हुए थे। कोई उसे साबुन मल मल कर नहला रहा था, कोई नेकर कमीज को इस्त्री कर रहा था और कोई उसकी कंघी पट्टी के काम में जुटा हुआ था।

सायंकाल को सारा परिवार इस बात की प्रतीक्षा में था कि किस समय ज्योति समारोह में वापस आए जिससे वह अपने मुख से सारी रौनक और प्राप्त सम्मान सविस्तार बताये। जुगलप्रसाद दो बार सड़क तक स्वयं हो आ चुका था। बच्चों को जाकर देखने के लिए भेजने का तो प्रश्न ही न था। पर वह अभी तक नहीं आया था। अन्ततोगत्वा उसने दूर से देखा—उसकी प्रिंसिपल स्वयं ज्योति को अपने साथ ला रही थी। यह दृश्य देखकर तो जुगलप्रसाद की प्रसन्नता का मानो कोई अन्त ही न रहा। देवकी का ध्यान उस ओर आकृष्ट करता हुआ वह गद्गद होकर बोला—

आखिर सारे स्कूल का योग्य बालक जो हुआ। प्रिंसिपल भी इसके साथ आने में गर्व समझती है। वह देखो वह बार बार ज्योति की ओर झुक कर उसे अपनी बाहों से खींचती है और बातें करती है।

देवकी अपने अन्य बच्चों को भी इस प्रसन्नताजनक दृश्य से आनन्द लेने का अवसर देने के विचार से उनको लिवाने के लिए भीतर चली गई।

पर पास आते ही जुगलप्रसाद ने देखा कि ज्योति सिसकियाँ भर रहा है। यह देखकर जुगलप्रसाद हक्का बक्का रह गया। यह बात उसकी समझ में न आ रही थी। आते ही उसकी प्रिंसिपल ने कहना आरम्भ किया— 'मिस्टर जुगलप्रसाद मुझे खेद है कि आप के सुपुत्र ज्योति को हार पहनाने का मान न मिल सका क्योंकि सेठ लखपतराय ने ज्योति के स्थान पर अपने पुत्र का नाम लिखवा लिया था। मैंने तो उसकी एक न सुनी पर उसने हमारे चेयरमैन को कहकर यह काम करवा लिया। आप जानते ही हैं, मैं तो आखिर एक मुलाजिम ही हूँ मुझे ऐसा होने के कारण बहुत ही खेद है।'

ज्योति की प्रिंसिपल यह सब कुछ एक साँस में ही कह कर चलती बनी जैसे कोई मुसाफिर आने वाले तूफान की मार से बचने के लिए खिसकने का प्रयत्न करता है।

जुगलप्रसाद पर जैसे वज्र गिर पड़ा हो। उसे अपने पैरों के नीचे से मानो धरती खिसकती हुई प्रतीत हुई। वह वहीं का वहीं खड़ा रह गया। उसने ऐसा अनुभव किया जैसे किसी मोटी तोंद वाले ने उसके भीतर पटोल छिड़कने के पश्चात दियासलाई जला

कर उसकी इच्छाग्रा और उमगो को भस्म कर दिया हो और वह आग की लपट उसके रोम रोम म निकल कर उसको जला रही हो। सहसा उसकी आखा म लहू उतर आया और वह इस प्रकार दृढता के साथ गर्जा—

आज उस मत्री का जन्म दिन नहा, मेरा जन्म दिन है मेरे सोय हुए साहस और धय का जन्म दिन है। मैं देखूगा कि अब कोई कसे गरीबो की इच्छाग्रा और उमगा का लताडने का साहस करेगा।'

बाहर आकर देवकी और उसके अन्य बच्चो ने जब ज्योति को सिसकिया भरते और जुगलप्रसाद को जोश और क्रोध म भभकते देखा तो उनके नेत्र खुले क खुले रह गए।

–

वहन की महक

नवतेजसिंह, १९२५

सुप्रसिद्ध साहित्यकार स० गुरबख्शसिंह के सुपुत्र और प्रीतलड़ी के सपादक नवतेजसिंह पजाबी की नई पीढ़ी के उन लेखकों में हैं जिन्होंने पजाब के बाहर भी बहुत ख्याति अर्जित की है। सन १९५३ में बुखारेस्ट के चौथे विश्व-युवक-सम्मेलन में आयोजित कहानी प्रतियोगिता में नवतेज की कहानी 'मनुक्ख दे पिउ' (मनुष्य के पिता) को प्रथम पुरस्कार मिला था और तब से उनकी बहुत सी कहानियाँ रूस तथा पूर्वी योरुप की भाषाओं में अनूदित हुई हैं।

नवतेजसिंह के प्रकाशित कहानी-सग्रह हैं 'देश वापसी' 'बासमती दी महिक' 'चानण दे बीज'।

दिल्ली वाली चाची जी का भी क्या घर था।

जीते के गाँव के गुरुद्वारे से भी कहीं बड़ा।

कुछ दिन ही हुए जीता अपने गाँव से आया था। सारी रात गाड़ी छिक छिक करती रही थी। उसके साथ उसकी बीमार माँ आई थी पिताजी और जीजी सोमा आई थी। और इस वक्त पिताजी माँ को दिल्ली के बड़े अस्पताल में ले गए थे।

माँ ने अस्पताल जाते वक्त जीते से कहा था "रो न मेरा बीबा वीर सोमी जीजी तो तेरे पास है। तेरे दिल्ली वाले चाचा की मदद से मैं इस नामुराद बीमारी से जल्दी ही पिंड छुड़ा लूँ तो मेरा मुँह अच्छा हो जाए। फिर मैं अपने लाल का पहले की तरह चूम सकूँगी।" और माँ ने कुछ इस तरह जीते को भींचा था कि उसको लगा जैसे होंठो की जगह माँ इस क्षण बाँहों द्वारा ही उस को चूम गई हो।

फिर मा ने एक पोटली सोमा जीजी को दी थी, वहीं इसमें दो राखियां भी हैं। चौथे बुध को अपने वीर के एक राखी बांध देना और दूसरी अपने चाचा के लड़के के बांध देना—वह भी तेरा भाई है। उस बिचारे की अपनी कोई बहन भी नहीं है। और सामिए, मेरे जीते का ख्याल रखना। यहाँ उसके लिए तू ही मेरी जगह है।' जब मा ने अपनी जगह बहन को सौंपी तो जीते को लगा था कि काली जैसी बेडौल परछाईं मां की तरफ बढ़ के आई है और उसे दूर घसीट के लिए जा रही है। परछाईं—हूबहू वैसी परछाईं जैसी कि डरावनी कहानियों में होती है और अपने गांव के गुरुद्वारे से भी कहीं बड़े घर में जीते के पास सिर्फ सोमा जीजी ही रह गई थी।

बस तो इस घर में दो कुत्ते भी थे चाची जी भी थी और चाची जी का इकलौता बेटा भी था जिसको काका जी कहती थी और कितने ही नौकर-नौकरानियां थीं जो काका जी को छोटा साहब कहते थे (चाचा जी तो सवेरे एक बड़ी सारी मोटर में बैठकर अपने काम पर चले जाते थे)।

सवेरे चाचा जी की मोटर बाहर के बड़े फाटक में से हो कर निकलती थी और उसके बाद फिर दिन भर इतने बड़े घर में कोई मीठी आवाज़ नहीं सुनाई पड़ती थी।

चाची जी तो उनसे बहुत कम बोलती थी। जो कभी बोलती भी तो—

अंदर पर पांव न आ

कुर्सी पर ऊधम मत मचा '

पानी पीने वक्त एसे गट गट मत किया कर '

तुझे दीखता नहीं आंखें हैं कि टिच बटन

यह कोई चूल्हा थोड़ी है। यह अंगीठा है '

निरा गवार कहीं का'

चाची जी बड़े अच्छे फूलों वाले कपड़े पहनती थी पर उनकी आवाज़ में कांटे ही कांटे थे।

काका जी (छोटा साहब) जीते का हम उम्र होते हुए भी उसके साथ कभी नहीं खेलता था। काका जी के पास कितने ही खिलौने थे—एक छोटी सी रेलगाड़ी अपनी लोहे-वाली लकीर पर ही घूमती थी आगे भोंपू बोलता था तो पीछे पीछे बत्तियाँ जलती-बुझती थीं एक टोपी वाला बाजीगर चाभी लगाने पर कई करतब दिखाता था दो दो शीशों वाला एक डिब्बा था जिसे आंखों से लगाते हुए काका जी ने कहा था दूर-दूर तक की झाँकियाँ इसमें एकदम पास की सी दिखाई देती हैं और भी कई चीजें। बाजे थे कि जैसे परियों को बस में कर लें। पर काका जी किसी भी चीज को जीते को हाथ नहीं लगाने देता था। वह तो जीते के साथ बात भी नहीं करता था। अगर कभी कुछ कहता तो ऐसे हम क्या तुम क्या करता कि कई बार तो जीते की समझ में भी कुछ नहीं आता—

मेरे ग्यूमास्टर को हाथ मत लगाइए

यह हमारा ट्रांस्मीटर है हम तुम को छून नहीं देंग '

बाहर स वही काका जी अन्दर आ गया। उसके साथ उसका एक दोस्त था। चाची ने दाना का बडा लाड किया, दुलराया। फिर काका जी और उसका दोस्त दाना बाहर बरामदे म खेलन चले गए। काका जी ने सभी खिलौने अपने साथी के सामन रख कर दिए (वही सब खिलौन जिनको जीता हाथ भी नही लगा सका)।

जीता भी बरामदे म चला गया। जीता कुछ दर तक अपन उम्र के दोना लडका को दखता रहा। जीत क दिल म लहरें उठ रही थी काश वह भी तीन पहिए वाली छोटी सी अपन विचारो की साइकिल पर दो चार क्षण सवारी कर सके। और तब वह दाना यार उस डिब्बे जसे को आँखो स लगा कर मूर्तियाँ देखने तो जीता उनक मुह पर पल-पल म चढती खुशी देख-देखकर चलचा उठता। वह अपने आपस उसके बारे म प्रश्न करता था, इस डिब्बे म ऐसा क्या है गाडिया थी ? पहिए थे ? स्वग क बाग थ ? मा का बीमार मुखडा था ?

यह लडका कौन है ?"

"इस की मा अस्पताल म है। मामा बोलती थी वह मर जाएगी।"

जीता एक दम चौंक पडा।

'इसको क्या हो गया है ?"

कुछ पागल भी है।'

जीता तडप के अन्दर अपनी जीजी सोमा स जा के चिपट गया।

चाची को फिकर हो गई, वह गैड के बाहर काका जी को दखने चली गई। वहा काका जी और उसका यार खिलखिला कर हँस रहे थे।

चाची को तसल्ली हो गई। वह अन्दर आई पर बड गैद म जीन से कहन लगी 'गवार कही का। तू न तो मेरा दम ही खीच लिया था। मैं समझी कही काका जी को कुछ हो गया है।

और फिर कुछ दर बाद 'ऐसा क्या गजब हो गया है जो इतना राए जा रहा है। कुछ मुह से भी कहगा।'

पर जीता अपनी जीजी स चिपट कर बस रोए ही गया रोए ही गया राना था कि जस कोई आसमान फट पडा हो।

रात को जा कर जीता ने अपनी जीजी से वह सब कुछ बताया जो काका जी न अपन यार स कहा था।

भाई-बहन एक ही चारपाई पर लट हुए थे। उन दाना क लिए चाची न एक चारपाई अपन परिवार की चारपाइयो स दूर यहा घास पर डलवा दी थी।

जीने ने जो कुछ कहा वह सुन के सोमा काप गई। सामा की उँगलियाँ अपन वीर के बालो म फिरती रही। फिर सोमा ने अपने आपको झमोडा—मैं ही तो उसके लिए माँ हूँ। न वीर मेरे वह सब झूठ बोलता है। जितना यह झूठ है कि तू उसक चाचा का नौकर है उतना ही झूठ यह भी है कि हमारी मा और सामा न अपन वीर को अपनी बाँहो म जकड लिया। वीर के शरीर म दबी दबी सिसकियाँ बहन की सिसकिया क गले मिलन लगी।

मरियल, गुनाह हार हुए आतुर आत्मा के वार ।

जाओ मामा जाओ ! क्या तुम तब जाओगी जब मैं मर जाऊँगा ? यह मुँह कुछ नहीं कहेगा मगर कुछ करेगा । को आवश्यकता नहीं पड़ेगी बस तुम चली जाओ ।'

किसके पास ?

म पड़ोस के पास दूर नहीं मुझे पता है मामा कि वह मुझ बहुत प्यार करता था पर अब तो उसे लगता है कि तुम मेरी बीवी हो भगवान के लिए अब वह तुम्हारी तरफ ध्यान करता है जाओ मैं मर रहा हूँ ।

मामा कुछ न भरी घर से बाहर आ गई है । मन्दिर में बज रहा-कहीं घण्टियाँ और के बोध आ रही है और गा रहे हैं तब मङ्गल के मध्य में ।

× × ×

बहुत ही प्यारी थी वह लड़की जिसका एक गुड्डे ने स्कूल से घर और घर से स्कूल जाना मुश्किल कर दिया था । दस सात बहती आँखें गले में तावीज बाजुओं के डोरे पर काले धागे हर किसी से उसका माँ का सा व्यवहार पर जब भी वह स्कूल जाती चुपचाप उसके पीछे-पीछे चल पड़ता, स्कूल छोड़ आता, स्कूल से ले आता । न टप्पी माहिया न गाना गाया न बुरे इशारे कुछ भी तो नहीं बस चुपचाप उसके पीछे पीछे चलता रहता । वह अपने में मगन घर से स्कूल और स्कूल से घर आ जाती ।

× × ×

अब वह एक पत्र के बारे में सोच रही थी जीवन का प्रथम पत्र जो उस लड़की को मिला था उसके मँगेतर की तरफ से था

तुम्हारे बिना जीवन सूना हो गया है । मैं पढ़ नहीं सकता अगर फेल हो गया तो उसकी जिम्मेदारी तुम पर होगी । क्योंकि पुस्तक के पन्नों पर भी तुम्हारा चेहरा उभर आता है ।

एक बात और भी पूछनी है—चूनी तुम्हारे पीछे क्यों लगा रहता है ? तुम उसे फटकारती क्यों नहीं ? किसी दिन सिर फट जाएगा देख लेना । मैं यह सहन नहीं कर सकता ।

मैं माता जी को तुम्हारे घर भेज रहा हूँ तुम हाँ कहना नहीं तो मैं जहर खा लूँगा—हाँ । चूनी के बारे में जरूर सोचना ।

तुम्हारा

जगत

× × ×

उस लड़की के दोनों भाई ओम और मनोज बाजार में खड़े हैं छोटे मनोज ने चूनी को पीछे से पकड़ रखा है । बड़ा ओम उसको मार रहा है इन दोनों का पक्ष चूनी के आदमी खड़े दांत पीस रहे हैं ।

उस्ताद जी, अगर कहो तो दोनों को ठिकाने लगा दें ।

पर चूनी पर मुक्के ऐसे पड़ रहे थे जैसे रेत की बोरी पर पड़ रहे हों ।

चूनी मार खाता हुआ भी अपने दोस्तों से कह रहा है

'अरे, खबरदार अगर बाबू जी को कुछ कहा तो। यह तो हमारी घर की बात है। इनके ऊपर हाथ उठाने का हमारा हक नहीं है, खुश हो लेने दो बाबू जी को।

उन के पीछे भीड़ में खड़ी हुई लड़की सब कुछ देख रही है, सब कुछ सुन रही है।

मुहल्ले वाले मायना पुलिस के सुपुर्द कर देते हैं।

× × ×

अदालत में मुकदमा चल रहा है वह बयान देकर कटहरे से नीचे उतरती है कि चूनी अपनी जगह पर खड़ा हो जाता है।

जज साहब इसने एक एक शब्द ठीक कहा है शुक्र है भगवान का इसकी आवाज तो सुनाई दी दो वर्ष हो गए हैं इसका पीछा करते-करते पर आज पता चला है कि जैसी यह खुद है वैसी ही इसकी आवाज है। मन्दिर की घण्टियों की तरह वाह! वाह!! अब हवालात तो क्या चाहे जेलखाने में भेज दो चाहे फाँसी लगा दो मेरे लिए सब एक जमा ही है। चूनी को हथकड़ी लग जाती है और वह कुछ महीनों के लिए जेल भेज दिया जाता है।

× × ×

अब वह मेहदी लगाए गोल वाला गुलाबी सूट और लाल चूड़ा पहने माथे पर झूमर लगाए ठुमक ठुमक जगत के साथ बाजार से गुजर रही है

चूनी जेल से वापिस आ गया है। अब वह पहले की तरह उन्मत्त सांड की तरह नहीं फिरता। बल्कि सांप की तरह सीधा मुहल्ले में प्रवेश करता है। गर्दन झुकाए हुए दर्दमन्दों का हमदर्द गरीबों का दोस्त जरूरत के समय दूसरों की जरूरतें पूरी करने वाला चूनी शाह है।

क्योंकि अब वह ठेकेदार है शराब के ठेके का, जुए की बैठक में बैठा हुआ वह उसे गुजरते हुए देख रहा है।

वह जगत के साथ जा रही है। सामने से मौला पहलवान और उसके साथी आ रहे हैं। समीप पहुंच कर मौला उसे कंधे से धक्का देता है। वह चक्कर खाते हुए गिर जाती है। जगत उछल कर मौल को गले में पकड़ लेता है। मौल के साथी लम्बे-लम्बे चाकू निकाल लेते हैं।

'ठहर जाओ रे ओ गुण्डो!' आवाज चूनी के ठेके की ओर से आ रही थी। उसके हाथ में डण्डा है वह तहमद बांध कर सड़क के बीच में आ खड़ा होता है।

दामाद है मुहल्ले का कुछ तो होश करो।

अरे जा रे नामर्द मौल ने चूनी को कहा तुम्हारे देखते-देखते तुम्हारा बड़ाई उसे उड़ाकर ले गया तुम उन सोने की चिड़िया की आवाज ही सुनते रहे। धिक्कार है तुम्हें हम ने तो तुम्हें पहले ही कहा था कि तुम से कुछ नहीं होगा। हमारा रास्ता छोड़ दो।

अभी वह अपनी बात पूरी भी नहीं कर पाया था कि तुरन्त एक लाठी मौल की कलाई पर लगी, दूसरी लाठी मोनी को और तीसरी शफो को लगी। तीनों चौराहे पर घायल कबूतरों की तरह फड़फड़ा रहे थे।

जाइए बाबू जी सोमा को ले जाइए मैं इनसे निपट लूंगा।

पर जगत भी अकड कर खडा हो गया।

जगत आज शाम से चूनी की बातें कर रहा था।

× × ×

सोमा चूनी आदमी बुरा नही है, सच पूछो तो बहुत ही नेक है तुम्हे पता हो है कि जरूरत के समय हर किसी की सहायता करता है पर रहता बहुत उदास है। मुझ से सचमुच उसकी उदासी देखी नहा गयी। मैंने उससे पूछ ही लिया पहलवान जी क्या बात है आजकल आप बहुत उदास रहते हैं ? वह बोला बाबू क्या लोगे तुम मेरी उदासी का हाल पूछकर ? मजा करो, ऐश उडाओ।

पर फिर भी बात क्या है ? मैंने आग्रह किया।

अजी बात क्या है एक आवाज का जादू है जिसने प्यास जगा दी है प्यास बढता ही जा रही है पता नही क्या बनेगा मेरा जगत बाबू तुम मजा करो मैंने तो सब कुछ त्याग दिया है।

उसने अपनी खास निकाली हुई शराब से मेरा पैग भर दिया था सोमा ! जानती हो वह किस आवाज के जादू की बात कर रहा था ? वह तेरी आवाज का दीवाना है सोमा बस आवाज का बस आदमी बुरा नही। तुम्हारे साथ दो बातें कर ले तो उसकी प्यास मिट सकती है और मेरे लिए वह बोतल आ सकती है सोमा।

बकवास बन्द करो सोमा चीख पडी उसका दिल धक धक करने लग गया था। जगत कभी शराब के लिए बेकरार हो अनुनय विनय कर रहा था। जाओ सोमा जाओ तुम्हे कुछ कहने की जरूरत नही पडेगी वह तुम्हे कुछ नही कहेगा, वह सब कुछ समझ जाएगा। जो कुछ तुम्हे दे दे ले आना।

और मैं देहलीज पार कर आई हूं जहा से सुहागिनो की अर्थियां निकलती है—पर मुझे उस पर बहुत गुस्सा है जगत को बिल्कुल कोई शर्म नही रह गयी। वह वही है जो चूनी का मेरा पीछा करने के कारण सदा जान मारने को तयार रहता था। और आज एक बोतल के लिए मुझे उसके पास भेज रहा है। कभी जगत को भी चूनी की तरह मेरी प्यास लगी थी जब मैं उसे मिल गई उसकी प्यास बुझ गई। प्यास मिटने पर मैं उसके लिए एक खाली बोतल बनकर रह गई जिसको जिस ओर दिल ने चाहा फेंक दिया—और मैं गिरती गिरती आज इन बिजली की बत्तियो वाले चौक म आ खडी हुई हूं।

पर जगत थक क्यो गया है ? क्या आख मिचौनी का खेल छू लेने पर समाप्त ही हो जाता है ? क्या प्रतीक्षा प्यास और पीछा करने का नाम ही प्यार है ? जो प्राप्त होने पर मर जाता है, समाप्त हो जाता है, धुआं बनकर उड जाता है—और उसके कानो म एसे ही शब्द गूजते हैं।

मैं मर रहा हूं सोमा तुम चली जाओ।

चूनी के पास ?

हां हां, चूनी के पास वह मेरा दोस्त है, मैं जानता हूं कि वह कभी तुम्हे तग

इस देश में विधवाएँ नहीं हैं एक विधवा और सही जगत, एक विधवा और सही इस सोच विचार में उसकी आँखों में आँसू आ गए।

पर चूनी वह क्या सोच रहा है ? उसने तो मुझे देख लिया है। अगर मैं वातल माँग लूँ तो जगत जीवित रह सकता है पर चूनी ? हो सकता है चूनी ? चूनी मर जाए। उसका विश्वास घायल हो जाए मेरी इस माँग से नहीं नहीं नहीं उसका भ्रम बना ही रहे एक चाह बनी रहे हमेशा हमेशा के लिए।

सोमा शीघ्र ही वापस लौट आई जिस ओर चाँदनी में जगमगाता चौक है और बत्तियाँ मुस्करा रही हैं उस मुस्कराती ही जा रही है।

वेणियाँ

सुखवीर, १९२७

सुखवीर पजाबी और हिन्दी मे समान रूप से लोकप्रिय हैं। मोहनसिंह अमृताप्रीतम और प्रभजोतकौर की तरह वे कवि भी हैं और कहानीकार भी। परन्तु पजाबी मे उन्हे कहानीकार से पहले कवि रूप मे ही स्वीकार किया जाता है।

शहरी जीवन के आर्थिक सघर्षों मे जूझते हुए मध्यम वर्गीय पात्रो का मनोवैज्ञानिक चित्रण सुखवीर की कहानियो की विशेषता है। सौ से अधिक कहानिया लिख चुके हैं।

प्रकाशित सग्रह—डुबदा चढदा सूरज।

स्वदेश छुट्टी होने पर दफ्तर से निकला।

बाहर भागे दौड़े जा रहे अनगिनत लोग, बड़ी बड़ी इमारतें, वगैरह शाम और मैला आसमान जो किसी तने हुए बहुत बड़े तम्बू की तरह लग रहा था।

आज फिर वह शाम बिताने का मसला था।

दफ्तर से निकल कर स्वदेश को कभी घर जाने की जल्दी नही हुई थी। घर का उसे आकर्षण नही था। घर का एक कड़वा स्वाद था जो हमेशा उसके दिल में घुलता रहता।

उसका वैवाहिक जीवन सुख भरा नही था।

काफी अरसे मे उसकी अपनी पत्नी से एकसुरता नही थी। न ही उसकी पत्नी उसके साथ एकसुर होकर रही थी। छोटी छोटी बातो पर लड़ाई झगड़ा हो जाता था। मामूली चीजो पर अनबन हो जाती थी। और फिर दोनो का अलग अलग जलना भुनना कुढना।

इस देश में विधवाएँ नहीं हैं? एक विधवा और सही! जगत? एक विधवा और सही! इस सोच विचार से उसकी आँखों में आँसू आ गए।

पर चूनी! वह क्या सोच रहा है? उसने तो मुझे देख लिया है। अगर मैं बोतल माँग लूँ तो जगत जीवित रह सकता है, पर चूनी? हो सकता है चूनी...? चूनी मर जाए। उसका विश्वास घायल हो जाए मेरी इस माँग से। नहीं, नहीं, नहीं! उसका भ्रम बना ही रहे, एक चाह बनी रहे, हमेशा हमेशा के लिए।

सोमा शीघ्र ही वापस लौट आई, जिस ओर चाँदनी से जगमगाता चौक है और बत्तियाँ मुस्करा रही हैं, बस मुस्कराती ही जा रही हैं।

वेणियाँ

सुखवीर, १९२७

सुखवीर पजाबी और हिन्दी म समान रूप से लोकप्रिय ह। मोहनसिह अमृताप्रीतम और प्रभजोतकौर की तरह व कवि भी ह और कहानीकार भी। परन्तु पजाबी म उन्ह कहानीकार स पहल कवि रूप म ही स्वीकार किया जाता है।

शहरी जीवन क आर्थिक सघर्षो म जूझते हुए मध्यम वर्गीय पात्रा का मनोवैज्ञानिक चित्रण सुखवीर की कहानिया की विशेषता है। सौ से अधिक कहानिया लिख चुके है।

प्रकाशित सग्रह— डुबदा चढदा सूरज।

स्वदेश छुट्टी होन पर दफ्तर स निकला।

बाहर भाग-दौड जा रह अनगिनत लोग बडी बडी इमारत वरग शाम, और मैला आसमान जो किसी तन हुए बहुत बडे तम्बू की तरह लग रहा था।

आज फिर यह शाम बिताने का मसला था।

दफ्तर स निकल कर स्वदेश को कभी घर जान की जल्दी नहा हुई थी। घर का उस आकर्षण नही था। घर का एक कडवा स्वाद था जो हमेशा उसके दिल म घुला रहता।

उसका ववाहिक जीवन सुख भरा नही था।

काफी अरस स उसकी अपनी पत्नी स एकसुरता नही थी। न ही उसकी पत्नी उसके साथ एकसुर होकर रही थी। छोटी छोटी बाता पर लडाइ झगडा हो जाता था। मामूली चीजा पर अनबन हो जाती थी। और फिर दोना का अलग अलग जलना भुनना, कुढना।

स्वदेश ने फिर कहा, 'नही चाहिए। भला किसके लिए लूगा मैं ?"

लडकी को कुछ आशा हुई और उसने कहा, 'किसी के लिए भी सही, एक ले लो। अभी तक एक भी नही बिकी। तुम्हारे हाथ से ही बोहनी होनी है।"

स्वदेश ने एक नजर उन वणियों की ओर देखा। फिर बोझल पलकें उठाकर उस लडकी की ओर देखा—एक भला-सा, मासूम सा चेहरा चमकीली आँखें, गेहुए रंग में किसी लाज की आभा ।

लडकी उसकी ओर देख रही थी। उसने पलकें झुका ली।

"लाओ फिर एक दे दो," स्वदेश ने वणियों की ओर देखते हुए कहा।

लडकी ने एक वणी उसकी ओर बढाई।

स्वदेश ने जेब में से निकाल कर एक चवन्नी उसे दी।

छुट्टे पैसे तो नही हैं। यह पहली ही बिकी है।"

स्वदेश ने जेब में फिर हाथ डाला और पैसे निकाले। एक चवन्नी थी और एक आना।

लडकी देखकर उलझन में पड गई। कही वेणी वापस ही न कर दे।

तभी स्वदेश ने कहा, "लाओ, एक और दे दो। चवन्नी पूरी हो जाएगी।'

लडकी ने खुश होकर एक और वेणी उसे दे दी।

और जब वह जाने लगी तो स्वदेश ने कहा, "जरा ठहरो। मैं दो क्या करूँगा? एक तुम ले लो। अपने बालो में लगा लो। और स्वदेश ने हल्का सा मुस्करा कर वणी उसकी ओर बढाई।

लडकी का चेहरा लाल हो गया। उस पर की सारी मैल जैसे उतर गई और स्वदेश को उसकी आखें बहुत काली लगी और पलकें बहुत लम्बी।

स्वदेश को हैरानी हुई कि यह लडकी जो बचपन और यौवन की दहलीज पर खडी हुई दिख रही थी कैसे देखते देखते उस दहलीज को लाघ गई थी।

तभी स्वदेश सम्भला और उसने हल्का सा हसकर कहा लो रख लो। मैंने तो यू ही कहा था। अगर बालो में नही लगानी तो फिर किसी दिन दे देना। या छुट्टे पैसे मिल जायें तो दुअन्नी वापस कर जाना।

लडकी ने हौले से वणी उसके हाथ से ले ली और फिर आहिस्ता आहिस्ता कदम रखती हुई वहा से चली गई।

स्वदेश ने एक क्षण के लिए उसे जाते हुए देखा और फिर पहले की तरह सामने की इमारत को देखने लगा—उसकी चौथी मंजिल पर नीले पर्दे वाली खिडकी को जिसके सामने खडी एक औरत अपने भूरे रंग के बालो में कघी कर रही थी।

स्वदेश कुछ देर वहां बैठा रहा। फिर उठकर कुछ देर इधर उधर घूमता रहा। उसका दिल नही लग रहा था। आखिर उसने घर का रास्ता लिया।

घर पहुचा तो पत्नी रसोई में थी। वह पतीले में जोर जोर से कलछी घुमा रही थी। सारा घर कर्णवेधी आवाज से भरा हुआ था।

स्वदेश चुपचाप अपने कमरे में गया। कपडे उतारने लगा तो उसे पैन्ट की जेब

स्वदेश को समझ नहीं आता था कि वह क्या करे।

स्वदेश हैरान था कि रेलों पर गाड़ी का चलना कितना मासूम लगता था। पर उसको लगता था कि अगला स्टेशन की मंज़िल थी और दिल में कितना लिखा रहने वाला ज़हर। कितना [illegible] व्यवहार था उसका ! बार-बार पर यह। बार बार पर लिखा रहें। दूसरे पर विश्वास करता था वह जाता हो नहीं थी। और अब वह जागी मुर्दा हुई बार रहा होता था उसके चेहरे की सारी मासूमियत गायब हो जाती। उस समय उसका चेहरा एक [illegible] धूल लगता था [illegible] का बयान [illegible] से भरा होता।

स्वदेश को एक कम्पार्टमेंट में औरत व बच्चों का सामान एक ही रास्ता मिला था कि वह पहिले व अधिक समय घर से बाहर रहे। तो वह सुबह घर से निकल जाता और रात होते घर पर पहुँचता। घर पहुँचने पर ठण्डा भोजन और पानी का [illegible] खाता पीता और चुप रहता। फिर थका हुआ हुआ बिस्तर पर आता और वहाँ बार आधी आधी रात तक नींद में से कोई चुनता रहता।

साहब घर चले हैं तो स्वदेश सोच रहा था आज कोई भी दफ्तर नहीं मिला यह शाम कैसे कटेगी ? इस इमारत में अकेले घूमने पर तो अकेलापन और भी बढ़ जाता था।

वह घबराया हुआ इधर-उधर चलता रहा।

पार्क जाकर वह कोने में एक बेंच पर बैठ गया। उसके हाथ में सुबह की अखबार थी। वह उसके पास पड़ी हुई [illegible] को फिर से पढ़ने लगा।

शाम ठीक नहीं रही थी।

चने चबने वाला एक लड़का उसके पास आया, 'गरमा गरम बाबू जी'

उसका दिल नहीं चाह रहा था फिर भी उसने एक आने के चने ले लिए।

वह एक एक दाना मुँह में डालता हुआ चने चबा रहा था कि बूट पालिश करने वाला एक लड़का उसके पास आया, "बूट पालिश"

स्वदेश ने इनकार में सिर हिलाया।

पर उस लड़के ने फिर कहा। स्वदेश के दूसरी बार सिर हिलाने पर फिर कहा।

आखिर स्वदेश ने सामने की इमारत की ओर देखते हुए लड़के की ओर अपने बूट बढ़ा दिए।

पालिश हो चुकी तो स्वदेश ने बूटों की ओर देखा नहीं। उसी तरह सामने इमारत की ओर देखते हुए उसने जेब में से एक आना निकाल कर लड़के को दिया और वह चला गया।

फिर कुछ देर के बाद उसके कानों में एक और आवाज आई, "दो-दो आने बेरी लोगे बाबू जी ?"

स्वदेश तंग पड़ गया और उसने सिर हिलाकर कहा, "नहीं।"

पर वह आवाज उसके पास से हटी नहीं।

आखिर स्वदेश ने मुँह फेर कर देखा। एक लड़की हाथ में आठ-दस बरियाँ लिए खड़ी थी और उसे एक तरस भरे लहजे में बेरी खरीदने के लिए कह रही थी।

स्वदेश न फिर कहा, "नही चाहिए । भला किसके लिए लूगा मैं ?"

लडकी को कुछ आशा हुई और उसने कहा, "किसी के लिए भी सही, एक ले ना । अभी तक एक भी नही बिकी । तुम्हारे हाथ म ही बोहनी होनी है।"

स्वदेश ने एक नजर उन वेणियो की ओर देखा । फिर बोझल पलकें उठाकर उस लडकी की ओर देखा—एक मला-सा मासूम सा चेहरा चमकीली आँखें गहुए रग म किसी लाज की आभा ।

लडकी उसकी ओर देख रही थी । उसने पलकें झुका ली ।

लाओ फिर एक दे दो स्वदेश न वेणियो की ओर देखते हुए कहा ।

लडकी न एक वेणी उसकी ओर बढाई ।

स्वदेश न जेब मे स निकाल कर एक चवन्नी उसे दी ।

'छुट्टे पैस तो नही हैं । यह पहली ही बिकी है ।"

स्वदेश ने जेब म फिर हाथ डाला और पसे निकाले । एक चवन्नी थी और एक आना ।

लडकी देखकर उलझन म पड गई । कही वेणी वापस ही न कर दे ।

तभी स्वदेश न कहा, "लाओ, एक और दे दो । चवन्नी पूरी हो जाएगी ।'

लडकी ने खुश होकर एक और वेणी उस द दी ।

और जब वह जाने लगी तो स्वदेश न कहा, "अरा ठहरो । मैं दो क्या करूँगा ? एक तुम ल लो । अपने बालो मे लगा लो ।" और स्वदेश ने हल्का सा मुस्करा कर वेणी उसकी ओर बढाई ।

लडकी का चेहरा लाल हो गया । उस पर की सारी मल जस उतर गई और स्वदेश को उसकी आखें बहुत काली लगी और पलकें बहुत लम्बी ।

स्वदेश को हैरानी हुई कि यह लडकी जो बचपन और यौवन की दहलीज पर खडी हुई खिल रही थी कैसे देखत देखते उस दहलीज को लाघ गई थी ।

तभी स्वदेश सम्भला और उसन हल्का सा हँसकर कहा "लो रख लो । मैंने तो यू ही कहा था । अगर बालो म नही लगानी तो फिर किसी दिन दे देना । या छुट्टे पसे मिल जायें तो दुअन्नी वापस कर जाना ।

लडकी न हौले से वेणी उसके हाथ म से ली और फिर आहिस्ता आहिस्ता कदम रखती हुई वहाँ से चली गई ।

स्वदेश न एक क्षण के लिए उस जाते हुए देखा और फिर पहले की तरह सामने की इमारत को देखन लगा—उसकी चौथी मजिल पर नीले पर्दे वाली खिडकी को जिसके सामने खडी एक औरत अपने भूरे रग के बालो म कघी कर रही थी ।

स्वदेश कुछ देर वहाँ बैठा रहा । फिर उठकर कुछ देर इधर उधर घूमता रहा । उसका दिल नही लग रहा था । आखिर उसन घर का रास्ता लिया ।

घर पहुचा तो पत्नी रसोई म थी । वह पतीले म जोर-जोर से कलछी घुमा रही थी । सारा घर कणकधी आवाज मे भरा हुआ था ।

स्वदेश चुपचाप अपने कमरे म गया । कपड उतारने लगा तो उसे पेण्ट की जेब

लनी नहीं भूला था। अब तो उसकी यह जस एक आदत ही बन गई थी।

बस नो वेणियाँ बचने वाली और भी लडकियाँ वहाँ हाती पर स्वदेश हमेशा उसी लडकी से वेणी खरीदता जिसन उसे पहले दिन दी। हर बार एक जगह स खरीदने पर चीज अच्छी मिलती है। तभी तो वह लडकी स्वदेश को हर बार मन स बढ़िया वेणी दिया करती थी—चमली की सफेद मोतिया जसी कलियों की वेणी, जो रात ही रात म खिलकर सुबह फूल बन जाती थी।

स्वदेश को लगता था कि वेणियाँ बचने वाली लडकी भी खिलकर फूल बन गई थी। यौवन की दहलीज पर खडा बचपन कब देखत देखत दहलीज लाघ जाता है, पता ही नहीं लगता।

स्वदेश इस लडकी को देखता था तो उसक दिल म एक अजीब सी करुणा जागती थी। इन लोगों की किस्मत ! यह इसी तरह वेणियाँ बेचते-बेचते बूढी हो जाएगी, शादी हो जायेगी (शायद हो ही चुकी हो) बच्चे हो जाएँगे बूढी हो जाएगी।

एक दिन स्वदेश चौक म बैठा सामने की इमारत को देख रहा था कि वेणियाँ बेचने वाली लडकी आई। स्वदेश ने रोज की तरह जब म स दुअन्नी निकालकर उसकी ओर बढाई और उसके हाथ स वेणी ले ली। पसे लेकर लडकी एक क्षण वहा रुकी रही। स्वदेश ने देखा, उसक चहरे पर एक सकोच था। वह जसे कुछ कहना चाह रही थी।

स्वदेश न उसकी झिझक दूर करन के लिए पूछा, 'कितनी बिक गई अब तक '

लडकी न कहा "चार बिक गई है। अभी ही आई हूँ। आजकल तो बहुत जल्दी सभी बिक जाती है।

अच्छा।

तुम्हारे हाथ मे बोहनी होने पर देखते देखते सभी बिक जाती है।

"फिर तो सबसे पहले मेरे पास ही बेचा करो, स्वदेश ने हल्का हस कर कहा।

तुम तो कभी कभी बहुत देर स आते हो, लडकी के लहजे म एक हल्की सी शिकायत थी।

स्वदेश आगे स चुप रहा। फिर उसने पूछा, "तुम कहाँ रहती हो ?

लडकी ने अपने रहने का ठिकाना बताया और कहा, "वहाँ हमारी छोटी-सी झोपडी है। अपनी दादी के साथ रहती हू। उसे आँखो से दिखता नहीं। पर वह वेणियाँ बहुत सुन्दर गूथ लेती है। हमारी झोपडी के सामने दो चमेली के पौधे हैं।"

'दो ही ?' स्वदेश ने कहा। 'उनसे इतनी वेणियों के लिए फूल उतर आते है '

"नहीं" लडकी ने कहा 'फूल तो हम बहुत करके बाजार से लेते हैं। हमारे पौधो से तो मुश्किल स एक या दो वेणियों के ही फूल उतरते हैं। जो वेणी मैं तुमको देती हूँ वह हमारे पौधो की कलियों की ही होती है।

स्वदेश न तारीफी लहजे म कहा 'अच्छा ! खूब मोटी कलियाँ होती है उनकी।'

लडकी का चेहरा खिल उठा।

'वह मैं अपने हाथ स ही गूँथती हूँ लडकी ने हल्की-सी लाज स कहा।

"अच्छा" स्वदेश के मुह से सिफ इतना ही निकला।

लडकी के चेहरे पर फिर पहले जसा सकोच था। वह एक क्षण चुप रही। फिर पूछा, 'तुम रोज वेणी खरीदते हो, इसका क्या करते हो?"

स्वदेश मुस्कराया। वह कुछ कहने को हुआ पर फिर चुप हो गया।

लडकी फिर कुछ न बोली। उसके चेहरे पर एक लालिमा दौड गई। स्वदेश हल्का सा मुस्कराता हुआ चुप रहा। आखिर लडकी ने कहा, अच्छा, मैं जाती हू।'

स्वदेश ने कहा "अच्छा।

लडकी एक क्षण और वहा खडी रही और फिर धीमे धीमे कदम उठाती वहाँ से चली गई।

स्वदेश समुद्र के थिरकते हुए प्रसार को देखने लगा जिस पर सूय की किरणो से बनी लम्बी सुनहरी सडक को एक छोटी सी कश्ती पार कर के आगे निकल गई। कश्ती दूर चली गई तो उसका पाल एक छोटा-सा सफेद बिन्दु दीखने लगा। फिर वह बिन्दु जामुनी रग के आसमान के सामने गायब हो गया।

अब स्वदेश की अधिकतर शामें घर म ही बीतने लगी थी। दोस्त शिकायत भी करते थे कि अब वह बहुत कम मिलता था, पर खुश भी थे कि उस का घरेलू जीवन सुखद बन गया था। अब वह फिर दोस्तो को घर बुलाता पत्नी के साथ उनके घर जाता। कभी वह दोस्तो को दाशनिक अदाज म कहता, 'विवाहित जीवन एक गाडी है जिसके पहियो को ठीक रास्ते पर चलना चाहिए। बस रास्ता छोडा नही कि गाडी हिचकोले खाने लगती है। बस गाडी का ठीक रास्ते पर चलना ज्यादातर औरत के बस मे है।

एक दिन स्वदेश ने पत्नी के साथ सिनमा देखने का प्रोग्राम बनाया। उसकी पत्नी शाम को उसके दफ्तर म पहुच गई। वहाँ से व सिनमा देखने चल पडे। सिनेमा देखकर आए तो अधेरा हो चुका था। पत्नी ने कहा, 'एक चक्कर समुद्र का न लगा आए। बहुत देर के बाद आई हूँ इधर।'

स्वदेश उसके साथ समुद्र की ओर चल पडा।

समुद्र पर घूमते हुए सामने वेणियो वाली लडकी दिखी। वह उनकी तरफ ही आ रही थी। उसके हाथ म एक ही वेणी थी। कलियो की बजाए वह फूलो की बनी हुई थी। साधारण सी वेणी थी वह।

उसके पास आने पर स्वदेश ने पत्नी स कहा, 'लो आज वेणी लेना तो भूल ही गया था। एक ही रह गई है। जसे हमारे लिए ही बची हो। मैं हमेशा इसी स लिया करता हूँ। मेरे लिए खास तौर पर मोटी मोटी कलियो की बना कर लाती हैं।

पत्नी ने तीखी नजर से उस लडकी की तरफ देखा। लडकी उसके सामने आँखें न उठा सकी।

स्वदेश ने वेणी लेने के लिए लडकी की ओर हाथ बढाया। पर लडकी ने हाथ म की वेणी देने की बजाए अपनी साडी के आँचल की गाँठ खोली और उसम से एक वेणी निकाली—मोटी मोटी कलियो की बहुत बढिया वेणी जसी रोज स्वदेश लेकर

जाया करता था।

स्वदेश का चेहरा खिल उठा। पर पत्ता अभी भी सीधा नज़र न [illegible] रही थी।

अचानक स्वदेश का उसकी ओर ध्यान गया। अरे, इसे क्या हो गया है? फिर उसने लड़की की ओर देखा। एक खिला हुआ फूल अब [illegible] हो गया था। एक उदास फीका चेहरा।

स्वदेश ने उसके हाथ से कंघी ले ली और जेब में से दुअन्नी निकालकर उसकी ओर बढ़ाई। पर लड़की ने दुअन्नी नहीं ली और उदास आवाज़ में धीमे से कहा, 'पिछली बार की दुअन्नी देनी रहती है। हिसाब पूरा हो गया।' और उसी समय वह वहाँ से एक तरफ़ को चल पड़ी। उसकी चाल बहुत थकी हुई लग रही थी। स्वदेश उसे कुछ देर एकटक देखता रहा।

पत्नी ने वहीं खड़े-खड़े ही जूड़े पर कंघी बाँधकर स्वदेश को दिखाते हुए कहा, 'देखो तो, ठीक बँधी है?'

'बिल्कुल। आज के जूड़े पर तो बहुत सुन्दर लग रही है।'

'सुन्दर चीज़ हर जगह सुन्दर लगती है,' पत्नी ने ज़रा चंचलता से कहा।

पर स्वदेश के होठों पर मुस्कराहट न आई।

और जब वे वहाँ से घर जाने के लिए चले तो स्वदेश को अपनी चाल में एक अजीब-सी थकावट महसूस हुई। उसका दिल चाहा कि वहीं किसी बेंच पर बैठ जाए। पर वह बैठा नहीं। बोझल कदम उठाता हुआ चलता रहा, चलता रहा।

आँधी और मगरमच्छ

अमरसिंह, १९२८

अपने पहले कहानी संग्रह 'कवरपुट्ट' के प्रकाशन से अमरसिंह को पंजाबी में बहुत ख्याति मिली। आज पंजाबी में उनके इस संग्रह का नाम उनके नाम के साथ जुड़ कर नाम का एक अंग बन गया है।

अमरसिंह प्रगतिशील दृष्टिकोण के लेखक हैं। 'कवर पुट्ट', 'तलाश', 'फसाद दी जड़', 'दादे' आदि कहानियाँ पंजाबी में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर चुकी हैं।

अमरसिंह के दो कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं—'कवरपुट्ट' और 'सिप्प ते सागर'।

वह प्लेटफार्म पर खड़ा था। गाडी खाली हो चुकी थी। प्लेटफार्म पिछली ओर से एस खाली हुए जा रहा था जस आँधी का भोंका घास फूस धूल को धकेले जा रहा हो। लोग अपना अपना असबाब सँभाले विक्टोरिया टर्मिनस की गुम्बद वाली ऊँची छत के विशाल दालान में ऐसे विलीन होने जा रहे थे जैसे वी०टी० एक विशालकाय दैत्य जैसा मगरमच्छ का मुख हो जो सब कुछ निगलता जा रहा हो।

उसने पीछे मुड़कर देखा। लम्बे प्लेटफार्म गाडरों के स्तम्भों से जकड़े हुए खड़े थे। स्तम्भों पर अलुमिनियम का पालिश इंजन के धुएँ से मैले दांतों की तरह मटमैला हुआ पड़ा था। सिर पर ऐसे ही गाडरों की कैंचियों पर जस्ती चादरों की छत थी। उसे ऐसे अनुभव हुआ कि वह एक दैत्याकार मगरमच्छ के लम्बोतर मुख के भीतर उसके दोनों जबड़ों के बीच घिरा हुआ खड़ा है।

मगरमच्छ भूखा है। वह जोर-जोर से साँस खींच रहा है। पिछली ओर से आँधी

का परिणाम उस मगरमच्छ की ओर धकेल जा रहा है। मगरमच्छ के पेट में नरक की आग धधक रही है जिसमें उसका शरीर पिघल जाएगा जल जाएगा। उसकी हड्डियाँ तक पिघल जाएंगी और वह ... और वह ...

उस क्षण पेट में जलती हुई आग का अनुभव हुआ। उसका जी चाहा भाग कर मगरमच्छ के जबड़ों में बाहर निकल जाए पर बाहर निकलना सम्भव था। उसकी टाँगें काँपने लगीं। वह पास के एक बैंच पर बैठ गया। तलवे में भभक रही आग की गर्मी उसकी बुरी तरह भूनती रही थी।

ऐसा ही अनुभव उस आज से सत्रह दिन पहले भी हुआ था। उसने मगरमच्छ के दाँतों से भरा जबड़ा में भाग जाने की चेष्टा की थी और भाग कर बाहर भी निकल गया था पर मगरमच्छ की साँस के खिंचाव पर पिछली ओर से आग वाली आँधी के आने ने उसे धकेल कर पुनः मगरमच्छ के जबड़ों में मुख में ला फेंका था।

उसे चक्कर आ गया। उसने दोनों हाथों से अपना सिर थाम लिया।

"क्या है। लेना है तो लो नहीं तो खाली पीली धूम नहीं मारो।" उसने सिर उठा कर देखा। एक राजस्थानी ग्रामीण रेहड़ी वाले से अपने बच्चे को केला खरीद कर दे रहा था। रेहड़ी वाला जो केला दे रहा था वह ग्राहक को पसन्द नहीं था। ग्राहक दूसरा केला लेना चाहता था और रेहड़ी वाला खीझ गया था।

"यह कैसा दुकानदार है ... ।"

उसे रेहड़ी वाले पर क्रोध भी आया और दया भी।

ग्राहक के साथ ऐसे पेश आया जाता है। यह तो सेल्समैनशिप के विरुद्ध है।

सेल्समैनशिप एक कला है जो वर्षों के परिश्रम के बाद आती है। उसने स्वयं यह हुनर वर्षों के श्रम, अध्ययन और अनथक अमली काम के बाद सीखा था। उसकी अपनी कम्पनी में दर्जनों सेल्समैन थे पर मालिकों की नजर में वह सबसे बढ़िया था।

यहाँ तक ही बस नहीं। वह उत्तरी भारत में अपनी लाइन का सबसे अधिक माहिर सेल्समैन गिना जाता था। गत कई बरसों में कम्पनी ने कई नए सेल्समैनों को उसके मातहत प्रशिक्षण में दिया था और कुछ दिन उससे शिक्षा प्राप्त करने के बाद वह उच्च दर्जे के सेल्समैन बन गए थे।

क्या शान थी उस जमाने में। जिस दुकान पर वह एक बार भी चला जाता आर्डर लिए बिना वापस न लौटता। जब कभी कम्पनी यह महसूस करती कि उसके किसी एजेण्ट को किसी खास पार्टी से आशा से कम रकम का आर्डर मिला है तो झट उसे उस पार्टी की ओर भेजा जाता और वह यदि आर्डर तिगुना नहीं तो दुगुना तो अवश्य करवा लाता। उसकी सफलता का राज यह था कि वह हर ग्राहक से बहुत-ही मधुरता और विनम्रता से पेश आता था।

उसने आठ-नौ वर्ष उस कम्पनी में काम किया था। दिन प्रतिदिन उसके काम में वृद्धि ही होती गई थी और साथ ही साथ उसकी आमदनी में भी। उन दिनों जीवन खूब मजे से चलता था। सिर पर कोई खास बोझ न था। एक बूढ़ी माँ थी। आधा वेतन वह अपनी माँ को देता था ताकि उसके विवाह के लिए काफी पूँजी जमा कर

ले।

उसके बड़े भाई ने भी इसी तरह किया था। माँ ने उसका विवाह उसके जमा किये हुए रुपयों से कर दिया था और वह दोनों मियाँ बीवी अपने दोनों बच्चों के साथ आनन्दपूर्वक जीवन व्यतीत कर रहे थे।

भारत विभाजन के समय, उसकी कम्पनी फसादों का शिकार हो गई। उसका अपना घर-बार और सब कुछ पहले ही उधर रह गया था। अब भारत में आकर कम्पनी के फेल हो जाने के कारण नौकरी भी हाथ से चली गई। जरा शान्ति हुई, तो उसने अपनी ही लाइन में काम करने वाली तीन चार पार्टियों के पास नौकरियां कीं, पर वह सब की सब एक के बाद दूसरी बन्द होती गई।

देश का आर्थिक ढांचा दिन प्रतिदिन बिगड़ता जा रहा था। उसका भाई भी बुरी तरह मन्दे का शिकार था। गत तीन चार वर्षों से तो यह अवस्था थी कि कभी वह स्वयं बेकार और कभी उसका भाई और कभी दोनों ही बेकार। इस दशा में भतीजे-भतीजियों की हालत देख कर उसके दिल पर छुरियां चलने लगतीं। वह सोचता—यदि उसे एक बार भी कोई मजबूत पार्टी मिल जाए तो वह कुछ दिनों में ही अपनी योग्यता के जौहर दिखा कर अपनी पहले जैसी स्थिति नए सिरे से प्राप्त कर सकता था पर न जाने क्या हो गया था। सबकी हालत डावांडोल ही नजर आती थी। कोई भी पार्टी मजबूती से खड़ी हुई दिखाई नहीं देती थी।

पेपर न्यूज पेपर, आज का ताजा अखबार।

उसने सिर उठा कर देखा। अखबार वाला अखबार बेच रहा था। उसका जी चाहा कि आवाज़ दे कर अखबार खरीद ले। उसका हाथ अपनी जेब में गया और आवाज़ उसके कण्ठ में ही घुट कर मर गई।

अखबार अखबार कितने काम की चीज़ है। मुझे अखबार हर रोज़ देखना चाहिए। कम-से-कम रिक्त स्थान का कालम। दिल्ली में अपनी बेकारी के दौरान अखबार हर रोज़ देख लिया करता था। इसी के द्वारा तो मुझे कलकत्ता की नौकरी मिली थी

एक दिन म्यूनिसिपल रीडिंग रूम में समाचार पत्र देखते-देखते उसे कलकत्ता की एक फर्म का विज्ञापन नजर आया था। वह फर्म उसी लाइन में काम करती थी जिसका वह माहिर था। उन्हें एक सेल्समैन की आवश्यकता थी। उसने सोचा—यदि इस फर्म में नौकरी मिल जाए तो मैं फिर एक बार अपनी योग्यता के करिश्मे दिखा कर अपनी आर्थिक दशा ठीक कर लूँ। सो वहां झट एक अरजी भेज दी और साथ ही अपना रिकार्ड और सर्टिफिकेट भी। उसकी खुशी की कोई हद न रही जब कम्पनी ने उसे इण्टरव्यू के लिए बुला लिया और साथ ही सफर खर्च के लिए एक चैक भी भेज दिया।

कलकत्ता पहुंचने पर कम्पनी ने उसे मध्यभारत मध्यप्रदेश और बम्बई राज्य के लिए सेल्समैन नियुक्त कर दिया पर साथ ही उन्होंने गारण्टी मांगी कि वह कम-से-कम कितना बिजनेस प्राप्त करके उन्हें दे सकेगा।

इस लाइन पर उसने पहले भी कई टूर लगाए थे और एक टूर में दस-दस लाख का बिज़नेस प्राप्त किया था। सो उसने बड़े गर्व से आश्वासन दिया कि वह कम-से-कम एक लाख का बिज़नेस तो उन्हें अवश्य देगा और कम्पनी ने परीक्षा के तौर पर उसे टूर पर भेज दिया।

पास से ही किसी गधे ने हाँक लगाई। उसने चौंक कर देखा यह गधे की नहीं नए अमेरिकन इंजन की आवाज़ थी। इंजन खाली गाड़ी को शेड में ले जा रहा था।

गाड़ी गुज़र गई और सामने प्लेटफ़ार्म का दृश्य उसकी आँखों के सामने खोलती गई। सामने प्लेटफ़ार्म पर ह्वाइटवेज़ लाकी बुल एण्ड कम्पनी नानू भाई गटकाटिया के बड़े-बड़े शो-बाक्स बड़े-बड़े चमकदार शीशों के भीतर से नाना प्रकार के रंग-बिरंगे कपड़ों का प्रदर्शन कर रहे थे। प्लास्टर की सुन्दर परी-चेहरा पूरे कद की रंगीन मूर्तियाँ विभिन्न रंगों की रेशमी और ज़रीदार साड़ियों में लिपटी और जड़ाऊ गहनों से सुसज्जित हर दर्शक को आकर्षित करके उसके दिल में बरबस शौक जगा रही थीं। किसका जी न चाहेगा ऐसे सुन्दर कपड़े पहनने को ऐसे गहने पहनने को। स्वयं उसे एक स्टैण्ड पर फैले हुए कश्मीरे का टुकड़ा बेहद पसन्द आया था। इस डिज़ाइन का सूट उसके शरीर पर कितना जंचेगा।

किसी शंट करते इंजन की तेज़ हैड लाइट शो-बाक्स के शीशे पर पड़ी और वहाँ से पलट कर उसकी आँखों में चकाचौंध पैदा कर गई। उसकी आँखें शो-बाक्स की ओर देखने की ताब न ला सकीं और अपने आप झट दूसरी ओर देखने लगीं।

शो-बाक्स के इर्द-गिर्द अधनंगे कोंकनी मज़दूर, मैली कुचैली एवं धोतियों से अपनी नग्नता ढाँकने का असफल यत्न करती हुई घाटिनें और महाराष्ट्रिनें, गुजराती और राजस्थानी ग्रामीण और किसान इन बाक्सों से निराश हो बेपरवाह नज़रों से ऊँघते हुए पसेंजर गाड़ी की प्रतीक्षा कर रहे थे। किसी की भटकी हुई दृष्टि अचानक ही कभी-कभी शो-बाक्स पर पड़ती किन्तु दूसरे ही क्षण चौंधिया कर वापस लौट आती। शो-बाक्सों का आकर्षण किसी प्रकार भी किसी की बेपरवाही और आत्मसंयम से दबने वाला नहीं था। बार-बार वह नज़रों को अपनी ओर आकर्षित करते थे और उनमें रखी हुई हर चीज़ एक मूक स्वर में विनती कर रही थी—

मुझे ले लो।

मुझे ले लो!— यह शो-बाक्स भी एक दूसरे ढंग से सेल्समैनशिप की कला का ही प्रदर्शन है—कितना सुन्दर और मनमोहक। पर यह आसपास बैठे लोग ऐसे कपड़े क्यों नहीं पहनते? उनके बदन पर ये फटे हुए कपड़े क्या हैं? क्या उन्हें फटे-पुराने मैले-कुचैले कपड़ों के साथ बाद में प्यार है? हैं, यह कैसा प्रश्न मेरे मन में उत्पन्न हो गया है? यह मेरे कपड़े जो पहन रखे हैं क्या मुझे इन से प्यार है?

वह वह वह।

उसने दाईं ओर सिर घुमा कर देखा। खम्भे के साथ में टेक लगाए एक महा

राष्ट्रिन बच्चे को दूध पिला रही थी। मा की छाती मुंह मे छूट जाने से बच्चा चिल्ला उठा था। मां ने छाती पुन बच्चे के मुंह म द दी। बच्चा चुप हो गया।

उसकी दृष्टि औरत के सिर के ऊपर स्तम्भ से लगे ब्राडवरी मिल के रंगीन पोस्टर ने आकृष्ट की और नीचे किसी राजस्थानी राजकुमारी की पालकी जा रही थी। राजकुमारी के पीछे कई बांदियां भिन्न भिन्न रंग की शोख और सुंदर पोशाकें पहन चली जा रही थीं।

बच्चा एकदम पुन चिल्ला उठा। उसकी दृष्टि पुन उस मराठी औरत की ओर चली गई। औरत की मद्धम हरे रंग की साडी पर मद्धम लाल और कासनी रंग के पबद लगे हुए थे। कुम्हलाए हुए से लाल टापट के कुर्ते की एक बांह नीली मारकीन की थी और दूसरी फूलदार लिनन की दोनों बगलों में धागीगर गुमटी के भिन्न-भिन्न रंगों के टुकड़े छिपे हुए थे। न जाने यह कुर्ती कितने कर्नों के स्वर्गवास हो जाने के बाद उनकी हड्डियों से तयार की गई होगी। ए मलायसी आफ कनर तो यह औरत भी तो एक जीती जागती विज्ञापन थी।

विज्ञापन यह भी सेल्समनशिप का ही एक तरीका है। बिजनेस की कला ने कितनी उन्नति कर ली है। यह कला कितनी जटिल और विविध हो गई है। इसकी कितनी ही शाखाएँ निकल आई हैं। हरेक शाखा अलग एक हुनर के रूप में कितनी विस्तार और उन्नत हो चुकी है कि हरेक शाखा के अपने अपने खास माहिर और विशेषज्ञ पैदा हो गए हैं।

विज्ञापन ग्राहक की नजर को अपील करने का हुनर है। इसके अपने खास माहिर हैं। मेरी अपनी अलग शाखा है कनवसिंग ग्राहक को आवाज से, बातों में अपील करने का हुनर। मैं अपने इस हुनर का माहिर हूं।

माहिर । क्या मैं सचमुच माहिर हूं ? हां। तो फिर मेरी नौकरी क्यों छूट गई ? मैंने बम्बई तक पहुंचते पहुंचते एक लाख का बिजनेस देने का वायदा किया था। किन्तु सारा नाइट क टूर और तीन सप्ताह बम्बई में लगाने और एक एक दुकान के कई-कई चक्कर काटने के बाद भी कुल सत्रह हजार का बिजनेस नहीं मिला था। इसलिए कम्पनी ने अपनी शर्त के अनुसार बम्बई से ही मुझे जवाब दे दिया था। सत्रह हजार के कमीशन में तो सफर का खर्च भी नहीं निकल सकता था। फिर मैं माहिर किस तरह का हुआ ?

नहीं नहीं मैं माहिर हूँ। मैंने इसी बम्बई से एक एक टूर में दस-दस लाख का बिजनेस किया है इस बार यदि बिजनेस नहीं मिला तो इसमें मेरा क्या दोष ? आजकल मार्केट ही नहीं रही। यह मेरी ही राय तो नहीं। यहाँ बम्बई में ही मुझे कई परिचित सेल्समन मिले हैं। उन सब की यही राय थी। उनकी दशा भी खराब थी। उनमें से कई तो मेरी ही तरह बेकार थे। वे सब यही कहते थे आजकल मार्केट नहीं रहा। तो क्या इसका अर्थ यह है कि मार्केट बिना एक सेल्समन एक माहिर बिलकुल शून्य होकर रह जाता है ? क्या मार्केट ही उसकी महारत का मापदण्ड है ? हाँ। तो फिर कम्पनी इस बात को क्यों नहीं समझती। उसने मुझे ही क्या निकम्मा समझा ? उसने

मार्केट का ख्याल क्यों न किया ? ठीक है मैंने भी तो आज तक नहीं किया था, किन्तु यह मार्केट को हो क्या गया है ?

मार्केट मार्केट । यह मार्केट है क्या चीज ? यह इतने से लोग हैं लाखों हां करोड़ों ही । बम्बई क्या हिंदुस्तान भरा हुआ है इन से । क्या इनको इन सब चीजों की जरूरत नहीं ? इनको तेल साबुन बर्तन क्राकरी, मुनियारी फर्नीचर और दूसरी नित्य उपयोग की वस्तुओं की जरूरत नहीं ? इन सामने बैठे लोगों को कपड़े नहीं चाहिए ? इस औरत को नई साड़ी की इच्छा नहीं ? इसके नंगे धड़ंग बच्चे को फ्राक नहीं चाहिए ? क्या ये लोग मार्केट नहीं ?

मालूम होता है कि मार्केट कोई सूक्ष्म वस्तु है किसी हवाई चीज का नाम है। यह अजीब ख्याल आज मेरे मन में उत्पन्न हुआ है। मैं तो आज तक लोगों को ही मार्केट समझता रहा हूँ। किसी जगह की आबादी के अनुसार दुकानों और दुकानदारों की गिनती से मार्केट का अनुमान लगाता रहा हूँ। किन्तु आज मालूम हुआ ये लोग मार्केट नहीं। लोगों को जरूरत है किन्तु मार्केट नहीं तो मार्केट ?

खूब खूब । तो यह मार्केट दीवार है लोगों और व्यापारियों के मध्य। एक अदृश्य दीवार । जैसे वह सामने की शोकेस का शीशा । बाहर बैठे लोगों और भीतर दीखते भाँति भाँति के कपड़ों के मध्य । एक काँच की दीवार । कितनी कमजोर है यह बस एक मुक्के की मार । ये इतने लोग बैठे हैं। हाँ क्या कोई उठ कर तोड़ नहीं देता ? मैं ही क्यों न तोड़ दूँ ? आह ! मेरी टाँगें क्या काँप रही हैं ?

यह शीशा तोड़ना जुर्म है।

—सींग सींग दाना गरम करारा सींग दाना ।

भुनी हुई मूंगफली की सुगन्ध और धधकती हुई लकड़ी की उष्ण सोंधी बू उसकी नासिका में प्रविष्ट हुई। उसके पेट में एक भूकंप सा बिलबिला उठा। बाद भर एक खोमचे वाला चला आ रहा था। खोमचे में मूंगफली के भुने और छिले हुए सफेद नम सींग दानों के पहाड़ी जैसे ढेर की चोटी पर मिट्टी के कूजे में आग ज्वालामुखी के दहाने की भाँति धधक रही थी। ज्वालामुखी में आग कम थी और धुआँ अधिक। उसका जी चाहा दोनों हाथों से अंजलि भर सींग दाने उठा ले और खाने लगे।

यह क्या ? यह मेरे हाथ क्या शिथिल हो गए ? यह सींग दाने और मेरे हाथों के बीच दीवार सी क्या बन गई है ? यह तो दिखाई भी नहीं देती। शो-केस का शीशा तोड़ने से पहले मैं इसे क्यों न तोड़ दूँ ? शो-केस का शीशा तोड़ते हुए हाथ भी जख्मी हो सकता है किन्तु यहाँ पर हाथ को भी चोट लगने की आशंका नहीं।

हैं हैं यह मेरे हाथ किसने जकड़ लिए हैं ? आह । मेरे पेट में लात किसने मारी है ? मेरी पीठ पर मुक्के कहाँ से बरस रहे हैं ? मेरे सिर पर घूँसे कौन मार रहा है ? आह ! मेरा जबड़ा ।

ये लोग मुझे क्यों पकड़े लिए जा रहे हैं ? यह कामरी क्या है ? ये सिपाही—।

यह अपराध है। सींग दाना खाना अपराध है। यह दीवार दिखाई नहीं देती किन्तु है यह बहुत मजबूत। मैं शीशा तो तोड़ नहीं सकता। कोई शीशा इस तोड़

नहीं सकता। यह अपराध है।

अपराध और अपराधी मैं अपराधी बनना नहीं चाहता। मैं ईमानदार आदमी हूँ। मैं एक भद्र नागरिक हूँ। मैं पुरुषों जैसा काम करता हूँ। तमूर लाला मुझे नाजायज शराब बेचने का काम देता था। शम्भू ने मुझे अफीम और चरस बाहर से लाने का काम पेश किया था। सुलताना, किशोरी, जानकी और आई०वी० ने मुझे कोठीवाने की दलाली का काम देना चाहा था। वह सभी मेरी सहायता करने के लिए तयार थे। मैं आसानी से थोड़ा सा खतरा मोल लेकर सकड़ों रुपये महीने की आमदनी कर सकता था, किन्तु मैं एक भद्र व्यक्ति हूँ एक ईमानदार नागरिक हूँ। मैं जरायम पेशा बनाना नहीं चाहता।

हा हा हा हा ।

दो टिकट चकर ऊँचे-ऊँचे हँसते हुए पास में गुजर रहे थे। उनके साथ एक पुलिस का सिपाही भी था। वह सभल कर बच पर बैठ गया। पुलिस के सिपाही ने सन्देह पूर्ण दृष्टि से उसकी ओर देखा, अपने साथियों के साथ कोई बात की और फिर वह तीनों उसकी ओर देखने लगे। उसके दिल में से एक तेजाबी कटुता उभर कर उसके होठों पर आ गई। उन तीनों ने क्षण भर कोई बात की और सन्देहपूर्ण दृष्टियों से उसे देखते हुए आगे बढ़ गए।

इनको सन्देह है कि मेरे पास टिकट नहीं।

हूँ ।

उसने ऐसे महसूस किया जैसे उनकी नजर उसका अपमान कर रही हो। उसका हाथ अपनी जेब में गया। उसका जी चाहा कि टिकट निकाल कर उन पर दे मारे। अपमान के जवाब में अपमान ही उनके मुह पर खींच मारे। उसने उनकी ओर घूर कर देखा धीरे धीरे दूर जाती एक नीली और दो सफेद वर्दियों के पीछे उसको मगर-मच्छ का मुख अपने पूरे फैलाव के साथ खुला हुआ नजर आया। उसने देखा कि तीन वर्दियाँ टिकट उसके हाथ से लेकर उस मगरमच्छ के मुख की ओर धकेल रही हैं। मगरमच्छ के मुख के पीछे मगरमच्छ का पेट है पेट में नारकीय अग्नि से भड़कती अंतड़ियों का गोरखधंधा है जिनमें असंख्य मनुष्यों के शरीर गलते पिघलते जा रहे हैं। टिकट उसके हाथ से फिसल गई। मगरमच्छ की अंतड़ियाँ उसकी आँखों के समक्ष अग्निजाल बुनने लगीं।

मगरमच्छ की अंतड़ियाँ बम्बई की सड़कें कास्मोपोलीटन होटल जय हिन्द बोर्डिंग हाउस, गुरुद्वारा धर्मशाला पेहरो शाह का मजार चोर बाजार चिमना बुचड़ स्ट्रीट। यहाँ उसकी छतरी बरसाती, होल्डाल अटेची केस डाकूमेण्ट केस रिस्ट वाच फाउंटन पेन दो गरम सूट कम्बल बिस्तर की चादरें और कई दूसरी चीजें हौले हौले पिघल कर विलीन हो गई थीं।

सड़कों के फुटपाथ वह हाथ में अपना कनवस का थैला और बचाखुचा बिस्तर लिए खड़ा था। उसकी पीठ के पीछे धर्मशाला का दरवाजा खुला हुआ भी बन्द हो चुका था। थकावट से उसका अंगप्रत्यंग पीड़ित था। टूटे हुए बूटों ने दोनों पर जगह

जगह से काट दिए थे। धरा ने इन जख्मों पर मल कीचड़ और पसीने का चिपचिपापन मिर्चों की भांति सुई चुभो रहा था। मस्तिष्क में जैसे गरम गरम सिक्का भरा हुआ था। आंखों के सामने धुएं के चक्कर से घूम रहे थे। पेट का खाली खोल आरी के दांत बन कर अंतड़ियों को चीर चीर कर फेंक रहा था।

वह सुबह का भूखा था। पैदल चल कर छः मील के फासले पर इस बात का जवाब लेने गया था कि क्या उसको उस फैक्टरी में नौकरी मिल सकती है? जवाब नकारात्मक मिला था। यह उसकी अंतिम आशा थी।

अभी अभी वह उसी दशा में भूखा प्यासा ही पैदल चल कर वापस आया था। धर्मशाला में एक नियत समय तक ही ठहरा जा सकता था। यद्यपि धर्मशाला में उसकी रिहाइश काफी दिनों से निश्चित समय की सीमा लांघ चुकी थी किन्तु हर सप्ताह जब दो रुपये पण्डित जी की जेब में पहुंच जाते तो चार दिनों की अवधि समाप्त होने में ही न आती। किन्तु अब जब वह गत दो सप्ताह से पण्डित जी को कुछ नहीं दे पाया था तो आज चार दिनों की यह अवधि एक छलांग में अपनी सभी सीमाएँ लांघ गई थी।

वह फुटपाथ पर खड़ा था।

फुटपाथ फुटपाथ ही फुटपाथ

मानवतावादी शर्मा जी के प्रान्तिक हैड क्वार्टर की मजबूत पथरीली दीवार के साथ एक रूपाहिज औरत अपने मुर्दा बच्चे की लाश गोद में लिए बैठी थी। कोई उसकी ओर ध्यान तक नहीं देता था और वह घबराई हुई आंखें फाड़ हरेक की ओर हर चीज की तरफ घूर घूर कर देख रही थी।

सिर पर दोपहर की चिलचिलाती धूप में मन्दिर के ब्रिज पर एक बलहीन ढाँचा-सा युवक औंधे मुंह पड़ा हुआ था। चींटियों की एक सरिता उसकी टांगों को लांघती हुई चलती जा रही थी। कोई दृष्टि स्थिर कर उस पर पड़ती और फिर एकदम घबरा कर भाग उठती। धूप और तीक्ष्ण होती जा रही थी। लोग पसीने में सराबोर हो रहे थे किन्तु युवक के जिस्म पर पसीने की एक भी बूंद नहीं थी। उसके खुले हुए होंठ के पास फुटपाथ की धूल को चाट रहे थे। एक घूंट पानी की आवाज जैसे वहां दम तोड़ कर रह गई थी।

नामवर कलाकार की चित्रकारी के साथ कुम्हलाने की जगह में एक विज्ञापन की तस्वीर चमक से पूरे यौवन नग्न शरीर को लिए सुन्दर चांदी पर पड़ा मुस्करा रहा था। उसके सब निखरे चाव अंगों में से कन्धे मस्ती और मद निखर कर उसके सारे शरीर को मांसल बना था और मक्खियों का झुंड उस पर भिनभिना रहा था।

मनपुर में, अमनपुर में, पंजाब के चप्पे चप्पे पर, गुलाब के गरमज ■ अनगिनत स्त्रियां और पुरुष फुटपाथों पर भाग रहे हैं, तड़प रहे हैं। कुछ मासूम रहते हैं और अपना गुजारा में मर जाते समझ जोंक तोंगे और कुछ गुजरान रहते हैं। गुजरान गुजरान जब उनके नाखून तक जाते हैं उंगलियों दुश्मन मानती हैं या वह पानियों उठा

कर दरख्तो की जड़ो या दीवारो से खुरदरे पत्थरो से साथ रगडने लगते है। रगडते जाते है और हाय हाय करते जाते हैं। यहाँ तक कि जख्मो में से मटियाले रग का खून बहने लगता है और फिर वह सी-सी करते हुए जख्मो को दबा-दबा कर खून निचोडने लगते है।

यह फुटपाथ के नजारे वह धर्मशाला के सामने फुटपाथ पर खड़ा हुआ देख रहा था। सामने ट्रामो-बसो कारो टैक्सियो का एक तेज दरिया प्रवाहित है। किनारो पर पैदल चलने वाले धीरे धीरे किनारो से टकराते एक-दूसरे से कधे भिडाते हुए भागे जा रहे हैं।

एक कुली हाथ रेहडी खीचता हुआ उसके समीप से फुटपाथ के साथ साथ हो कर गुजरा। बम्बई की खास, नौका जैसी लम्बोतरी सी रेहडी को, जिसके आगे आदमी दोनो हाथो को पकडे घोड़े की भाति जुत जाता है, वह घसीटे लिए जा रहा था। रेहडी का पिछला सिरा जमीन से सिर्फ बालिश्त भर ऊँचा था। रेहडी पर एक अर्ध नग्न स्त्री का शव था। उसका मुह खुला था और उबल कर बाहर निकली हुई आखें एक पाषाण दृष्टि से आकाश को घूर रही थी और खुले लम्बे बाल रेहडी से लटक कर सडक पर घिसटते जा रहे थे।

उसे ऐसे महसूस हुआ जैसे एक दिन वह भी इसी प्रकार फुटपाथ पर रगड़ रगड़ कर मर जाएगा और उसकी लाश में से उठने वाली सडाध ही किसी का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर सकेगी और फिर कोई पाटी वाला कुली उसे इस औरत की तरह खीच कर ले जाएगा जैसे कोई भगी मुर्दा कुत्ते का टागो से घसीट कर कूडे के ढेर पर फकने जा रहा हो।

नही नही, मैं मरना नही चाहता। इस उम्र में अभी तो मैंने दुनिया का देखा ही क्या है? यहाँ से भाग जाऊँ किन्तु कहाँ? पजाब? किसके पास? दिल्ली वहाँ मेरा कौन है? हैदराबाद हाँ मेरा भाई है वहाँ। जहाँ पाँच जीव खाते है वहाँ छठे की रोटी आसानी से निकल आती है। किन्तु वहा पहुच कैसे? किराया कहा से लू? भाई को क्या न लिख दू किराया भेजने के लिए किन्तु वह कैसे भेज सकेगा? एक सौ दस रुपये तो कुल उसका वेतन है। महीने के अन्तिम दिनो में कई बार उनको फाके काटने पडते है, एक सौ दस से बनता ही क्या है। हैदराबाद पहुचने के लिए उसके आधे महीने का वेतन लग जाएगा। मैं स्वय चला जाऊ तो वह रोटी तो मुझे खिला ही दे स्वय भी शायद कष्ट सह ले किन्तु बच्चो को भूख मार कर वह मुझे पैसे नही भेजने लगा, और मैं भी यह कैसे सहन कर सकता हूँ कि भाई भाभी और भतीजे भतीजियो को भूख के जालिम मुख में धकेल दूँ एक अपनी अकेली जान के लिए तो फिर हो क्या?

बिना टिकट सफर किन्तु यह तो जुर्म है। फिर दूसरा रास्ता है। तमूर लाला के पास जाया जाए। शराब की भट्ठी लगाई जाए चोरी की शराब बेची जाए। शम्भू को मिला जाए। अफीम भग, चरस बरआमद की जाए गाँजेखाने चलाए जाएँ। सुल्ताना किशोरी जानकी या आई० बी० के पर चाट जाएँ सडक चौराहा

ग्रौर मरगाहा पर खडे हो कर हर ग्राने-जाने वाले के कान म बडी निलज्जता ग्रौर जिल्लत से सरगोशी की जाए—

—'साहब। टेक्सी चाहिए ? पजाबी गुजराती बगाली मराठी—हर तरह का माल है साहब। ईरानी, कश्मीरी, पारसी यूरोपियन चीनी यहूदी ।'

ग्रौर जब कोई भद्र पुरुष गाली देते हुए दुत्कार दे, तो कान लपेट कुत्ते की भाँति पूँछ टाँगो म दबा भीड मे खो जाए ग्रौर उसी निलज्जता से किसी ग्रौर ग्राहक की खोज की जाए पूरे तौर पर जरायम पेशा बना जाए। नही नही मैं यह जलील काम कभी नही कर सकता। मैं जरायम पेशा नही बनूगा। मेरी रगो म शरीफ खानदान का खून है। मैं भद्र नागरिक हूँ। मैं ग्रपमान बर्दाश्त नही कर सकता। तो फिर तो फिर फुटपाथ की मौत भी तो बडी जलील है। तो फिर क्या किया जाए ? ग्रो हाँ। यह सामान यह सामान क्या ने बेचा जाए।

ग्रौर चोर बाजार की चिमना बुचर स्ट्रीट न उसके रहे-सहे कपडो कम्बल ग्रौर दरी को भी निगल लिया।

पाव भुजिया लाकर पेट भरने के बाद उसक पास केवल इतने पस बाकी बचे थे कि पूना तक पहुचा जा सके किन्तु पहुचना हदराबाद था। ग्रब बिना टिकट सफर करने के सिवा ग्रौर कोई चारा नही था। जुम की ग्रनुभूति ने एक बार फिर उसके मन म द्वद्व उत्पन्न किया किन्तु दूसरे क्षण मौत मुह खोले चली ग्रा रही थी—फुटपाथ की ख्वार हुई जलील मौत कुत्ते की मौत ।

फिर वह इस निश्चय पर पहुचा कि उम्र भर के लिए जरायम पेशा बनने से बचने के लिए ग्रच्छा है कि छोटा सा जुम कर लिया जाए। हमेशा के लिए कानून विरोधी जीवन व्यतीत करने की ग्रपेक्षा ग्रच्छा है कि एक छोटी सी गलती करके ईमानदार नागरिक जीवन व्यतीत किया जाए।

सो रास्ते के खच के लिए तीन रुपये रख कर उसने पूना तक की टिकट ले ली ग्रौर विक्टोरिया टर्मिनस से मद्रास एक्सप्रेस म सवार हो गया। उसके पास ग्रब पहनी हुई कमीज पतलून के ग्रतिरिक्त एक ग्रौर कमीज पतलून के सिवा कोई सामान ही नही था।

दौड स्टेशन पर उसे टी० टी० ने ग्रा पकडा। टिकट उसक पास पूना तक का था। सो टी० टी० ने उसे रेल मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया। उसने बहुत मिन्नतें की पर मजिस्ट्रेट ने उसके हर वास्ते क साथ-साथ जुर्माने म वृद्धि करते हुए उस पचीस रुपये जुर्माना ग्रौर साथ ही किराया भी फौरन जमा कराने का हुक्म दिया, नही तो पद्रह दिनो की कद

वह एक सीखचोवाली कोठरी म बद था।

दे दे बाबा एक पसा। सुबह से भूखा हूँ एक पैसा

सामने प्लेटफाम पर एक छ-सात वष का नगाधडगा लडका एक गुजराती बनिए के सामने बिलख रहा था। उसकी बाछियाँ ऊपर चढ गई थी ग्रौर बत्तीसी बाहर निकल निकल ग्राती थी।

कितना जलील मालूम होता है—दूसरे आदमी के सामने इस प्रकार दाँत निकाल कर बिलखना ।

उसको ख्याल आया और एकदम उसके सारे शरीर म कँपकँपी दौड गई, कान रक्तिम हो गए।

जेल से रिहाई के बाद वह जेल के सामने इसी प्रकार बिलख रहा था—मैंने हैदराबाद जाना है। मुझे वहाँ का टिक्ट दिलवाइए।

पर तुम बम्बई से चढे थे, यही तुम्हारे कार्ड म भी लिखा है।

हाँ हुजूर, पर मैंने हदराबाद जाना है। वहा मेरा भाई है। बम्बई म मेरा कोई नही।

पर एसा नही हो सकता। तुम्हे वही का टिकट मिल सकता है, जहाँ से तुम सवार हुए थ।

लेकिन हुजूर, मैं वहाँ भूखा मर जाऊँगा। बेकारी और भूख से जान बचा कर तो वहाँ से भागा था।

हम कुछ नही कर सकता। मजिस्ट्रेट साहब ने फसले म यही लिखा है और यही कानून है।

और मद्रास एक्सप्रेस ने उसे पुन उठा कर बम्बई के विक्टोरिया टर्मिनस पर ला फेंका।

टिकट!

उसने सिर उठा कर देखा। वही दोनो टिकट चैकर और पुलिस का सिपाही उससे टिकट माँग रहे थे। उसने टिकट निकाल कर उनके हवाले कर दिया और प्रतीक्षा करने लगा कि कब एक नीली और दो सफेद वर्दियाँ उसे मगरमच्छ के मुख म धकेलती हैं।

गुलबानो

अजीतकौर, १९३१

पंजाबी की स्त्री लेखिकाओं में अजीतकौर का बड़ा प्रमुख स्थान है। इस बीच हिंदी में भी उनकी बहुत सी कहानियाँ अनूदित हो कर छपी हैं। नारी जीवन की विषमताओं पर लिखी अजीतकौर की कुछ कहानियाँ बड़ी मार्मिक बन पड़ी हैं। उनकी एक ऐसी ही कहानी इस संग्रह में संग्रहीत की गयी है।

उन्हें अपने प्रथम कहानी संग्रह 'गुलबानो' पर पंजाब के भाषा विभाग का पुरस्कार प्राप्त हो चुका है। अन्य प्रकाशित कहानी संग्रह हैं 'महिक दी मौत' 'बुत शिकन'।

खुशदिल खाँ गाड की बीवी गुलबानो बहुत सुंदर थी, आस-पास के बीसों गाँवों में एक।

लम्बी ऊंची पठानी। मुंह जैसे कच्चे दूध का कटोरा। अंग जैसे साग के कोमल डण्ठल और सुंदर जैसे परियों की रानी।

पर हर परी को जैसे कोई देव अपने पत्थर के किले में बंद करके रखता है, वैसे ही खुशदिल खाँ गाड ने गुलबानो को छिपा रखा था।

यूं सभी पठान अपनी बीवियों को छिपा कर रखते हैं मानो ब्याह कर न लाये हों, लूटकर लाये हों कहीं से। लेकिन खुशदिल खाँ गाड की बीवी की तो छाया भी कभी किसी पुरुष ने नहीं देखी।

धुंध मौसम में सब गाँवों की औरतें मिलकर शहर सौदा खरीदने जातीं। हर स्त्री उस घड़ी की प्रतीक्षा ऐसे करती जैसे किसी मेले में पहले हुआ करती है।

सजधज कर-बुरके पहन घर से निकल पडती। सबसे आगे ढोल बज रहा होता। दूर से ढोल की आवाज सुनकर पठान रास्ता छोड देते। गाँव के बाहर जब किसी के देख लेने का भय न रहता तो वे बुरको को ऊपर चढा लेती और उनके मेहदी रंग चादी की पाजेब वाले पाव ढोल की ताल पर नाचते-नाचते बावरे हो जाते। चिरकाल से जबरदस्ती रोक कर रखा हुआ नाच उनकी एडियो से फूट पडता।

ज्यो ज्यो वे आगे बढती और भी गांवो की औरतें उनके साथ हो लेती। लेकिन वे खुदादिन खाँ गाड के गाव गढी महाज खाँ पहुचती तो सबके हृदय मे एक टीस सी उठने लगती। यह दर्द गुलबानो के कलेजे म असह्य पीडा बनकर रह जाता। गाव की सब स्त्रिया उनके साथ हो लेती लेकिन बेचारी गुलबानो घर की दीवारो से घिरी रह जाती। खुदादिन खाँ गाड ने कभी जाने की इजाजत ही नही दी।

सब औरतें खुदादिल खाँ गाड के घर जाती—पिंजरे म बन्द गुलबानो के घर। फिर सब उसके आँगन मे नाचने लगती। ढोल बजता रहता और सेब अमरूद, भुट्टे खुरमानियाँ गुड और मिश्री बाँट जाते। सभी मिलकर खाती।

गुलबानो को देखकर सबके दिल पर बादल घटाएँ बनकर छा जाते—मस्ती से भरपूर। ढोल की ढुम ढुम म पीडा के बोल साकार हो उठते। पठान स्त्रिया नाचती तो उनकी एडियो से कोई दर्द विलाप कर उठता। और गुलबानो ? उसकी पीडा उन रानो के समान थी, जिन्हें अधेरी राहो पर ठोकर लग जाती है और लाखो तारे जिनके दर्द म कोयल से सुलग उठते हैं।

स्त्रियाँ अपनी राह लेती। गुलबानो को लगता घर की दीवारो की तपती हुई भट्ठी म उसका जीवन जलकर राख हो जाएगा।

खुदादिल खा गाड के यार दोस्त कहते कि उसे भी अपनी बीवी को स्त्रियो के साथ जाने देना चाहिए। लेकिन वह किसी की एक न सुनता। वे कहते, गाय भैसो को भी तो झुण्ड के साथ नहाने और पानी पीने भेजना पडता है—खुदादिल खा उनके प्रश्न का कोई उत्तर न देता।

जब भी स्त्रियो का दल खुदादिल खाँ गाड के घर आता वह गुस्से से लाल हो जाता और बारी-बारी से सब से झगडने लगता। दफ्तर म मातहतो पर गरम और घर म नौकरो से नाराज। बच्चों पर क्रुद्ध और बीवी से रुष्ट। बरतन फोड देता, चीजें तोड देता—बिलकुल वैसे ही जैसे आँधी घर के द्वार तोड कर अन्दर आ जाती है।

फिर ज्यो-ज्यो दिन बीतने लगते आँधी अपने आप शान्त हो जाती। जिन्दगी अपनी राह हो लेती—ऐसी राह जहा नया कुछ न होता, न ही कुछ नया होने की सम्भावना होती। गुलबानो के प्राण घर की दीवारो का ऐसे स्वीकार कर लेन मानो उन्ह दखल रहने म ही उसके जीवन की सार्थकता हो।

खुदादिल खाँ गाड के घर बरसो से चन्दन नाम का एक व्यक्ति दूध देने आता था। उसकी दृष्टि सदा आँगन म कुछ खोजती रहती, लेकिन उसे गुलबानो के दर्शन कभी नही हुए।

फिर एक दिन ।

चन्दन ने अभी गागर बरामदे में रखी ही थी कि अंदर आँगन में गुलबानो गुजरी। उसने चन्दन को नहीं देखा, लेकिन चन्दन को उसकी एक झलक भर मिल गई। उसे लगा गुलबानो का सौंदर्य सागर जल से धुली दूध-सी सफेद चमकदार सीपी के समान है। वह गुलबानो के रूप की एक ही झाँकी पाकर बादशाह हो गया।

चन्दन जहाँ कहीं उठता-बैठता गुलबानो की बात करता उसका मुखड़ा ऐसा था, चाल ऐसी, कपड़े फलाँ रंग के, गहने गहने उसके हाथ चलते-चलते उसके पाँव

गुलबानो चन्दन के सामने से आँगन में गुज़री थी—साकार गुलबानो स्वयं।

और चन्दन के मानस के अँधेरे आकाश में बिजली सी कौंध गई।

इनकी आपस में कभी कोई बात नहीं हुई। गुलबानो ने चन्दन की ओर देखा तक नहीं। चन्दन को लगा यह सब सपना है—एक ऐसा सपना जो पंख फैलाकर उसके मानस पर बैठ गया था। इन कोमल और गरम पंखों के नीचे कई चाह कई कल्पनाएँ आशाएँ अपनी छोटी पतली और लम्बी गरदनें निकाल निरीह और भय हीन आँखों से संसार को स्तम्भित सी देख रही थीं—उस आकाश उस धरती को जो लाखों वर्ष पुरानी थी मगर उसके लिए आज ही अभी, कच्चे दूध-सी मीठी और गरम, केवल उनके लिए बनी थी—केवल उनके लिए ही।

एक ओर चन्दन था जिसके दिल की देहरी गुलबानो की एक ही झलक से खुल गई और धरती आकाश दोनों उसमें समा गए।

दूसरी ओर खुशकिस्मत खाँ था जो गुलबानो की बरसों की निकटता पाकर भी पत्थर बना रहा—ऐसा पत्थर जो लावे में जल भुन कर कंकड़ बन जाता है।

इधर एक गुलबानो खुशकिस्मत खाँ के पास रहते हुए भी उससे कोसों दूर थी।

और उधर एक गुलबानो चन्दन से कोसों दूर रहते हुए उसकी साँसों में समायी हुई थी।

गुलबानो को उसकी एक सखी ने बताया कि उसके घर दूध देकर जाने वाला चन्दन झूम झूम कर उसके हाथों, पाँवों बालों और होठों की प्रशंसा करता है।

अगले दिन चन्दन की दूध की गागर में एक धार जब उसके घर की गागर में गिरी तो गुलबानो ने द्वार की दरार में पलक भर देखा। उसे लगा दूध की एक धार चन्दन की गागर में निकल कर उसके अपने शरीर में समा गई है।

अब गुलबानो घर के आँगन में चलती तो पाँव थिरक थिरक जाते। उसका जीवन संगीतमय हो गया। गीतों की कड़ियाँ आप से आप उसके अधरों पर आने लगीं। मस्ती के खुमार में आँखें बन्द किए वह दूर तक आनन्द का अनुभव करती रहती।

उसके मानस के खिले आँगन में एक पौधा उगा—चन्दन के प्यार का पौधा। और उसके जीवन के सभी रंगहीन वर्ष सुवासित हो गए महक उठे। उसका गुम-सुमा का मन में एक बेल प्यार की पली और वह इतनी बड़ी अपनी माला बन गई।

उस बार जब चन्दन के गीतों की सिसकियाँ कान की तान पर नाचती हुई उसके घर

के आँगन मे आयी, तो ढोल भी खुश था, गुलबानो भी खुश। गुलबानो को खुश देख कर सब औरतें खुश थी और गाँव से दूर नदी के किनारे भैंसो को नहलाता हुआ चन्दन भी खुश। इस दिन यदि कोई खुश नही था तो वह खुशदिल खाँ गाड।

धीरे धीरे चन्दन की कही हुई बातें लोगो की जबानी खुशदिल खाँ तक पहुची। उसका सिर घूम गया, आँखो म खून उतर आया। इसी हालत म वह घर पहुचा।

गुलबानो उस समय कपड धो रही थी और कपडें धाने वाले मोटे की ठप्प-ठप्प क साथ कोई गीत गुनगुना रही थी। खुशदिल खाँ ने वही सोटा छीन कर उसकी कमर म दे मारा और कहा, जानती नही यहाँ गाना कुफर है।

फिर उसकी बाह पकड कर घसीटता हुआ उसे आगन म ले आया, बता, चन्दन वाली बात सच है ?

गुलबानो चुप। अपने जीवन के एक अनेने सच को वह कस झूठ कह दे ? खुशदिल खाँ घसीटता घसीटता उसे छत पर ले गया। आ तुझे चन्दन से मिलाऊँ

फिर उसने गुलबानो को नीचे गली म गिरा दिया। एक चीख निकली और बस

आवाज सुनते ही लोग सब ओर स दौड पडे। खुशदिल खाँ ने देखा उसकी बीवी नग मुह गली म पडी है और सब लोग उसे देख रहे हैं।

वह दौडा-दौडा नीच आया। अन्दर से एक मोटी चादर लेकर गली म पहुचा और झटपट गुलबानो क मुह पर डाल दी।

रत्तो

गुरदयालसिंह, १९३३

पंजाबी की नई पीढ़ी के लेखकों में गुरदयालसिंह बड़ी उज्ज्वल संभावनाओं से युक्त हैं। आर्थिक संघर्षों से भरे हुए जीवन में उन्होंने शिक्षा प्राप्त की और अपने लेखन को गति दी है।

गुरदयालसिंह की अब तक १० पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। गोर्की की रचना 'मेरा बचपन' का इन्होंने पंजाबी में अनुवाद भी किया है।

गत दो तीन वर्षों से हिंदी के अनेक प्रतिष्ठित पत्रों में भी इनकी कहानियाँ निरन्तर प्रकाशित हो रही हैं।

रत्तो भरिंड की भाँति उनके घर के भीतर घुस आई। बिखरी हुई लटूरियाँ, कान्तिहीन और डरावनी आँखें, पीला रंग, फटे तथा मैले कपड़े—साक्षात डायन जैसी वह दिखाई पड़ती थी। एक चुहिया जैसी काली-कलूटी बालिका उसने गोद में उठा रखी थी और तीन चार बालकों की पंक्ति उसके पीछे पीछे आ रही थी। यह सब देखते ही जैसे राधा की जान मुट्ठी में आ गई।

'सुन री ठकुराइन!' अन्दर कदम रखते ही रत्तो गरजी, 'अगर तुम्हें तिमंज़िला मकान बना कर शान्ति नहीं मिली तो हमारी झोंपड़ी छीन कर कलेजा ठंडा हो जाएगा क्या?'

और वह राधा के पास आकर फर्श पर ही बैठ गई। गोद में उठाई हुई बालिका के मुँह में अपना स्तन देते हुए उसने राधा की ओर ऐसे देखा जैसे उसे खा जाना चाहती हो। राधा का चेहरा फक हो गया।

"सारे गाम म स ऊँची तुम्हारी मटरिया,"-गुस्स भरी ऊँची आवाज म रत्तो ने कहा, 'बसने वाले तुम तीन जने हो। अगर इनमे भी तुम्हारी ताँगें नही समाती तो जाकर श्मशान के चारा ओर चारदीवारी बना लो।'

'कुछ सोच विचार कर बात करो मरी बहन!' राघो ने बडी नम्रता से, पर कुछ डरी हुई आवाज म कहा।

पर रत्तो को तो जसे चडान चढा हुआ था।

'बोलूँगी सोचकर। उसने आँखें दिखाते हुए उत्तर दिया, 'तू भी सुन ल और अपन खसम को बता दीजियो कि यदि किसी ने हमारे घर क अन्दर पाव भी रखा तो मैं उसका कलेजा निकाल कर खा जाऊगी। जानन नही, मैं रत्तो हूँ, मनू सिरकट की बेटी। मरने के बाद भी पीछा नही छोडूगी, प्रेत बनकर तुम्हारी सात कुला का नाश नहा किया तो मुझे सिरकटे बाप की बेटी कौन कहेगा?

राघो की जबान को जसे ताला ही लग गया हो। उसने रत्तो को समझाना तथा फिर कुछ कहना चाहा परन्तु उसके सूखे कण्ठ से आवाज नही निकली। रत्तो, मुह आई कहती चली गई और ऐस ही बुडबुडाती बालका की पलटन को पाछे लगाए चली गई।

दोपहर को बेसू ठेकेदार जब रोटी खाने घर आया तो राघो ने उसे सब बात बताई और बोली, "मुझे तो राम कसम उस पर तरस आता है। कुएँ म फेंको एसी जायदाद को अपनी पहली ही हमसे सभाली नही जाती तो और क्या करेंगे।'

परन्तु ठेकेदार का उसकी बात पर हँसी आ गई और वह व्यग्य स बोला, यदि तेरे जसा स्याना होता तो आज तक टीडे-ककडिया बेचता होता।"

और दूसरे क्षण वह कुछ क्रोध म आकर कहने लगा उसी बडी अकल वाली ने पहल अपन उस खसम को क्यो नही समझाया जो एक हजार की अकेली शराब ही पी गया? जो ढाई तीन-सौ की अफीम तथा नम्बार चढा गया, वह अलग रही। जाने मैं आज तक कसे चुप कर रहा, यदि कोई और होता तो इनके सिर क बाल तक उखाड देता। मैं तो फिर भी तरस खाता चला आया कि चलो गरीब है थोडा-थोडा करके दे देगा।"

'परन्तु तुम ऐसो को उधार दिया क्या करते हो? राघो ने कुछ खीझ कर पूछा।

तुम्हें क्या पता है दुकानदारी के भेदा का हम ही पता है जिनको इन मूख लागा मे निपटना पडता है। नकद तो इनके पास जहर खाने को भी पैसा नही होता, उधार हम दें नही तो कर ली दुकानदारी।—जाट गुड की भेली ही दिया करता है गना नही दिया करता।

मुझे तो उसकी बददुआ स डर लगता है ऐसी दुखिया की आह खाली कभी नहा जाती। दूसरे कितने ही छोटे छोटे बाल बच्चे ठट्टरे, उनको लेकर कहा जाएगी बेचारी।

परन्तु ठेकेदार ऐसा आदमी नही था जो राघो की बातो के लिए इतना बडा नुक

साथ उठा लेता । राधो को उसने बताया कि यह भी उसकी दरियादिली ही थी कि उसने रत्तो के पति जीवने से केवल घर ले कर ही फसला कर लिया था। कोई बारह सौ रुपया उसने जीवने से शराब, अफीम तथा नस्वार का लेना था। कोई अढाई सौ से अधिक का ब्याज बन जाता था परन्तु जीवने के पुराने घर का कोई पाँच सौ भी देने को तयार न था। यदि उसको इच्छा होती तो वह जीवने की सारी जमीन भी कुरक करवा सकता था। उसने तो जीवने पर इतना तरस खाया था परन्तु वह फिर भी बेई मानी कर गया था। उसने चोरी चोरी अपनी तीन बीघा जमीन बेच दी थी। अब यदि ठेकेदार उस पर मुकदमा कर देता तो घर के साथ-साथ उसके बर्तन भी कुरक हो सकते थे। परन्तु क्योंकि वह खुद बाल बच्चेदार आदमी था इसीलिए उसने सोच कर उसका घर लेकर इतना घाटा भी सहन कर लिया था।

परन्तु यदि इस पर भी वह ऐसी बातें करती फिरती है ठेकेदार ने गुस्से स कहा 'तो मैं भी अपने बाप का बेटा नहीं जो रात पड़ने से पहले पहल उनका बोरिया बिस्तर न उठा दूँ तो। जितना इन लोगों से नर्मी करें, उतने ही सिर पर चढ जाते हैं।

अपने पति की यह बात सुनकर राधो का मन और भी उदास हो गया परन्तु विवश हो कर चुप हो गई।

ठेकेदार न उसी रोज जीउन को बुलाकर कह दिया कि यदि उसने कल तक घर खाली नहीं किया तो वह पुलिस बुलवा लेगा।

लाला जी मुझे चार दिन और काट लेने दो। फिर मैं शहर जाकर कोई मेहनत मजदूरी कर लूगा। यहाँ अपने गाँव म रहते मुझ स शरम क मारे गुजर नहीं होगी। जीवने न मिन्नत स कहा।

परन्तु ठेकेदार न आँखें दिखाते हुए उत्तर दिया 'तो बडी इज्जत वाले ने मेरा कर्ज क्यों नहीं द दिया ? अब तो गाँव म घर छोड कर रहते शरम आने लगी जब बोतल को हिला हिला कर दसते कहा करता था 'ठेकेदार, पहले ताड़ की नहा है यार! तब यह बातें याद नहीं थी ?'

जीवना सिर नीचा किए चला आया।

रात पडने स पहले-पहल इस बात की चर्चा सारे गाँव म होने लगी। रत्तो के तीखे स्वभाव को सभी जानते थे कि वह मर कर भी अपना घर नहीं छोड़ेगी जीते जी तो उसे कौन निकालने वाला ठहरा। परन्तु दूसरे दिन जब जीवना अपना टूटा फूटा सामान गाडी पर लाद कर अपने चचा के पशुओं वाले अहाते की ओर जाने लगा तो लोगों को इस बात का भरोसा नहीं हुआ। सभी यही सोच रहे थे कि उसने रत्तो को घर छोड़ देने पर कैसे राजी कर लिया ?

फिर तीन दिन रत्तो को किसी ने नहीं देखा। परन्तु चौथे रोज जीवने के चचा के पशुओं के अहाते म से गाँव वालों न उसकी सिसकारियाँ सुनीं। वह कभू ठेके दार के वंश का स्यापा कर रही थी। आधी रात तक वह स्यापा करते करते थक-हार कर जब बेहाल सी हो गई तब कहीं जाकर चुप हुई।

और उसके पश्चात गाँव वालों को रत्तो की किलकारियाँ हर रोज सुनाई देने लगीं। वह केसू ठेकेदार के सारे परिवार का स्यापा करती, उसे गालियाँ निकालती, और बहुत रात गए तक न जाने क्या-क्या बोलती रहती। उसकी किलकारियाँ जैसे सब के कलेजे चीर जातीं और लोग रात भर उसी की बातें करते रहते।

रत्तो के कच्चे घर को गिराकर केसू ठेकेदार ने वहां नई हवेली की नींव रख दी थी। हवेली को बनते कई दिन हो गए थे परन्तु राधो वहाँ नहीं गई थी। ठेकेदार उसे रोज कहता कि चलो अपना नया घर बनता देख लो परन्तु राधो को हर समय रत्तो की किलकारियाँ सुनाई पड़ती रहती। उसे ऐसे जान पड़ता जैसे रत्तो, अपने काले-कलूटे फटे-पुराने चीथड़ों में लिपटे बच्चों की पल्टन लिए उसके घर के भीतर घुसी आ रही है और उसको डायन की भांति खा जाना चाहती है। मारे डर के वह यह सब ठेकेदार को भी नहीं बताती थी।

और जब पति के बहुत कहने पर वह एक दिन अपनी, बन रही नई हवेली देखने चली तो उसके मन का भय पूरा हो गया। जिस गली से होकर वह जा रही थी उसी के मोड़ पर उसने रत्तो को खड़े देखा। नंगा सिर, चेहरे पर बिखरी लटें, भयंकर आँखें और कुब्जा जैसे हाथ पांव। वहां खड़ी वह ऊँची आवाज में केसू ठेकेदार का नाम ले-लेकर गालियाँ निकाल रही थी। चोलें मार रही थी और उसके बेटा का स्यापा कर रही थी। उसके देखते ही राधो बेहोश सी हो गई। दीवार का सहारा लेकर वह वहीं रुक गई।

थोड़ी देर बाद जब उसे कुछ होश आई तो उसने देखा कि रत्तो उसकी बन रही नई हवेली के पास चली गई थी। उसके हाथ में एक टूटा हुआ जूता था और पास ही गाड़े हुए एक खूंटे पर जोर जोर से जूता मारते हुए वह चिल्ला रही थी

अब बोल मर मय्या के साल, अब बोल! तू ने जो तालाब का पानी बोतला में भरकर मेरा घर फूंक डाला है मैं भी रत्तो नहीं जो तेरे सारे कबीले के बच्चे-बच्चे को न खा जाऊँ तो! अब बोल मेरे भापू अब बोल '

राधो दीवार के सहारे काँपती हुई उसे देखती रही। जूता मारते और गालियाँ निकालते निकालते जब वह थक-सी गई तो अपने आप ही, अपने अहाते की ओर चली गई। राधो भी उसकी आँख बचाकर वहीं से घर को लौट पड़ी अपनी नई हवेली तक पहुंचने का उसे साहस नहीं हुआ।

उस दिन रात को जब ठेकेदार घर आया तो राधो ने उसे कहा 'यदि कहा मानो तो इस घर को जैसे भी हो बेच डालो। मुझसे अपनी आँखों यह सब नहीं देखा जाता—उस अभागी की यह दशा मुझसे देखी नहीं जाती देखो तो कैसी बुरी हालत हो रही है? उसकी बददुआओं से मुझे डर लगता है।'

बड़ी दयावान न बन। चुप करके बैठी रह। ठेकेदार गुस्से में बोला 'यदि हाथी कुत्तों के भौंकने से डरकर भाग जाएँ तो दुनिया न उलट जाए! मैंने घर कर्ज के पैसों में लिया है कोई दान नहीं लिया जो ऐसी चुड़ैल की बददुआओं से डरकर छोड़ दूँ।

राधो फिर चुप हो गई।

उस दिन के बाद रत्तो को किसी ने कहीं फिरते नहीं देखा। जो कोई कभी उसके अहाते के आगे से गुजरता उसे छप्पर के नीचे खाट पर लेटे लेटे, धीमी धीमी आवाज़ में ठेकेदार के बेटा का स्यापा करते देख पाता। वह अब इतनी दुर्बल हो गई थी कि उसकी आवाज उसके अहाते से बाहर तक भी मुश्किल से पहुँच पाती थी। बिना किसी के सहारे वह उठ बैठ भी न सकती थी। परन्तु अपने दालान में एक बड़ी लकड़ी का खूटा गाड़कर और उसके ऊपर एक हाँडी औंधी रखकर उसने जो, ठेकेदार केसू का पुतला बना रखा था रात को सोते समय और प्रातःकाल उठते समय, वह उस पर पाँच जूते अब भी मारती थी। और कहने वाले कहते हैं कि यह प्रण उसने आखिरी श्वास तक निभाया।

थोड़े दिन बाद राधो ने सुना कि रत्तो मर गई। उसको यह सुनकर इतना दुःख और भय लगा कि वह दो दिन खाट से नहीं उठ पाई न कुछ खाया न पिया, बस पड़ी पड़ी सामने दरवाजे की ओर देखती रही। उस पल पल ऐसे जान पड़ता जैसे अपने, उन्हीं काले कलूटे, फटे-पुराने चीथड़ों में लिपटे बच्चों की पल्टन लिए, रत्तो उसके घर के अन्दर घुसी आ रही है। परन्तु तीसरे दिन उसका मन कुछ शान्त होने लगा और एक लम्बे समय से उसके मन में बैठा भय दूर हो गया तब भी भीतर उसके कहीं कोई उदासी का बोझ सा अनुभव होने से नहीं रुक पाया।

और कुछ दिन बाद राधो की नई हवेली तैयार हो गई। मीठे चावल बाँटने के लिए वह स्वयं गई। चावल बाँटते-बाँटते उसने एक बहुत दुबली पतली काली कलूटी तथा नंगी धड़ंगी बालिका की ओर देखा तो उसका हाथ अपने आप रुक गया। उसे एक भय सा लगा।

'तू किसकी बेटी है री?' राधो ने उससे पूछा।

रत्तो की।' बालिका ने उत्तर दिया।

राधो से आँख भी नहीं झपकी गई। वह देखती की देखती रही वही कान्ति हीन बड़ी बड़ी आँखें सफेद रंग, बिखरी लटें डायन जैसे हाथ पाँव जैसे वही रत्तो सामने खड़ी हो।

राधो की टाँगें काँपने लगी। नाई को चावलों वाली परात पकड़ाकर वह झट से भीतर चली गई—घर वापस आने तक का साहस भी उसमें नहीं था। भीतर जाकर वह दीवार का सहारा लेकर नीचे फर्श पर ही बैठ गई। कितनी देर उसे कुछ भी दिखाई नहीं पड़ा और वह आँखें फाड़ फाड़कर छत की ओर देखती रही। कुछ देर बाद जब उसे थोड़ा-थोड़ा दिखाई पड़ने लगा तो उसने देखा कि छत के बड़े गाडर से बँधी रंग बिरंगी कातरों की बनी हुई चिड़िया जो लटक रही थी उसकी आँखें बिल्कुल रत्तो की आँखों जैसी जान पड़ती थीं। और फिर ऐसे ही उसकी आँखों की ओर देखते देखते वह बेहोश हो गई।

अगले दिन लोगों ने राधो को रत्तो की भाँति ही गालियाँ देने और विलाप किया मारते हुए सुना। उसी भाँति उसने ठेकेदार केसू का नाम ले लेकर उसके बेटा का स्यापा किया। ठेकेदार ने कई डाक्टर, हकीम बुलवाए परन्तु राधो को आराम

नहा आया। यदि क्षण भर उसे होश आ भी जाता तो अगले क्षण वह अधिक जोर से चिल्लाने लगती पहले से अधिक गालियाँ निकालती अधिक जोर जोर से स्यापा करती।

जब कई दिन राधा को आराम नहीं आया तो गाव में इस बात की अधिक चर्चा होने लगी। गाव की बूढ़ी स्त्रिया कहने लगी कि उस पर रत्तो की छाया पड गई थी—तभी तो रत्तो की भाति वह गालिया निकालती थी, उसी की भाति स्यापा करती थी और तो और उसका स्वर भी रत्तो जैसा ही बन गया था।

उमस

कुलदीप वग्गा, १९३३

कुलदीप यद्यपि बहुत दिनों से लिख रहे हैं परन्तु उन्होंने लिखा बहुत कम है। इस समय तक उनकी लगभग ४० कहानियाँ छप चुकी हैं। उन्हीं के शब्दों में— मैंने कई बार सोचा कि मैं नहीं लिखूँगा और इसलिए अपने आप को कई ऐसे कामों में लगाया जिससे यह बीमारी छूट जाय। परन्तु मैं सफल नहीं हुआ। और अब निश्चय किया है कि लिखूँगा।

कुलदीप ने किशोर वय के लड़के-लड़कियों की मनोवैज्ञानिक समस्याओं पर अच्छी कहानियाँ लिखी हैं। संग्रहीत कहानी भी एक ऐसी ही कहानी है।

गर्मी से राज का बुरा हाल था। सारा दिन वह अकेली घर पर पसीने से भीगती रही।

शाम को उसका पति नित्य की भाँति दफ्तर से थका माँदा आया, स्नान कर पलंग पर लेटे-लेटे वह होम्योपैथी की पुस्तक में खो गया। राज गर्मी से बहुत ही खीझ उठी थी। उसके जी में आता आज वह अपने पति से खूब दिल खोल कर बातें करे—वह उन्हें बताए—ओफ ? आज कितनी गर्मी है। ऐसा मनहूस मौसम और कब तक रहेगा ? उसे पता था कि इन बातों से मौसम में कोई परिवर्तन न होगा नहीं परन्तु आखिर वह गर्मी की खीझ को निकाल भी कैसे सकती थी सिवाय इसके कि वह उनसे दो बातें कर लेती। परन्तु अपने पति को होम्योपैथी की किताब में डूबे देख राज मन मसोस कर रह गई। उसे अपने आप पर गुस्सा आ रहा था, अपने पति पर गुस्सा आ रहा था और सब से ज्यादा उस निगोड़ी होम्योपैथी की पुस्तक पर।

उसकी शादी को हुए अभी पाँच ही महीने तो हुए थे। पहले पहल जब राज को पता लगा कि उसके होने वाले पति की आयु पतीस वर्ष की है तो उसे अपने माता पिता पर बहुत गुस्सा आया। उसने साफ इन्कार कर दिया था इस रिश्ते के लिए।

राज बी० ए० के प्रथम वर्ष में थी और उसकी अपनी आयु उन्नीस वर्ष से भी कम थी।

फिर माता पिता ने अपनी मजबूरी बतलाई कि उनके लिए इस जमाने में तीन सौ रुपया कमाने वाला पढ़ा लिखा वर ढूढना कितना मुश्किल है।

आखिर राज ने उनका यह सुझाव मान लिया। लेकिन एक शर्त पर, कि वह कम से कम एक बार स्वयं अपनी आँखों से उस लड़के को देख लेगी। जब उसने लड़के को देखा तो उसके मन में बड़ी उम्र के पति के प्रति जो घृणा के भाव उठे थे वे एक क्षण में विलीन हो गए। उसने शादी के लिए अपनी स्वीकृति दे दी।

शाम का धुंधला हो चला था। बादलों की घटाटोप से जल्दी ही अँधेरा फैल गया। राज ने बत्ती जलाई। तभी जोरों से वर्षा होने लगी। ठण्डी हवा का एक झोंका राज को आनन्द की हिलोर दे गया। वह उठकर खिड़की के पास आ खड़ी हुई। खिड़की से होकर नन्ही-नन्ही फुहारें आ रही थी। छोटी-छोटी बूंदें उसके मुख को आ चूमतीं। यह उसे बड़ा भला लग रहा था। हृदय हल्का और प्रफुल्लित होने लगा। मन में एक आनन्ददायक भाव झलकने लगा।

उसने अपने पति की ओर देखा। वह अभी तक होम्योपैथी की पुस्तक में डूबा हुआ था। उसके मन में आया वह दौड़ कर जाय और कहे—देखिये—बाहर वर्षा हो रही है—कितना सुहावना मौसम है? लेकिन दूसरे ही क्षण उसके अन्दर शर्म की लहर दौड़ गई। उसे उनसे बात करने में ऐसा संकोच हो रहा था जैसे किसी गैर मर्द से बात करने में होता है।

राज कब से खाना परोस कर बैठी थी कितनी बार उनसे खाने के लिए कह चुकी थी। लेकिन वे थे कि पुस्तक छोड़ने का नाम ही न ले रहे थे। राज खीझ कर बोली—कब से खाना परोस कर रखा है। अब उस किताब का पीछा छोड़ेंगे भी कि नहीं? सारे दिन तो दफ्तर में फाइलों से माथा पच्ची करते रहते हैं, और घर आकर किताब के पीछे। गुस्से में वाक्य अधूरा ही रह गया। वह कुर्सी पर आ बैठी चुप चाप। उसके पति ने अपनी किताब में निशान रखा और चुपचाप कुर्सी पर आ बैठा। वे दोनों खाना खाने लगे। बाहर अब भी जोरों की वर्षा हो रही थी।

भोजन करते हुए उसके पति ने होम्योपैथी और ऐलोपैथी की बहस शुरू कर दी थी। उनकी बातों से राज के पल्ले कुछ भी नहीं पड़ रहा था, वह तो केवल हूँ हूँ करती जा रही थी।

ऐसी उकता देने वाली बातें सुन-सुन कर उसके कान पक गए थे। जल्दी-जल्दी खाना खाकर वह चौके में बर्तन रखने चली गई। उसके पति ने फिर अपनी होम्यो पैथी की किताब खोल ली थी और उसमें ऐसा डूब गया था जैसे किशोर बालक जासूसी उपन्यास में खो जाता है। राज खिड़की के पास आ खड़ी हुई। वह बरसते पानी की

बूंदों को अलसाई आंखों से देखने लगी। बाहर कुछ देर से खट-खट हो रही थी। उसने सोचा शायद हवा से दरवाजे टकरा रहे होंगे। परन्तु अब आवाज साफ सुनाई देने लगी। राज ने पति की ओर देखा वह किताब में मग्न था।

'बाहर कोई है।' उसने ऊंची आवाज में पति से कहा। किताब से आँखें हटाते हुए बोले—'लगता है—बाहर कोई दरवाजा खटखटा रहा है।' उन्होंने किताब में निशान रखा और उठ कर दरवाजा खोला।

'अरे वाह सुरेश तुम कैसे?' फौजी लिबास में आने वाले युवक को उन्होंने खुशी में अपनी बाहों में समेट लिया।

सुरेश राज के निकट पहुंचते हुए बोला—'मामी जी नमस्ते'—साथ ही दोनों हाथ जोड़ दिए। उसके होठों पर मधुर मुस्कराहट तैर रही थी। मामी शब्द सुन कर राज के अन्दर एक हल्की सी शर्म की लहर दौड़ गई। उसने संकोच से हाथ जोड़ दिए। दूसरे ही क्षण उसके अन्दर बड़प्पन का भाव आ कर गुदगुदा गया।

सुरेश उसके पति का भानजा आज पहली बार उससे मिल रहा था। सुरेश अपनी यूनिवर्सिटी की तरफ से लगे एन० सी० सी० के कैम्प में यहां पहुंचा था। बारिश से वह पूरी तरह भीग गया था। उसने मामा के कपड़े पहने और बोला—'आज से वर्षा का श्रीगणेश हो गया है। आज तो हद कर दी थी गर्मी ने। इतनी गर्मी मैंने कभी नहीं देखी थी। पर देखिये तो? वर्षा की पहली बौछार ने वातावरण कितना ठण्डा कर दिया। ठण्डी ठण्डी हवा दिल को ठण्डा कर रही है।' फिर वह बातों ही बातों में बोला—'मालूम पड़ता है आप लोग खाना खा चुके हैं पर मामी जी मुझे तो भूख बड़ी जोरों की लगी है।' सुरेश की बातें सुनकर गृहिणी राज को एक झेंप सी महसूस हुई। दूसरे ही क्षण वह मुस्कराती हुई चौके की ओर उठ खड़ी हुई। राज को सुरेश का यह बातूनीपन अच्छा लगा। उसके जी में आया कि वह सुरेश की बातें सुनती ही रहे, सुनती ही रहे। चौके में खाना बनाते हुए भी राज के कान मामा भानजे की बातों की ओर लगे थे।

खाने का सिलसिला टूटा तो सुरेश रसोई में आ धमका। 'मामी जी मुझे बताइये ना मैं कुछ काम में हाथ बटाऊं।' राज कोई उत्तर देती इससे पहले ही वह अल्मारी में प्लेटें निकालने लगा।

'आप यह क्या करते हैं?' राज ने जल्दी में प्लेटें उसके हाथ में छीन लेने के लिए अपने हाथ बढ़ाए परन्तु एक अज्ञात झिझक के कारण उसका हाथ रुक गया। अपनी झिझक को छिपाने के लिए वह ऊंचे स्वर में बोली—'इधर आकर देखिए न। सुरेश क्या कर रहा है।' उसका इशारा था कि अपनी होम्योपैथी की पुस्तक में ही डूबे होने पर उन्होंने रसोई के सामने आकर जब देखा राज को बड़ा आश्चर्य हुआ। 'आप देखिए न देखिये प्लेटें साफ करने लग गए हैं।' पर जाकर क्या कहना—मामी मेरे से काम भी करानी रही हैं।' शिकायत के स्वर में राज ने कहा।

सुरेश खाना खाते हुए पलंग पर लेटे अपने मामा से और पास में बैठी मामी से बातें करता रहा। खाते-खाते ही वह बोला, 'मामा जी आपके हाथों में तो कोई जादू है

है, इतना स्वादिष्ट भोजन आधे घंटे म तयार करना—कमाल ही है।

राज न इस घर म आज पहली बार अपने बनाए भोजन की प्रशंसा सुनी थी। उसे पता था वह खास अच्छा खाना नही पका सकती। सुरेश जसे जसे प्रशंसा करता, राज को शम सी लगती।

सुरेश कप की मजेदार घटनाओं का वणन करने लगा। मामा जी भी उनकी बाता म शामिल हो गए। वह कम्प के उस्तादों और कप्टनो की ऐसी नकल करता कि राज हसते-हसते लोट पोट हो जाती। इसी तरह बडी देर तक कमरे म हँसी का स्वर गूजता रहा।

बाहर अब भी वर्षा हो रही थी। कभी कभी बिजली की चमक भी दिखाई दे जाती, बादलो की गजन का आवाज आती और राज को भय सा लगता। जब जोर की बिजली कडकी तो राज बोल उठी—आप मामा भानजे इकट्ठे मत बैठिये। बाहर बिजली कडक रही है। राज की बात सुन सुरेश जोर का ठहाका मार कर हस पडा। बोला, मामी तो पूरी पुराण-पंथी है। और वे तीनो हँसने लगे।

सुरेश अब राज के घर आने जाने लगा। वह जब आता तो घर म एक चहल पहल सी आ जाती। उसकी बातें सुन-सुन कर राज के पेट म हँसते हँसते बल पड जाते। वह कहती—बस करिये—थोडा झूठ कम बोला करिए। मामी जी आप मानो या न मानो बात बिल्कुल सत्य है। और वह कोई नया किस्सा शुरू कर देता और राज बस हँसती ही जाती हसती ही जाती। कभी वह बोल उठता—मामी जी, आप भी कुछ सुनाइये न—राज को कुछ सूझता नही वह क्या सुनाए?

कुछ दिन बीतने पर तो वह सुरेश की नई नई बातें सुनने के लिए सारा सारा दिन प्रतीक्षा करती रहती। कभी कभी तो उसे अपने आप पर आश्चय होता—उसे इतनी बातें करना कसी आ गई।

वह सोचती—एस लडके के साथ रहने से तो गूगी लडकी भी बातूनी बन जाय।

मामी जी आज पिक्चर चला जाय, सुरेश आते ही बोला। वह पिक्चर बिल्कुल पसद नहीं करते—। उनकी बात छोडिये। आपको पसन्द है या नहीं? उनसे पूछ देखिये मुझे जाने म कोई उजर नही। परन्तु व जायेंगे नही।'

—और वे तीनो पिक्चर देखने गए।

दूसरे दिन कोई बात छिडी तो वे बोल उठे—'सुरेश तो बिल्कुल बच्चा है। बालको जसी चपलता उसम से गई नही। भला इन पिक्चरो म रखा ही क्या है? एम०ए० म पढता है पर अभी गभीरता छू तक नहीं गई। बात-बात पर हँसने लगता है। इतना पढ लिखा होने पर भी अभी कोई बात बना नही।

सामने कुर्सी पर बैठी राज मन म सोचती रही सारी बात तो होम्योपैथी की किताब पढने म ही बनती है। उसका मन भारी हो गया।

मामी जी आप लम्बी बिन्दी क्यो नहीं लगाती? लम्बी बिन्दी से तो आप और अच्छी लगेंगी। तयार होती मामी को वह सुझाव देता। इस साडी के साथ यह ब्लाऊज अच्छा लगेगा। आप पाउडर की पिंक शेड लगाया करें। राज ०९।७

इन धागों द्वारा बाँधा न उसकी छवि किसी आवरण बना दी थी जिसका उसने कभी कल्पना भी नहीं की थी। वह सोचता—इस युवक को इस साधारण-सी लड़की मिल जाय तो क्या न उसे गुणगान के परी समझे जायें? क्या न वह तितलियों की तरह हर समय फुदकता रहे?

वह लम्बी फन की तरह खिल उठती है जब उसके नखरों का बोझ उठाने के लिए मनभावन पति मिल जाय। वह लड़की कितनी भाग्यवान होगी जो इसकी जीवन संगिनी बनेगी।

—फिर जब उसे अपने पति का ध्यान आया तो वह मन-ही मन खीझ उठी।

सुरेश आता और अपनी छोटी छोटी शरारतें शुरू कर देता। उस दिन राज बैठी मशीन पर कुछ सी रही थी।

'मामी जी पानी!' आते ही सुरेश बोला।

'एक मिनट ठहरो, देती हूँ।'—राज जल्दी-जल्दी मशीन चलाने लगी।

'पानी राज मामी' कुछ खीमते हुए ऊँचे स्वर में वह बोला।

वह मशीन से उठने ही वाली थी कि पानी के कुछ छींटे उस पर आ पड़े। वह सकपका उठी। उसने नजर उठा कर देखा सुरेश हँस रहा था। 'लीजिए—मामी जी! पानी!'

राज के सारे कपड़े गीले हो गए थे। राज को सुरेश पर बड़ा गुस्सा आया लेकिन वह सिर्फ मुस्करा भर रह गई।

अचानक सुरेश ने देखा वह भरी बाल्टी लिए आ रही है। वह उसकी चाल समझ गया। जल्दी से पास पड़ी हुई दवात का ढक्कन खोल उसने स्याही अपने हाथ पर पोत ली। वह राज की ओर झपट पड़ा। राज बाल्टी वहीं छोड़ ड्राइंग रूम की ओर दौड़ी। राज और वह कितनी देर दौड़ते रहे—कितने चक्कर दिये राज ने? आखिर सुरेश ने उसे पकड़ ही तो लिया। पलंग पर गिरी राज अपने मुँह को दोनों हाथों से ढके हुए थी। वह कभी एक हाथ काबू कर लेता तो राज दूसरा छुड़ा लेती। राज के दोनों हाथ उसके काबू में नहीं आ रहे थे। इस कशमकश में दोनों की साँस फूल गई। साँसें एक दूसरे को छू रही थीं। सुरेश ने आखिर उसके दोनों हाथ अपने एक हाथ में काबू कर लिए। राज बिल्कुल निढाल हो गई। उसने महसूस किया कि सुरेश उसके बहुत निकट आ गया है।

'जाइए माफ कर दिया।' उसने दोनों हाथ छोड़ते हुए कहा। राज क्षण भर के लिए उसी तरह आँखें मूँदे पड़ी रही। इस निकटपन के अनुभव से वह लज्जित सी हो गई। उसका चेहरा लाल हो गया। उसने सुरेश की ओर देखा वह एक जिद्दी बच्चे की तरह चुपचाप सामने खड़ा था।

सुरेश घर पर पाँव रखता तो राज उसके मन के भाव पूरी तरह ताड़ लेती कि आज सुरेश खुश है या उदास अथवा कुछ अशांत है।

आज वह आया तो राज बोल उठी—'आज बहुत सुस्त नजर आते हो क्या बात है?'

मामा जी आप को कम पता चला कि मैं '

राज हँसती हुई बोली— ज्योतिष भी जानती हूँ। और व दोनो हँसने लग। कुछ समय पश्चात् राज एक छोटी शीशी उठा लाई। 'यह कालीफास खा लो, तबीयत ठीक हो जाएगी।

मामी जी, आप तो होम्योपथिक भी जानती हैं ?'

यह सुनकर राज को एसा लगा कि जस सुरेश न उसकी दुखती रग पर हाथ रख दिया हो। वह बहुत देर तक यही सोचती रही—यही होम्योपैथी है जिसम उसके सुख-दुख दोनो निपटे हुए हैं।

शाम को वह दूसरे ढग स सोचने लगा—यह लोग भी कितन अच्छे होते हैं। जो अन्दर हैं वही बाहर भी। जो दिन म होता है वही भाव चेहरे पर प्रकट हो जाता है। सुरेश इसीलिए शायद अच्छा लगता है। बिल्कुल सीधा। एक आदमी की पत्नी तो रोज अपने पति स शर्तें लगाती रह कि आज आप नाराज से दिखाई देते हैं, जरूर कोई बात है—आज आप उदास स दिखाई देते है नहो ? लगाइए शत और वह हर शत जीतती जाए। उसे अपने पति का ख्याल आया जिसके बारे म वह कोई शत नहा लगा सकती थी।

उस दिन सुरेश न आज ही बाजार चलने की जल्दी मचाई। अभी वे बाजार पहुचे ही थे कि बूदाबादी शुरू हो गई इसलिए घर पहुचने म उन्हें काफी देर हो गई थी। राज को तो उनका डर खाए जा रहा था। वह रास्ते भर सोचती रही कि वह खूब गुस्सा होगे। वे दोनो घर पहुचे तो वह दफ्तर से आ कर उनकी राह देख रहे थ। सुरेश न मामा जी स देरी हो जान की बात छेडी पर वह कुछ नही बोल।

दूसरे दिन उनका एक मित्र शाम को उनस मिलन आया। परन्तु वह दफ्तर से अभी तक नही लौटे थे। मित्र बडी देर तक प्रतीक्षा करता रहा। प्रतीक्षा करते-करते वह ऊब गया और आखिर बिना मिले ही चला गया।

आज आप बडी देर स आए ह। आप के एक मित्र मिलन आए। देखते-देखते अभी गए है।

तुम्हे किसने कहा है कि कोई आए तो घर पर बठाया करो ? आइदा मरे पीछे यहा कोई नही

राज क मन म कल सुरेश के साथ बिना उनकी आज्ञा के जाने का ख्याल उभर आया। अचानक उसक मुह स निकल पडा।

सुरेश भी आए

हाँ वह भी उन्होंने बीच म ही बात काट दी।

रसोई म काम करती राज की आँखें रह रह कर डब-डबा आती। उसका ध्यान सुरेश के कल आने की ओर बरबस चला जाता। अगर सुरेश अपने मामा की गैर-हाजिरी म आया तो उसके लिए क्या वह दरवाजा नही खोलगी ? यह विचार उसके मस्तिष्क म चक्कर काट रहा था। उस कुछ सूझ नही रहा था।

रात को भी इस विचार ने उसका पीछा नही छोडा। बडी दुविधा म थी वह।

आज दोपहर से आकाश में बादल मँडरा रहे थे। हवा बड़ी जोर की चल रही थी। खिड़कियाँ दरवाजे हवा के झोंकों से बज उठते थे। कभी कभी ऐसा लगता मानो बाहर कोई दरवाजा खटखटा रहा हो। राज को सारा दिन ऐसा लगता रहा जैसे बाहर कोई दरवाजा खटखटा रहा हो और फिर आवाज सुनाई देने लगती— राज भाभी दरवाजा खोलिए और उसकी जान काँप जाती। हर बार उसका हाथ मस्तक पर होता। उसे याद आता उसे तो दरवाजा खोलने की आज्ञा नहीं है। दफ्तर से जब वे लौटे तब कहीं उसकी जान में जान आई। अब उसकी घबराहट कम हुई।

रिमझिम मेंह बरस रहा था। हवा बिल्कुल रुक गई थी। वे खाना खा कर उठे ही थे कि सुरेश आ गया। कितनी देर तक सुरेश बैठा रहा। वह हैरान था कि आज कोई बात जम ही नहीं रही थी।

बाहर कभी कभी बिजली चमक जाती जिससे बाहर की प्रत्येक वस्तु साफ नजर आ जाती। बिजली के प्रकाश में बाहर पेड़ के पत्ते स्थिर दीख पड़ते। आज वातावरण में अजीब घुटन सी थी। सुरेश रूमाल से पसीना पोंछता रहा। वह उदासी लेते हुए बोला— भाभी जी, आज मौसम को क्या हो गया है ? इतनी उमस कहाँ से आ गई है।

राज को कोई उत्तर सूझा नहीं वह चुपचाप डबडबाई आँखों से गुसलखाने में चली गई। वह कितनी देर तक गुसलखाने में गुमसुम खड़ी रही।

एक माँग, एक गिला, एक नश्तर

जगजीतसिंह, १९३४

जगजीतसिंह भी काफी समय से लिख रहे हैं परन्तु लिखा अधिक नहीं है। ये भी उन लोगो में हैं जो न लिखना चाह कर भी लिखते है, क्योंकि लिखना उनकी मजबूरी है। जगजीतसिंह ने इस मजबूरी का अहसास कर लिया है और अब कुछ अधिक गभीरता और सक्रियता से लिख रहे है।

जगजीतसिंह की हिन्दी उर्दू मे भी काफी कहानियाँ छपी है और कुछ कहानियो का अनुवाद मराठी और गुजराती आदि भाषाओं में भी हुआ है।

छ वर्ष पहले मैं ने भाभी का जो साडी देने का वचन दिया था वह मैं पूरा न कर सका। और इस [redacted] बरस के समय में वह साडी पहले तो केवल एक माग थी, फिर एक गिकवा बन गई और अब मुझे वह एक नश्तर बन कर चुभने लगी थी। छ साल का समय भी कुछ कम न था। मगर मैं लाख चाहने पर भी अपने वचन को पूरा न कर सका था और उस दिन भी जब मैं भाभी के घर उसे मिलने गया तो उसने कहा—'रमेश, अगर तुम्हारे पास साडी खरीदने के लिए पैसे नहीं हैं तो मुझ से उधार ले जाओ।

और यह बात मेरे सीने पर एक नश्तर के समान लगी और मैंने निर्णय कर लिया कि कुछ भी हो भाभी की साडी का अनुरोध अब पूरा करके ही छोडूँगा।

वस मिसेज नारग मेरी भाभी न थी। मगर उनके पति मिस्टर नारग मेरे एक बडे अच्छे मित्र थे। बेशक आयु में मुझ से कुछ बडे थे, लेकिन फिर भी हम दोनो में

काफी प्रेम था। छः साल पहले वह हमारे पड़ोस माहिम में रहते थे। नारंग साहब एक्सपोर्ट का काम करते थे। स्वयं तो बड़ी रंगीन तबीयत के धनी थे ही, उनकी पत्नी भी सोने पर सुहागा थी। कुछ ही दिनों में हमारे सम्बन्ध कुछ इस प्रकार बन गए कि हम अपने पराये बनकर 'अपने' ही होकर रह गए थे। उनकी पत्नी मुझे अपना देवर समझने लगी और मैं उन्हें अपनी भाभी। उस वक्त मैं अपनी एम० ए० की पढ़ाई कर रहा था। यह लोग मेरी पढ़ाई में और विशेषकर एम० ए० की परीक्षा में सफलता चाहते थे। मैंने परीक्षा दी और परीक्षाफल निकलने से कुछ ही दिन पहले मिसेज़ नारंग कहने लगी— 'रमेश देखो। मैं दिन रात तुम्हारी सफलता के लिए प्रार्थना करती हूँ। अगर तुम पास हो जाओ तो मुझे एक बढ़िया सी साड़ी तो ले दोगे न?'

'तुमसे क्या साड़ियाँ अच्छी हैं भाभी? एक क्या हजार ले लेना।'

'लेकिन मुझे तो एक ही ले दोगे तो बहुत है।' भाभी ने कहा।

उसी शाम जब हम घूमने के लिए फोर्ट में गए तो भाभी ने मुझे अपनी पसन्द की हैण्डलूम की एक आसमानी रंग की साड़ी दिखाई, जिसके बार्डर पर गुलाबी रंग में कुछ कढ़ाई का काम किया हुआ था। भाभी कहने लगी— 'बस यही साड़ी लेनी है मुझे। भूल मत जाना।'

मैंने आँख बचा कर साड़ी का मोल पढ़ा। साड़ी की कीमत लगभग तीस रुपये थी।

परीक्षाफल निकला। मैं एम० ए० में अच्छे नम्बर लेकर पास हो गया। कुछ ही दिन पश्चात् मुझे पूना में प्रोफेसर की नौकरी भी मिल गई। लाख चाहने पर भी मैं भाभी का अनुरोध पूरा न कर सका। कई बार मैं पूना से बम्बई आया। जीवन के बाकी सब काम होते रहे, मगर यह साधारण सा काम ही एक ऐसा काम था जो मैं पूरा न कर सका। कभी पैसे होते तो खरीदने का 'मूड' न होता, कभी खरीदने का 'मूड' होता तो पैसे न होते। कभी मैं बम्बई आता तो भाभी के घर न जा सकता। मेरे बहुत चाहने पर भी पूरे छः वर्ष बीत गए और मैं भाभी को साड़ी लेकर न दे सका।

इन छः वर्षों में कितने परिवर्तन भी तो हो चुके थे। मिस्टर नारंग अपने व्यापार में दिन दुगुनी और रात चौगुनी रकम बनाने लगे और परमात्मा भी जब देता है तो छप्पर फाड़ कर देता है। मिस्टर नारंग की आर्थिक दशा के बारे में यह बात बिलकुल सच थी। छः सालों में मिस्टर नारंग लखपति बन गए। वह माहिम से मालाबार हिल पर जाकर रहने लगे। पहले वह बस या गाड़ी में सफर करते थे, अब उनकी अपनी दो कारें थीं। एक उनके अपने लिए और एक भाभी के लिए। घर में टेलीफोन था, रेफ्रिजरेटर था, फ्लैट के दो कमरे एयरकंडीशन्ड थे, हर काम करने के लिए नौकर थे, घर का खाना पकाने के लिए, सफाई के लिए, कपड़े धोने के लिए, उनके दो छोटे-छोटे बच्चे थे और उनके लिए भी दो नौकर थे। घर में पाँव रखते ही यों लगता था जैसे कोई स्वर्ग में आ गया हो। इन परिवर्तनों के साथ ही साथ मिसेज़ नारंग में भी कुछ परिवर्तन आया था, यह मैं न जान सका। परन्तु अब वह एक से बढ़कर

एक कपड़ा पहनती तो हर वक्त बन-सँवर कर बैठती। बाल बने-सँवरे होते, होंठो पर लिपस्टिक लगी होती, नाखूनो पर नेल पालिश, पहले अगर भाभी को सादगी से प्रेम था तो अब उन्होंने यह बात कहते सुना है—"वह मनुष्य ही क्या हुआ जो अपने हालात और वातावरण के साथ अपने आप को न बदले ?" परन्तु इन परिवर्तनो के बावजूद भी भाभी उस साडी के वचन को न भूली थी। जब कभी मैं जाता तो बातो-बातो मे भाभी कह ही देती— देखो रमेश अब मैं साडी के लिए आखिरी बार कह रही हूँ।'

एक बार फिर गया तो कहने लगी 'अच्छा रमेश लो देख लो आज मैंने साडी के बारे मे कुछ नही कहा।'

उसके बाद जब मैं गया तो कहने लगी—'रमेश तुम समझते होगे कि मैं उस साडी के बारे मे भूल गई हूँ ? लेकिन ऐसा कभी भूल से भी न सोचना। मैं तो प्रति-दिन इसीलिए दस बादाम की गिरियां खाती हू कि कही भूल न जाऊँ कि तुम मुझे साडी ले दोगे।

भाभी की यह माग अब माग से कही अधिक एक शिकवा थी एक गिला थी। परन्तु इस शिकवे मे भी मुझे कुछ 'अपनापन' ही दिखाई देता था और मैं सोचता भाभी कितनी अच्छी हैं। भाभी अब तक भूली ही नही

उस दिन मैंने सोचा—आगामी मास का वेतन पाते ही भाभी की साडी ले आऊँगा और हमेशा हमेशा के लिए इस शिकवे को एक हकीकत मे बदल दूँगा। मगर पहली तारीख से पहले ही मुझे चाचा की मृत्यु का समाचार पाकर पजाब आना पडा। जब मैं वापिस आया तो भाभी की साडी की माग एक चट्टान के समान वही की वही खडी थी। देखते-देखते दो-तीन महीने और बीत गये। अब मैं भाभी के घर जल्दी जा भी नही सकता था क्योंकि मैंने निश्चय कर लिया था कि अब तो मैं भाभी को तब ही मिलने जाऊंगा जब हाथ मे साडी होगी।

थोडे ही दिन बाद जब मैं किसी काम से बम्बई गया तो बाजार मे मिस्टर नारंग से अचानक भेंट हो गई। मुझे वह जबरदस्ती पकड कर घर ले गए। वहा गये तो भाभी कहने लगी— देखो अगर साडी के पैसे नहीं है तो उधार ले जाओ। धीरे धीरे उतार देना।

भाभी के इन शब्दो ने मुझे नगा करके रख दिया था। मैं मध्यम श्रेणी का एक व्यक्ति ही तो था जो बहुत चाहने पर भी एक छोटी सी माग को पूरा न कर सका था। मुझे भाभी की यह माग गिले से कही अधिक एक नश्तर बनकर लगी और मुझे बहुत दुख हुआ। मैं उस वक्त कुछ ज्यादा दिन रहने के लिए बम्बई आया था। मैं उसी वक्त माहिम अपने घर पर गया। मेरी कुछ कानून की पढाई मे सम्बन्धित किताबें थी जो मैंने दो वर्ष पहले खरीदी थी और वे अभी तक मैंने पढ़ी भी न थी। मैंने उन्हें उठाया। बाजार गया और उन्हें बेच दिया। किताबें बेचकर मुझे तीस रुपये मिले। मेरी जेब मे भी कुछ रुपये थे। मैं उसी वक्त हैण्डलूम-हाउस गया। वहाँ जाकर मैंने बहुत सी साडियाँ देखी और बहुत सी साडियाँ देखने के बाद मुझे वही

साड़ी मिल गई जो ठीक [redacted] वैसी पहले भाभी ने पसंद की थी। मैंने वही साड़ी ले ली। उसे डिब्बे में बन्द करवाया और सीधा मालाबारहिल भाभी के घर गया।

वहाँ पहुँच बेल बजाई। दरवाजा खुला और भाभी ने हल्की सी मुस्कराहट से मेरा स्वागत किया। मैंने कहा—'भाभी जरा आँखें तो बन्द करो।' भाभी ने आँखें बन्द कीं। मैंने डिब्बा खोला और साड़ी निकालकर कहा—'भाभी यह देखो। यही है न वह साड़ी जिसके लिए तू छः साल से मुझे कह रही थी।'

भाभी बीच में ही बोल पड़ी—'हाँ माँ। ठीक है। अब तो तुम्हारे मुँह में भी जबान आ गई। अब साड़ी ले जो आए हो। रख दो इस मेज पर।'

इसके पश्चात् मैं कुछ समय और वहाँ टिका। भाभी ने मुझे साड़ी के बारे में कुछ न कहा और चुपचाप बैठी रही। भाभी की बातचीत में भी मुझे कुछ पहले जैसी मिठास न लगी और मैं जल्दी ही माहिम अपने घर लौट आया।

उस दिन के चार ही दिन बाद मुझे पूना जाना था। मैंने सोचा चलो जाने से पहले भाभी से मिलता जाऊँ। इस विचार से मैं मालाबारहिल गया। मैंने फ्लैट के बाहर खड़े होकर घंटी बजाई। थोड़ी देर बाद दरवाजा खुला। सामने भाभी के घर काम करने वाली आया छोटे पप्पू को उठाए खड़ी थी और उसने हल्के नीले रंग की साड़ी पहन रखी थी जिसके बार्डर पर गुलाबी रंग के फूलों की कढ़ाई थी। उस साड़ी में 'आया' को देखकर मेरी आँखें फटी की फटी रह गईं। यह साड़ी वही थी जो मैंने चार दिन पहले भाभी को दी थी।

अन्दर से भाभी की आवाज आई—'सावित्री कौन है?'

लेकिन उत्तर सुनने के पहले ही मैं वहाँ से वापिस आ गया। रास्ते पर चलते हुए मुझे कुछ इस प्रकार प्रतीत हो रहा था जैसे भाभी की माँगें और उसके गिले बहुत तेज नश्तर बन गए हों। और इससे भी बढ़कर मुझे ऐसे लगा जैसे भाभी की माँग और उसके गिले बहुत बड़े और भारी पत्थर हों जिनसे बाँधकर मुझे किसी बहुत ही गहरे सागर में फेंक दिया गया हो और मैं सागर की उस गहराई में जिसकी कोई सीमा न हो नीचे बहुत नीचे और उससे भी नीचे उतरता चला जा रहा हूँ।

अपनी-अपनी सीमा

जसवन्तसिंह विरदी, १९३४

जसवर्तसिंह विरदी पजाबी की नई कहानी के निमा ताओ म से एक हैं। महानगरो के यात्रिक जीवन म पिसते हुए निम्न मध्य-वर्गीय परिवारो की मूल्य बद्धता और मूल्य विघटन के द्वन्द्व का वस्तु सार्थक चित्रण विरदी की कहानियो म हुआ है।

प्रकाशित कहानी-संग्रह पीड पराई', आपणी आपणी सीमा।

बाहर का गेट खोलकर फूलो और लताओ के पास से होता हुआ जब मैं आगन मे पहुचता हू दरशी का गुलाबी चेहरा मधुर मुस्कान के साथ मेरा स्वागत करता है। उस वक्त या तो वह घर की सफाई करने म लगी होती है या सीने पिरोने क काम मे—लगता है जैसे काम के बिना उस का जीवन सार्थक न हो सकता हो। वह कोई भी काम कर रही हो मुझे देखते ही उसे सभी काम भूल जाते हैं जैसे वह सुबह से मेरा ही इतजार कर रही हो। जिन्दगी का हर पल मेरे ऊपर न्योछावर करने के लिए वह तयार हो जाती है। उस वक्त जब वह अपने प्यार परिपूर्ण पोरो से मेरी देह का स्पर्श करती है और मेरे कपडो को खूटियो पर लटका देती है उस वक्त ऐसा प्रतीत होता है जसे सारे दिन की यातनाओ की पीडा के विष को शिव रूप धारण कर स्वय ही पी जाना चाहती हो। उस वक्त मैं एक अलौकिक मस्ती के आलम म होता हूँ। मुझे लगता है जैसे मैं सत्य-खड म विचर रहा होऊँ। सत्य-खड म रहने वाले लोग क्या मेरे से ज्यादा सुखी होगे? यह एक ऐसा स्वर्ग है जहाँ मैं इन्द्र हूँ और दरशी मेरी अलका मुस्कराते फूल और दरशी। मेरी अलका।

पर पिछले कुछ अरसे से दरशी मुझ से मेरा यह स्वर्ग छीन लेना चाहती है।

शाम की चाय उधेड़बुन में ही खत्म हो जाती है। इससे पहले कि मैं उस को सारे दिन में अपने रोज़नामचे में से कोई दिलचस्प बात सुनाऊँ—वह पहले ही अपनी बात सुनाने के लिए तैयार होती है। बहुत सी इधर उधर की बातों की भूमिका के बाद वह कहती है— वह है न आप के दोस्त सब्भरवाल की पत्नी कीर्ति।

हाँ। क्या हुआ कीर्ति को ?

उस को भी स्कूल में सर्विस मिल गई है।

अच्छा ! बहुत बुरा हुआ मैं जल खीझता हुआ कहता हूँ।

बुरा क्यों हुआ ? वह भी तल्ख हो जाती है। पर मैं तल्खी के वातावरण को सहज बनाने के लिए कहता हूँ—

बस तुम बुरा ही समझो। इस वक्त मैं बहुत कुछ कहना चाहता था पर मुझे कुछ भी तो नहीं सूझता और मैं बेमतलब इधर उधर की लगाता हूँ।

देखो न मेरी दरशी औरतों का नौकरी करना बड़ा खतरनाक है। आज जितनी बुरी हालत नौकरी-पेशा औरतों की है वैसी और किसी की नहीं।

क्यों ?

तुम देखती ही हो कि बसों में औरतों का कितना बुरा हाल होता है। अगर वर्षा के दिन हों तो कहर ही तो है।

वर्षा क्या सारा वर्ष होती है ?

सारा वर्ष तो नहीं पर सारा वर्ष कोई न कोई मुसीबत वर्षा के समान आती ही रहती है और और

मेरी इन निरर्थक बातों के आगे उसे हथियार डालने पड़ते हैं। उस का चेहरा उतर जाता है और लगता है जैसे नयनों के कोरों में खारा पानी छलक रहा हो। इस वक्त लगता है जैसे उस की नौकरी करने की आकांक्षा छटपटा कर आत्महत्या कर रही हो—क्या मैं इतना ज़ालिम हूँ ?—नहीं।

और मैं उसकी तसल्ली के लिए कहता हूँ— मेरी प्यारी मैं भले ही औरतों की नौकरी के पक्ष में नहीं हूँ पर मैं लगातार कोशिश करता हूँ कि तुम्हें नौकरी मिल जाए। मैं जानता हूँ कि तुम सारा दिन घर में अकेली बोर हो जाती हो। नौकरी करने से तुम्हारा व्यक्तित्व भी तो विकसित हो जाएगा—है न ?

और मैं फिर कागज़ी फूलों को खिलने देता हूँ। यानी इस वक्त मैं प्रेम दृष्टि से उस की ओर देखता हूँ और वह खुश हो जाती है।

बेचारी औरत !

जिस दिन से उसने एम्ब्रायडरी डिज़ाइनिंग की ट्रेनिंग ली है वह नौकरी के सिवा और कुछ सोच ही नहीं रही। नौकरी करने की आकांक्षा उस की नस नस में समा गई है।

कई बार जब हम लान में बैठे होते हैं और घर के आगे से अचानक ही कोई प्रसन्न खिलखिलाता और चहकता हुआ झुण्ड जाता निकल जाता है तो दरशी की दृष्टि

उसी बिन्दु पर केंद्रित हो जाती है—यह औरत अपने पति के कदम-से कदम मिला कर बड़े अभिमान से चल रही नजर आती है। उस का कद अपने पति से छोटा होते हुए भी वह अपने कद-काठ में पति के समान लगती है। मेरे बोलने से पहले ही दर्शी कहेगी—'यह औरत जरूर नौकरी करती होगी।

'तुम्हें कैसे पता चला ?'

जब तक औरत नौकरी नहीं करती, उस में स्वाभिमान की भावना उभर ही नहीं सकती।

और फिर वह दूर जा रहे उसी जोड़े की ओर देखती हुई नजर आती है। मैं कल्पना में ही अनुभव करता हूँ जैसे वे दूर जाने वाले पति पत्नी मैं और दर्शी हों। फिर मैं कल्पना करता हूँ कि यदि दर्शी को नौकरी मिल जाए तो उस में कितना स्वाभिमान उभर आएगा। उस चाल में कितनी दृढ़ता आ जाएगी। शायद उस का व्यक्तित्व मेरे जीवन पर हावी ही हो जाए और मैं दब जाऊँ ? इस बिन्दु पर आ कर मेरी विचार शृंखला चटक जाती है और मुझे महसूस होता है कि दर्शी के साथ चलता हुआ मैं जैसे निरीह सा लग रहा होऊँ। मैं सूखे पत्ते के समान काँप जाता हूँ जैसे मैंने कोई भयानक सपना देख लिया हो। क्या यह सपना सच हो जाएगा ?

इस वक्त भी दर्शी दूर जाते हुए उसी सुन्दर जोड़े की परछाईं को देखती जा रही है। उसकी गर्दन झुकी हुई, आँखें नम, और चेहरे पर काँपती सी जमा आत्म-विश्वास। अभाव की साकार प्रतिमा दर्शी। मासूम और विवश।

इस मूड में वह मुझे बड़ी भली लगी। वह हृदय मेरे लिए कितना शान्तिदायक था ? और मैं खुश हुए बिना न रह सका। मैं मुस्करा पड़ा और हल्की सी हँसी मेरे होंठों से काँप गई। मेरी यह रहस्यमयी अवस्था देख कर दर्शी की समाधि टूट गई और वह छटपटा कर बोली—'आप को क्या हुआ है ?' उस की आवाज काँप रही थी। मैंने खुश हो कर झूठ-मूठ कह दिया—'मैं सोचता हूँ अगर तुम्हें भी नौकरी मिल जाए तो हमारी जिन्दगी भी उसी सुन्दर जोड़े के समान हो जाए और और तुम भी तुम भी

आगे मैं कुछ न कह सका। झूठ बोलना जैसे मेरे लिए मुश्किल हो गया हो—मारक विष। पर दर्शी के तो खुशी से आँसू निकल आए और अत्यन्त प्रसन्न हो कर वह मेरे लिए काफी बनाने के लिए रसोई में चली गई।

कई बार अखबार पढ़ते हुए अचानक ही मेरी नजर एक घटिया सी खबर पर जा कर रुक जाती और मैं कितनी ही देर तक उस पढ़ता रहता—यह खबर एक ऐसी औरत के सम्बन्ध में होती जो नौकरी करते हुए अपने दफ्तर में ही किसी असिस्टेंट से प्रेम-बंधन में बँध कर किसी और शहर भागी जाती है। जब यह खबर चटखार लेकर मैं दर्शी को सुनाता हूँ तो उस का रंग पीला पड़ जाता है हाथ काँप काँप जाते हैं और वह स्वयं जल्दी से अखबार की पंक्तियों पर नजर दौड़ाती है—ज्यों-ज्यों उस के चेहरे का रंग उड़ता है मैं उतना मस्त होता जाता हूँ। और लगता है जैसे दर्शी

बेचनी की सूली पर भटक रही हो। उस को और भी तंग करने के लिए मैं बड़ बटीला वाक्य न कहता हूँ—

माना कि विज्ञान ने बड़ी तरक्की की है। आज इंसान चाँद पर भी पहुँच चुका है। औरतों को बराबरी के हक भी मिल गए हैं, पर क्या लाभ ? जब तक औरतों की जिन्दगी में आचरण की पवित्रता और दृढ़ता नहीं आती—सारी इंसानी तरक्की बेकार है।'

इस बात पर दरशी ठंडे मन से पलंग पर आ लेटती है और कई दिन तक उस के चेहरे पर पतझड़ पसरा रहता है। बगीचे में खिले हुए फूल बेकार लगते हैं। और वर्षा की बूँदों से हमारी जिन्दगी में कोई रोमांस नहीं आता।

पिछले दिनों में तो मैं दरशी की जिन्दगी को दब घुट कर रखने के लिए एक बहुत ही घटिया किस्म की हरकत कर बैठा हूँ और मेरी आत्मा एक जख्मी परिंदे के समान सहमी हुई छटपटाती रहती है।

और एक दिन अचानक ही दरशी हाथ में अखबार पकड़े मेरे सामने आ खड़ी होती है। उस के चेहरे पर गंभीर शांति है जैसे इस सागर में कोई तूफान मचने वाला हो। वह उस दिन वाली खबर का आखिरी पाण्ड पन्ने के लिए मुझे कहती है—पढ़ कर मुझे पता चलता है कि उस दिन असिस्टेंट के साथ भाग जाने वाली वह औरत असल में कोई घरेलू स्त्री नहीं थी। वह तो कोई परित्यक्ता औरत थी जो अपनी कलंकित जिन्दगी को सार्थक करना चाहती थी। मैं फड़फड़ा कर साँस लेने के लिए तड़पता हूँ और दरशी से नजरें चुरा कर जल्दी से फूलों की ओर देखता हुआ कहता हूँ— दरशी ! ये फूल मुझे बगीचे में लगे अच्छे लगते हैं इन की खुशबू को यहीं रहने दो दरशी मेरी प्यारी ! देखो न ।'

पर आज मैं कुछ भी नहीं कह सकता कुछ भी नहीं।

दरशी अभी तक मेरे सामने खड़ी है और मेरी दलीलों के सारे हथियार कुंद कर देना चाहती है। मैं मन ही मन सोचता हूँ कि यह औरत स्वाधीन होकर जरूर एक दिन मेरे मुकाबले में खड़ी हो जायेगी अपने आप को मुझ से उत्तम समझेगी।

मैं फिर उस से नजरें बचा रहा हूँ पर वह हर बार मेरी नजरों को पकड़ लेती है।

कल मैं एम्प्लायमेंट एक्सचेंज गई थी ।'

तुम ? मैं काँप गया।

हाँ, ' उस की आवाज ऊँची होते होते और ऊँची हो गई।

' डीलिंग क्लर्क ने बताया कि बहन जी आप को पिछले हफ्ते इण्टरव्यू कार्ड भेजा था—सिर्फ एक ही कैंडीडेट था क्या कोई इण्टरव्यू कार्ड आया था ?

' हाँ आया था पर मैंने फाड़ दिया असल में मैं मैं '

और मैंने उस को सब कुछ सच सच बता दिया कि मैं क्यों उस को नौकरी नहीं करने देना चाहता।

' दो सौ की नौकरी करके मैं इस घर को और भी सुन्दर बना सकती हूँ।

'पर   पर अब क्या हो सकता है   । छोड़ो ख्याल नौकरी का   । नौकरी जिंदगी म वक़्त बडी चीज नही है ।'

मैं बहुत प्रसन्न था । अपने षडयन्त्र म मैं सफल हो गया था । पर मेरी बात अन-सुनी करके वह उसी दृढता से कहती गई— काड फाडने के वक्त आप ने इण्टरव्यू की तारीख नही देखी शायद । मुझे इण्टरव्यू काड और मिल गया था । आज मैं इण्टरव्यू करके अप्वाइण्टमट लेटर ले आई हूँ ।

वंचिता

गुलज़ारसिंह संधू, १९३५

नई पीढ़ी के कहानी लेखकों में गुलज़ारसिंह संधू का नाम पहली पंक्ति में आता है। पंजाब के ग्रामीण जीवन का चित्रण करने में वह अत्यन्त कुशल हैं। संधू की अनेक कहानियाँ अंग्रेजी हिन्दी तथा अन्य भाषाओं में अनूदित हुई हैं। इन्होंने कुछ अंग्रेजी और हिन्दी उपन्यासों का पंजाबी अनुवाद भी किया है।

संधू की कहानियों का एक संग्रह 'हुसन दे हाणी' नाम से प्रकाशित हुआ है।

इस बार जब नसीब अपनी बहन के विवाह में गाँव आया तो जम्मू वाली बेबे (बूढी चाची) अधरंग से लाचार थी। बेबे का एक हिस्सा बेजान हो चुका था और वह अपने उस हिस्से में किसी अंग को बिना दूसरे हिस्से के अंगों की सहायता के नहीं हिला सकती थी। छोटी उँगली की हरकत तक भी उसके अपने वश में नहीं थी। दिन रात खटिया पर पडी रहती जो उसके बहू-बेटों ने भूसे वाली कोठरी में डाल रखी थी। बेटे तो पहले ही उसके काबू में नहीं थे, पर अब तो बहुएँ भी उसकी बात पर कान न देतीं। भूसे की कोठरी वाली खटिया पर पडी बेबे इस ताक में रहती कि चारों में से कोई एक बहू उस तरफ से गुजरे और वह अपने मन का सारा रोष उस पर निकाल ले। उसे लगता कि जब से वह बीमार पडी है घर का कोई भी काम उस तरह नहीं चल रहा था जैसा चलना चाहिए था। उसे लगता कि भैंस गाय की नाँद पर बाँध दी गई है और गाय बकरी की खूँटी पर। कई बार वह नींद में ही बडबडा

उठती, "इन छौनों को मुर्गियों के दड़बे में क्या ठूंस रहे हो और फिर इस बड़े मुर्गे को मनन की जंजीर क्या डाल रखी है।" कोई आश्चर्य नहीं था अगर वह यह भी सोचती हो कि उसकी छोटी बहू बड़ी बहू की खाट पर जा लेटी है और बड़ी बहू मंझली की खाट पर। पर वह बेबस थी। मन ही मन कुढ़ा करती।

बेबे के बेटों को बेबे के रोग का बड़ा दुख था। किसी ने जंगली कबूतर का मांस खिलाने की राय दी तो उन्होंने आसपास के अन्धे कुओं के सारे कबूतर एक एक कर खतम कर दिए। किसी ने कोई टीका बताया तो उन्होंने जहां तक हो सका टीके भी लगवा दिए। खाते पीते जमींदारी घराने में छोटे मोटे खर्चों में फर्क ही क्या पड़ता था? किसी को बस यह पता चल जाए कि कुछ करने धरने से विपदा निकल सकती है। पर अब तो यह बात बेबे भी जान गई थी कि इलाज किसी के बस का नहीं रहा था। इस निराशा के बढ़ने से वह और भी उल्टी-सीधी बातें सोचने लगती। जो बातें अपनी बहुओं, सच पूछा जाए तो गांव की सारी बहुओं के बारे में उसके दिल में चक्कर काटती रहती थीं अब किसी न किसी रूप में बाहर निकलने लगीं। गांव का कोई भी आदमी उसकी खबर लेने न आता। बहू-बेटे भी रोटी पानी सिरहाने रख एक तरफ हट जाते। अगर उससे कोई बात करता तो ऐसा आदमी जो नसीब की तरह कई महीने बाहर रहकर कभी-कभार छुट्टी पर आता हो।

नसीब को जम्मू वाली बेबे की बात सुनकर बड़ा दुख हुआ। एक चलता फिरता व्यक्ति जो गांव के हर जीव की खबर लेकर ही पूरी नींद सो सकता था कैसे सारा दिन खटिया से लगकर पड़ा रह सकता है। नहीं तो कौन सा मातम था जिसकी अगुआ बेबे न होती? कौन सा कारज था जिसमें उसकी राय न ली जाती? कौन सी दीवार थी जो बिना उसकी राय के बनाई गई हो? कौन सा कुआं था जिसका खड़ पटता अपनी आंखों से न देखा हो? चकबन्दी के दिनों में उसे भूमि के चप्पे-चप्पे की कीमत का ज्ञान था। यहां तक कि एक एक कुएं अथवा एक एक पेड़ का जो मोल आंका था वह उस के दिल पर खुदा था। यह उसी की हिम्मत थी कि उसने अपने बेटों के लिए बढ़िया-से-बढ़िया जमीन में जगह बना ली थी। उसे यह भी मालूम था कि स्कूल का मास्टर किस लड़की की ओर देखकर गुजरता है या गांव के पटवारी का किस के घर में आना-जाना है। बीमार होने से पहले जब पन्द्रह साल के एक जाट लड़के ने करीब तेरह साल की कहार लड़की को घड़ा उठवाते हुए यह कहा था कि इतने भार से उस की कमर लचक जाएगी तो और किसी को मालूम हो या न जम्मू वाली बेबे जरूरी जानती थी कि जवाब में लड़की ने जाट के लड़के को गोद में उठा लेने का दावा किया था। अब जब कि बेबे को बीमार पड़े छः महीने हो चले थे वह क्या जानती थी कि वह कहार लड़की जाट लड़के को गोद में उठा पाई थी या नहीं?

नसीब का दिल भर आया। जब वह बेबे को मिला तो बेबे ने [illegible] महीने की जमा हुई बातें उसे कह सुनाईं। उस साल मौसम कितना खराब रहा था। मूसलाधार बरसात। फूलती फसल को कीड़ा खा गया था और लहलहाती फसल को टिड्डी दल। टिड्डियां तो नीम के पत्ते तक चट कर गई थीं। सारी वनस्पति रुण्ड मुण्ड नजर आ रही

थी। जिस पर ज्योतिषी चन्न न सेन रन। कहन कि ग्रहग्रह का योग है। बच्चे भी जानते थे कि हवा पानी और मिट्टी एक दूसरे में घुल मिल जाते हैं। यह बात अलग है कि रोजाना जीवन के काम काज उसी तरह जारी थे। किसान उसी उत्साह से टिड्डी दल से फसलें बचा रहे थे। लड़के-लड़कियाँ पहले की तरह ही कुआ जोहड़ों, भट्टियों पर मिलते और आँखें लड़ाते थे और पानी की बाल्टी लेकर या भट्टी से दाने चबाते आँखें बचाते लौट आते।

बब के पास तक कोई बात पहुचती और कोई न पहुचती। हा[1] एक अफवाह जो आग की तरह पंजाब भर में फैल गई थी, 'बब तक भी पहुच गई। लोग कहते थे कि भाखड़े की झील में इतना पानी जमा हो गया था कि भाखड़े का बांध अब अधिक देर उसे नहीं रोक सकता। बांध टूटने के नुकसान बच्चे-बच्चे को जबानी याद थे। सारे पंजाब की रानी धरती बाढ़ के समुद्र में विलीन हुआ चाहती थी। कीकर बेरियाँ तो क्या पीपल और बरगद के पेड़ तक ने जड़ से उखड़ जाना था। जल थल का अन्तर मिटा ही चाहता था। पानी के प्रवाह से दरियाओं के रुख बदल जाते थे। नदी नाले जरमैली सड़कों की तरह बह निकलते थे।

दिल ही दिल में हर आदमी डर रहा था। पर ऊपर ऊपर से सब हँस रहे थे। अगर कुछ निःशंक थे तो छोटे छोटे बच्चे। किसी यात्री ने अखरोट खेलते हुए बच्चों से पूछा था कि वे इतने प्रलयकारी बवंडर में कैसे उछल-कूद रहे थे। एक लड़के ने बेफिक्री से कहा था और क्या करें बापू कहता है कि थोड़े दिनों तक दुनिया खत्म होने वाली है। नसीब भी इस स्थिति में नहीं डोला था। जम्मू वाली बेबे खुश थी कि नसीब ने लोगों की तरह डरते हुए अपनी बहन के विवाह की तारीख आगे नहीं सरकाई थी। वह खुश थी कि वह नसीब की मिन्नत-समाजत कर लड़की के विवाह में जा बैठेगी। क्या हुआ अगर विवाह के मौके पर उसकी बात अनसुनी कर दी जाएगी उसे कुछ कहने का मौका तो मिलेगा।

बेटा तू आ ही गया भले भागों। मुझे लड़की का ब्याह जरूर दिखा देना। मैं तो यहाँ कब्र में पड़ी रहती हूँ बस उस एक दिन मुझे चौकी पर बिठा कर शामियाने में ले चलना। क्या पता मुझे और कितने दिन जीना है? मरने से पहले मैं गाँव का मुँह ही देख लूँगी।"

इतना कहकर जम्मू वाली बेबे चुप हो रही। इससे अधिक वह भी क्या सकती थी? और फिर उसे सूझा कि वह उसे अपने रोग की बात ही पूछ देखे कि क्या अब तक किसी ने अधरंग का इलाज नहीं ढूँढ निकाला। क्या कलकत्ता में भी इसकी दवा नहीं? क्या वह फिर से गाँव के कारजों में भाग लेने के योग्य हो जाएगी? क्या वह फिर से हृष्ट-पुष्ट होकर तिनका तिनका बिखरने जा रहे अपने परिवार या गाँव या अपनी मुट्ठी में लेकर इकट्ठा नहीं कर सकती थी? उसके रोग की कोई न कोई दवा तो कहीं-न-कहीं जरूर होगी। ठेकेदार सन्तराम से कोई ऐसी वस्तु अवश्य मिल सकती थी, जिससे वह पहले की तरह ही उठ बैठ सके। सन्तराम ने आधे गाँव का भला किया था क्या वह एक बुढ़िया की फरियाद नहीं सुनेगा? 'बब के दिल में आता कि

मिस्तरी सतराम और नसीब ईश्वर को गर्दन से पकड कर उसके पास ले आएँ और वह उसके पाँवा पकड कर उसकी दी हुई बीमारी उसे लौटा दे।

पहले बारात म बैठने की और अब बीमारी से छुटकारे की बात न जम्मू वाली 'बेबे' के चेहरे पर एक अजीब सी चमक ला दी। नसीब को लगा कि वह आधे शरीर से ही उठ कर चलने फिरने लगेगी। नसीब ने 'बेबे' को ढाढस बधाइ कि आज की दुनिया म कोई रोग ला इलाज नही। डाक्टरो के पास हर एक रोग की दवा है, इसलिए बेबे को इतना निराश नही होना चाहिए। वह शायद बिलकुल अरोग भी नहीं होना चाहती थी। छ महीने म उसके विचार म दुनिया इतनी बदल चुकी थी कि फिर से 'बेबे' उसे काबू म नही ले सकती थी। उसके बहू-बेटे, उसके सग-सम्बन्धी और के और हो गए थे। वह उन्ह किस तरह मजबूर कर सकती थी कि वे सारे उसे पहले सा ही आदर और सत्कार दें। उसे लगता जस उसकी बीमारी के दौरान सारा गाँव बिगड चुका है। एक बार बिगड कर कौन कब सुधरता है ? उसके गाँव का अर्जीनवीस 'बब' को बताया करता था कि अगर वह चार दिन बाद काम पर जाता ता तहसील की दुनिया बदल चुकी होती थी। उसके पक्के ग्राहक भी नए अर्जीनवीस से काम करवाना शुरु कर देते थे। बेबे तो भला छ महीने से बीमार थी। न जाने उसकी पन्बी अब किस बुढिया ने सभाल ली होगी। न जाने वह कौन सी बुढिया थी जिसका रोब जम्मू वाली बुढिया के समान चलता था। 'बब' को उस दुनिया से डर लगता जिसकी वह राजी होकर भी मालकिन नही हो सकती थी। अब किस परवाह थी उसकी। वह उदास थी। उसने किसी की बारात से क्या लेना था किसी की खुशी म उसे कौन सी ढाढस थी। वह खुद मरे बिच्छुओ से भी गई-बीती थी। नसीब चुपचाप जम्मू वाली 'बबे' के चेहरे की ओर देखता रहा। उसके माथे पर उसकी चिंताएँ छपाई के अक्षरा की तरह प्रत्यक्ष थी। उस की आँखें दूर कही शून्य म गडी हुई थी। वह अपनी अन्दर की आख से लोगा को अष्टग्रह स भागते हुए देख रही थी। वह देख रही थी कि कई लोगो न घरो म से निकल कर अपने डेरे ऊँचे ऊँचे टीलो पर लगा लिए है। उस लगता कि उसका सारा परिवार उसे भूसे की कोठरी म छोड कर माता रानी के टीले पर जा बठा है। वह देख सकती थी कि उसके परिवार के एक भी जीव को उसके साथ कुछ लगाव नही रहा था।

ईश्वर की इच्छा स भाखडे की झील म अधिक पानी इकट्ठा हो चुका था। 'बेबे' को झील का पानी विष घोलता नजर आ रहा था। पानी जस अन्दर-ही अन्दर मे ऐंठ रहा हो। वह जानती थी कि ऐसी अफवाह झूठ नही हुआ करती। उसने अपनी जवानी म कोयटे के भूचाल की अनेक अफवाहें सुनी थी और उसे बहुत दुख भी हुआ था। पर भाखडे के बाध का टूटना ता उसे ईश्वर का वरदान सा लगता था जो एक बारगी ही सारे पजाब को मुक्त कर देगा। उस के जी म आता कि वह किसी तरीके स उस इजीनियर को मिले जिसने इतना पानी बद कर रखा है। 'बब' का निश्चय था कि इजीनियर को इस बात का पूरा ज्ञान था कि एक दिन जब वह अधरग के कारण जिदगी स निराश हो चुकी होगी तो यह इतना बडा बाँध मक्खी की

थी। जिस पर ज्यादा भरोसा न था । कहा कि प्रकृति का पाप है। बच्चे भी जानते थे कि हवा पानी और मिट्टी एक दूसरे में घुल मिल जाते हैं। यह बात अलग है कि राजाना जीवन के काम काज उसी तरह जारी थे। किसान उसी उत्साह से मिट्टी दल में फसलें बो रहे थे। लड़के-लड़कियाँ पहले की तरह ही कुआ जोहड़ भट्टियों पर मिलते और आँखें लड़ाते थे पानी की थाटी लेकर या भट्टी में दाने भुनाते और बचाते लौट आते।

'बेबे' के कानों तक कोई बात पहुंचती और कोई न पहुंचती। हाँ! एक अफवाह जो आग की तरह पंजाब भर में फैल गई थी 'बेबे' तक भी पहुंच गई। लोग कहते थे कि भाखड़ा की झील में इतना पानी जमा हो गया था कि भाखड़ा का बाँध अब अधिक देर उसे नहीं रोक सकता। बाँध टूटने के नुकसान बच्चे-बच्चे को जबानी याद थे। सारे पंजाब की रानी धरती बाढ़ के समुद्र में विलीन हुआ चाहती थी। बीघर बस्तियाँ तो क्या पीपल और बरगद के पेड़ों तक न जड़ से उखड़ जाना था। जल थल का अन्तर मिटा ही चाहता था। पानी के प्रवाह से दरियाओं के रुख बदल जाते थे। नदी नाले जरनैली सड़कों की तरह बह निकलते थे।

दिल ही दिल में हर आदमी डर रहा था। पर ऊपर ऊपर से सब हँस रहे थे। अगर कुछ निश्चिन्त थे तो छोटे छोटे बच्चे। किसी यात्री ने अखरोट खेलते हुए बच्चों से पूछा था कि वे इतने प्रलयकारी बवंडर में कैसे उछल-कूद रहे थे। एक लड़के ने बेफिकरी से कहा था और क्या करें बापू कहता है कि थोड़े दिनों तक दुनिया खत्म होने वाली है। नसीब भी इस स्थिति में नहीं डाला था। जम्मू वाली बेबे खुश थी कि नसीब ने लोगों की तरह डरते हुए अपनी बहन के विवाह की तारीख आगे नहीं सरकाई थी। वह खुश थी कि वह नसीब की मिन्नत-समाजत कर लड़की के विवाह में जा बैठेगी। क्या हुआ अगर विवाह के मौके पर उसकी बात अनसुनी कर दी जाएगी उसे कुछ कहने का मौका तो मिलेगा।

बेटा तू आ ही गया भले भागो। मुझे लड़की का ब्याह जरूर दिखा देना। मैं तो यहाँ पलंग में पड़ी रहती हूँ बस उस एक दिन मुझे चौकी पर बिठा कर शामियाने में ले चलना। क्या पता मुझे और कितने दिन जीना है? मरने से पहले मैं गाँव का मुँह ही देख लूँगी।

इतना कहकर जम्मू वाली बेबे चुप हो रही। इससे अधिक वह भी क्या सकती थी? और फिर उसे सूझा कि वह उससे अपने रोग की बात ही पूछ देखे कि क्या अब तक किसी ने अधरंग का इलाज नहीं ढूंढ निकाला। क्या कलकत्ता में भी इसकी दवा नहीं? क्या वह फिर से गाँव के कारजों में भाग लेने के योग्य हो जाएगी? क्या वह फिर से हृष्ट पुष्ट होकर तिनका तिनका बिखरने जा रहे अपने परिवार या गाँव को अपनी मुट्ठी में लेकर इकट्ठा नहीं कर सकती थी? उसके रोग की कोई न कोई दवा तो कहीं-न कहीं जरूर होगी। ठेकेदार संतराम से कोई ऐसी वस्तु अवश्य मिल सकती थी जिससे वह पहले की तरह ही उठ बैठ सके। संतराम ने आधे गाँव का भला किया था क्या वह एक बुढ़िया की फरियाद नहीं सुनेगा? बेबे के दिल में आता कि

मिस्तरी सन्तराम और नसीब ईश्वर को गर्दन से पकड़ कर उसके पास ले आएँ और वह उसके पांव पकड़ कर उसकी दी हुई बीमारी उसे लौटा दे।

पहले बारात में बठन की ओर अब बीमारी से छुटकारे की बात ने जम्मू वाली 'बंबे' के चेहरे पर एक अजीब सी चमक ला दी। नसीब को लगा कि वह आधे शरीर से ही उठ कर चलने फिरने लगेगी। नसीब ने बेबे को ढाढस बँधाई कि आज की दुनिया में कोई रोग ला इलाज नहीं। डाक्टरों के पास हर एक रोग की दवा है इसलिए बेबे को इतना निराश नहीं होना चाहिए। वह शायद बिलकुल अरोग भी नहीं होना चाहती थी। छः महीने में उसके विचार में दुनिया इतनी बदल चुकी थी कि फिर से बेबे उस काबू में नहीं ले सकती थी। उसके बहू-बेटे उसके सग-सम्बन्धी और के और हो गए थे। वह उन्हें किस तरह मजबूर कर सकती थी कि वे सारे उसे पहले सा ही आदर और सत्कार दें। उसे लगता जैसे उसकी बीमारी के दौरान सारा गांव बिगड़ चुका है। एक बार बिगड़ कर कौन कब सुधरता है? उसके गाँव का अर्जीनवीस बेबे को बताया करता था कि अगर वह चार दिन बाद काम पर आता तो तहसील की दुनिया बदल चुकी होती थी। उसके पक्के ग्राहक भी नए अर्जीनवीस से काम करवाना शुरू कर देते थे। बेबे तो भला छः महीने से बीमार थी। न जाने उसकी पदवी अब किस बुढ़िया ने सँभाल ली होगी। न जाने वह कौन सी बुढ़िया थी जिसका रोब जम्मू वाली बुढ़िया के समान चलता था। बेबे को उस दुनिया में डर लगता जिसकी वह राजी होकर भी मालकिन नहीं हो सकती थी। अब किसे परवाह थी उसकी। वह उदास थी। उसने किसी की बारात से क्या लेना था, किसी की खुशी से उसे कौन सी ढाढस थी। वह खुद मरे बिछुड़ों से भी गई-बीती थी। नसीब चुपचाप जम्मू वाली बेबे के चेहरे की ओर देखता रहा। उसके माथे पर उसकी चिंताएँ छपाई के अक्षरों की तरह प्रत्यक्ष थीं। उस की आँखें दूर कहीं शून्य में गड़ी हुई थीं। वह अपनी अन्दर की आँख से लोगों को अष्टग्रह से भागते हुए देख रही थी। वह देख रही थी कि कई लोगों ने घरों में से निकल कर अपने डेरे ऊँचे-ऊँचे टीलों पर लगा लिए हैं। उसे लगता कि उसका सारा परिवार उस भूस की कोठरी में छोड़ कर माता रानी के टीले पर जा बैठा है। वह देख सकती थी कि उसके परिवार के एक भी जीव को उसके साथ कुछ लगाव नहीं रहा था।

ईश्वर की इच्छा से भाखड़े की झील में अधिक पानी इकट्ठा हो चुका था। बेबे को झील का पानी विष घोलता नजर आ रहा था। पानी जैसे अन्दर-ही अन्दर में ऐंठ रहा हो। वह जानती थी कि ऐसी अफवाह झूठ नहीं हुआ करती। उसने अपनी जवानी में क्वेटा के भूचाल की अनेक अफवाहें सुनी थीं और उसे बहुत दुःख भी हुआ था। पर भाखड़े के बांध का टूटना तो उसे ईश्वर का वरदान सा लगता था जो एक बारगी ही सारे पंजाब को मुक्त कर देगा। उस के जी में आता कि वह किसी तरीके से उस इंजीनियर को मिले जिसने इतना पानी बंद कर रखा है। बेबे का निश्चय था कि इंजीनियर को इस बात का पूरा ज्ञान था कि एक दिन जब वह अघ-रंग के कारण जिन्दगी से निराश हो चुकी होगी तो यह इतना बड़ा बांध मरकरी की

थी। जिस पर ज्योतिषी चैन न लेने देते। कहते कि अष्टग्रह का योग है। बच्चे भी जानते थे कि हवा, पानी और मिट्टी एक दूसरे में घुल मिल जाते हैं। यह बात अलग है कि रोजाना जीवन के काम काज उसी तरह जारी थे। किसान उसी उत्साह से टिड्डी दल से फसलें बचा रहे थे। लड़के लड़कियाँ पहले की तरह ही कुओं, जोहड़ों भट्ठियों पर मिलते और आँखें लड़ाने के बाद पानी की बाल्टी लेकर या भट्ठी से दाने चबाते आँखें बचाते लौट आते।

केव' के कानों तक कोई बात पहुँचती और कोई न पहुँचती। हाँ! एक अफवाह जो आग की तरह पंजाब भर में फैल गई थी, केव' तक भी पहुँच गई। लोग कहते थे कि भाखड़े की झील में इतना पानी जमा हो गया था कि भाखड़ा का बाँध अब अधिक देर उसे नहीं रोक सकता। बाँध टूटने के नुकसान बच्चे-बच्चे को जबानी याद थे। सारे पंजाब की लाली धरती बाढ़ के समुद्र में विलीन हुआ चाहती थी। कीकर बेरियाँ तो क्या पीपल और बरगद के पेड़ों तक ने जड़ से उखड़ जाना था। जल थल का अन्तर मिटा ही चाहता था। पानी के प्रवाह से दरियाओं के रुख बदल जाते थे। नदी नाले जरनैली सड़कों की तरह बह निकलते थे।

दिल ही दिल में हर आदमी डर रहा था। पर ऊपर ऊपर से सब हँस रहे थे। अगर कुछ निडर थे तो छोटे छोटे बच्चे। किसी यात्री ने अखरोट खेलते हुए बच्चों से पूछा था कि वे इतने प्रलयकारी बवंडर में कैसे उछल-कूद रहे थे। एक लड़के ने बेफिक्री से कहा था 'और क्या करें, बापू कहता है कि थोड़े दिनों तक दुनिया खत्म होने वाली है।' नसीब भी इस स्थिति में नहीं रोता था। जम्मू वाली केव' खुश थी कि नसीब ने नागों की तरह डरते हुए अपनी बहन के विवाह की तारीख आगे नहीं सरकाई थी। केव' खुश थी कि वह नसीब की मिन्नत-समाजत कर लड़की के विवाह में जा बैठेगी। क्या हुआ अगर विवाह के मौके पर उसकी बात अनसुनी कर दी जाएगी, उसे कुछ कहने का मौका तो मिलेगा।

'बेटा तू आ ही गया भले आगा। मुझे लड़की का ब्याह जरूर दिखा देना। मैं तो यहाँ कब्र में पड़ी रहती हूँ बस उस एक दिन मुझे चौकी पर बिठा कर शामियाने में ले चलना। क्या पता मुझे और कितने दिन जीना है? मरने से पहले मैं गाँव का मुँह ही देख लूँगी।'

इतना कहकर जम्मू वाली केव' चुप हो रही। इससे अधिक वह भी क्या सकती थी। और फिर उसे सूझा कि वह उससे अपने रोग की बात ही पूछ देखे कि क्या अब तक किसी ने अस्पताल का इलाज नहीं ढूँढ निकाला। क्या कलकत्ते में भी इसकी दवा नहीं? क्या वह फिर से गाँव के कारजों में भाग लेने के योग्य हो जाएगी? क्या वह फिर से हृष्ट-पुष्ट होकर तिनका तिनका इकट्ठा कर अपने परिवार या गाँव को अपनी मुट्ठी में लेकर इकट्ठा नहीं कर सकती थी? उसके रोग की कोई न कोई दवा तो कलकत्ते वालों के पास जरूर होगी। शायद सत्संग में कोई ऐसा मन्त्र अवश्य मिल सकता थी जिससे वह पहले की तरह ही उठ बैठ सके। सत्संग ने आधे गाँव का भला किया था। क्या वह एक बुढ़िया की फरियाद नहीं सुनेगा? 'बस मैं दिन में धारा कि

मिम्तरी सतराम और नसीव, ईश्वर को गदन से पकड कर उसके पास ले आएँ और वह उसके पावो पकड कर उसकी दी हुई बीमारी उसे लौटा दे।

पहले बारात म बैठन की और अब बीमारी स छुटकारे की बात ने जम्मू वाली 'बबे' के चेहरे पर एक अजीब सी चमक ला दी। नसीब को लगा कि वह आधे शरीर स ही उठ कर चलने फिरने लगेगी। नसीब ने 'बेबे' को ढाढस बँधाई कि आज की दुनिया म कोई रोग ला इलाज नही। डाक्टरो के पास हर एक रोग की दवा है इसलिए 'बबे' को इतना निराश नही होना चाहिए। वह शायद बिलकुल अरोग भी नही होना चाहती थी। छ महीने म उसके विचार म दुनिया इतनी बदल चुकी थी कि फिर से बबे उसे काबू म नहा ले सकती थी। उसके बहू-बटे उसके सग-सम्बन्धी और के और हो गए थे। वह उन्हें किस तरह मजबूर कर सकती थी कि व सारे उस पहले सा ही आदर और सत्कार दें। उसे लगता जैसे उसकी बीमारी के दौरान सारा गाँव बिगड चुका है। एक बार बिगड कर कोन कब सुधरता है? उसके गाँव का अर्जीनवीस बबे' को बताया करता था कि अगर वह चार दिन बाद काम पर आता तो तहसील की दुनिया बदल चुकी होती थी। उसके पक्के ग्राहक भी नए अर्जीनवीस स काम करवाना शुरू कर देते थे। बबे तो भला छ महीने से बीमार थी। न जाने उसकी पदवी अब किस बुढिया ने सँभाल ली होगी। न जाने वह कौन सी बुढिया थी जिसका रोब जम्मू वाली बुढिया के समान चलता था। बेबे को उस दुनिया स डर लगता जिसकी वह रानी होकर भी मालकिन नही हो सकती थी। अब किस परवाह थी उसको। वह उदास थी। उसने किसी की बारात से क्या लना था, किसी की खुशी स उस कौन सी ढाढस थी। वह खुद मरे बिछुडे म भी गई-बीती थी। नसीब चुपचाप जम्मू वाली बबे क चेहरे की ओर देखता रहा। उसके माथे पर उसकी चिंताएँ छपाई क अक्षरो की तरह प्रत्यक्ष थी। उस की आँखें दूर कही शून्य म गडी हुई थी। वह अपनी अन्दर की आँख से लोगो को अष्टग्रह स भागते हुए देख रही थी। वह देख रही था कि कई लोगो ने घरो म से निकल कर अपने डेरे ऊँचे-ऊँचे टीलो पर लगा लिए है। उस लगता कि उसका सारा परिवार उस भूसे की कोठरी म छोड कर माता रानी क टील पर जा बैठा है। वह देख सकती थी कि उसके परिवार के एक भी जीव को उसक साथ कुछ लगाव नही रहा था।

ईश्वर की इच्छा स भाखडे की झील म अधिक पानी इकट्ठा हो चुका था। बब को झील का पानी विष घोलता नजर आ रहा था। पानी जैसे अन्दर-ही अन्दर म ऐंठ रहा हो। *वह जानती थी कि ऐसी अफवाह झूठ नहीं हुआ करती।* उसने अपनी जवानी म कायटे क भूचाल की अनेक अफवाहें सुनी थी और उस बहुत दुख भी हुआ था। पर भाखडे के बाँध का टूटना तो उस ईश्वर का वरदान सा लगता था जो एक बारगी ही सारे पजाब को मुक्त कर देगा। उस क जी म आता कि वह किसी तरीके से उस इजीनियर को मिल जिसने इतना पानी कद कर रखा है। बबे का निश्चय था कि इजीनियर को इस बात का पूरा ज्ञान था कि एक दिन जब वह अर्ध-रग क कारण जिन्दगी स निराश हो चुकी होगी तो वह इतना बडा बाँध बनाने का

तरह टूट जाएगा।

'बेबे' ने शून्य से दृष्टि हटाकर नसीब की ओर देखा और बोली, "हाँ सच, तुम जानते ही होगे, इस भाखड़ा के टूटने के बारे में। कितने दिन रह गए हैं भला? यह अभागा किसी दिन फटना भी था कि नहीं?" उसने आखिरी वाक्य अपने दिल पर बहुत ज़ोर रखकर कहा ताकि नसीब यह न भाँप ले कि भाखड़ा का बाँध टूटने से वह बहुत डरी है।

स्वाभाविक ही था कि नसीब 'बेबे' के दिल में मँडरा रहे भाखड़ा सम्बन्धी विचारों को नहीं भाँप सकता। वह यह भी जानता था कि ऐसी कोई बात भविष्य में होने को नहीं थी। "तुम्हें हो क्या गया है बेबे, तुम तो यों ही डरे जा रही हो। कोई बाँध टूटने नहीं जा रहा। वह कोई ऐरे-गैरे ने तो बनाया नहीं। बड़े कारीगरों के हाथ लगे हैं उसे। लोग खाली तो व्यर्थ में ऐसी अफवाहें फैलाते रहते हैं। तुम बेफिक्र होकर लेटी रहा करो।" उसने बेबे को ढाढस बँधाई।

नसीब ने देखा कि 'बेबे' का चेहरा यह सुनकर फूस की तरह पीला पड़ गया। उसके एक ओर की नब्ज़ तेज़-तेज़ चलने लगी। "है?" वह धड़कते दिल से बोली जैसे वह ठगी गई हो। वह खटिया पर निराश, निस्तेज पड़ी थी जैसे उसके जीवित अंग भी निर्जीव हो गए हों।

एकाकी

राजेन्द्रकौर, १९३६

नई पीढी की कहानी लेखिकाओं म राजेन्द्रकौर बहुचर्चित लेखिका हैं। उनकी एक कहानी सत्ते कुआरियां (सात कुमारियां) की पजाबी म काफी चर्चा और प्रशसा हुई।

राजेन्द्रकौर ने अब तक लगभग ४० कहानियां लिखी हैं किन्तु अभी तक उनका कोई सग्रह प्रकाशित नही हुआ है। इस बीच इन की अनेक कहानियां हिन्दी मे भी प्रकाशित हुइ।

तरुणी विधवा से सम्बन्धित एक मार्मिक कहानी इस सग्रह म ली गई है।

मीना ने आखिर रतना को एक दिन लिख ही दिया —

मैं बहुत ही अकेली हूं बहुत ही अकली। मेरे चारो ओर अकेलापन है एक सूनापन, एक वीरानगी एक उदासी। मैं इस भयावह एकाकी जीवन की घुटन म मर जाऊंगी। हो सके तो एक बार आओ अवश्य आआ, रतना।

मीना न कई बार पहले भी ऐसा ही पत्र लिखने के बार म सोचा था। परन्तु लिखा न था। अब उसे भय था कि उसका विचार फिर कही बदल न जाए। अत उसने वह पत्र उसी समय डाल दिया।

परन्तु पत्र भेजकर वह फिर सोच म पड गई कि उसन रतना को क्या लिखा। रतना आएगी चार दिन, नही तो आठ दिन उसके पास रहगी और फिर ?

फिर वही अकेलापन वही वीरानगी वही उदासी।

और अब यहां आन म रतना को न जाने कितनी मुसीबत झेलनी पड। अपने

पति को मनाना पडेगा, वह तो स्वर मान ही जाएगा। उसके दो छोटे छोटे बच्चे है, उनको साथ लेकर आना, अकेली यात्रा और कितना बखेडा।

इन्ही विचारो म ही सध्या की हल्की रोशनी गहरे अधेरे म परिवर्तित होनी आरम्भ हो गई।

वह उठकर रसोई म गई और अपने लिए खाना बनाने लगी। खाना ही क्या बनाना था। बस दो रोटियाँ ही तो सकनी था उसने स्वय के लिए।

खाना बनाते-बनाते वह सोचने लगी कि यदि रतना आ गई तो घर म कितनी चहल पहल रहेगी। रतना तो हरदम खिल खिल हसती ही रहती थी। न हसनेवाली बात को भी हसने वाली बना देती थी। और उसकी हसी भी कोई छोटी मोटी नही होती उसकी गुजार दूर-दूर तक पहुचती है उसके आने से यह उदास और शात घर हँसी स खिल उठेगा।

और उसके दो फूला स सुन्दर गुलाबी बच्चे—टोनी तथा टीना। उनकी तोतली तोतली बातें उनका हसना रोना जिद करना मचलना खेलना बिखेरना इस घर को रौनक से भर देगा।

उसकी एक ठण्डी आह निकल गई। उसके वक्ष म भरी ममता एक हसरत बन कर रह गई थी। इस अनुभव स उसके अन्दर स एक कसक सी उठी और उसका मन बडा भारी सा हो गया। इस पीडा ने उस खाना भुला दिया। वह चुप चाप अन्दर जाकर लट गई। अधेरे म लेटी लेटी अपनी पीडा से लडती रही सघष करती रही दबाती रही और धीरे धीरे यह घुटन आँसुआ द्वारा बह गई।

उसने उठकर रेडियो चला दिया और ठण्डा हो चुका खाना ही खाने लगी।

आखिर खाने स वह कितनी देर नाराज रह सकती थी। डाक्टर ने भी उस कहा था कि उस भूख लग चाहे न लग वह जबरदस्ती खाना खाया करे। डाक्टर ने भूख बढाने क लिए उम कई टानिक भी बताए थे। मीना वे टानिक स भी रही थी परन्तु भूख भी मूड क साथ ही साथ बदल जाती है। यदि मन जरा हल्का होता है खुश होता है तो वह भी अपना अधिकार आ माँगती है पूरे जोरा म। किन्तु मन तनिक भी भारी हो जाए उदास हो जाए तो भूख डर की मारी कहीं जा भागती है। चाह कितना अच्छा स्वादिष्ट खाद्यपदाथ बना-बना कर इसको दिल लुभाया जाए वह लालच म नही आती।

और इसी दशा म मीना न छ महीने गुजार दिए हैं। अब उसका चेहरा पीला जद आँखें अन्दर को धसी हुई आँखा क दिए काले चक्र। आँखा म उसक अन्दर घर स भी भयावह सूनापन था।

खाना खाते-खाते वह फिर सोच रही थी कि रतना के लिए और उसके बच्चा क लिए वह नए-नए पकवान बनाएगी। सब मिलकर इसी मेज पर गम-गम खाना खाएँगे। कभी खीर कभी पूडी कभी । वह अपन मन म एक लम्बी लिस्ट बनाना रही।

आरम्भ म ही उन खान-पीन की बात सोच रहा था ही दूसरा को बना-बना

कर उसे खिलाने म बड़ा मजा आता है। उसका पति खाने-पीने का बड़ा शौकीन था। वह स्वय रसोई म खडा हो मीना स भाँति भाँति के खाद्यपदाथ बनवाता रहता था। लगभग प्रत्येक छुट्टी वाले दिन वह अपने मित्रो को खाने पर निमन्त्रण दे आता था। मीना न कई तरह की नई-नई डिश बनानी सीख ली थी।

परन्तु यह सब केवल छ महीने तक ही रहा, और फिर उसका पति उस सदैव क लिए वीरान कर गया, सूना कर गया, केवल छ महीने ही उसने विवाहित जीवन के बिताए थ। अब एक वष स वह विधवा थी। अभी न जाने कितने दिन, कितने महीने, कितने वष उसने जीना था, इस सूनेपन म।

विधवा होने क पश्चात् तीन-चार महीने वह अपनी ससुराल म ही रही। वहाँ उसके जेठ जिठानी और उनके बच्चे थे। वह जेठ, जिठानी के पास किस सहारे, कितने दिन काट सकती थी। फिर उसका भाई उसे अपने पास ले आया। उसकी भी पत्नी थी, बच्चे थ, दो महीने उसने वहाँ भी गुजारे, परन्तु भाई के पास इतने दिन रहने का भी उसे क्या अधिकार था। उसके भाई ने कितनी कठिनाइयाँ सेन कर मुश्किल से यह लडका ढूढा था और किसी तरह विवाह कर दिया था। अब मीना का भाग्य ही फूटा हो तो वह क्या करे? उसके अपने बच्चे थे, परिवार था।

और दूसरा मीना का था ही कौन?

उसे भाई के ही दफ्तर म नौकरी मिल गई। अब छ महीने हो गए थे उसे नौकरी करते। उसने रहने क लिए अलग जगह ले ली थी। साफ गिना-चुना थोडा सा उसका सामान था इस घर म और वह स्वय थी अकेली।

सुबह उठकर वह स्वय अपने हाथ से घर को झाडती, पोछती, सजाती सँवारती अपना नाश्ता तैयार करती और फिर तैयार होकर काम पर चली जाती।

वह भाई की कठोर निगरानी म पली थी। आरम्भ से ही सकोची और गम्भीर थी। पति उसका बडा हसोड और बातूनी था। उसके साथ म धीरे धीरे उस का सकोच भी दूर हो गया था, परन्तु अब फिर सब खत्म हो गया। अब अपने आफिस म वह चुपचाप रहती थी। काम के समय काम स मतलब रखती थी काम के पश्चात् सब को अपने-अपने घर जाने की जल्दी होती। कौन किसी की सुनता है? इन छ महीनो म आफिस म उसकी हैलो हैलो तक ही पहचान थी।

एक दो जवान लडको ने इस जवान विधवा पर डोरे डालने की कोशिश की थी परन्तु मीना की ओर स कोई प्रोत्साहन न पा उनकी हिम्मत खत्म हो गई थी।

सजी सवरी रगी, पुती कई लडकियाँ उसके साथ काम करती थी। वह उसको देखकर मुस्करा देती तो वह भी मुस्करा देती। काम क विषय म कभी कभी दो-चार बातो का आदान प्रदान भी हो जाता था।

जिस बिल्डिंग म वह रहती थी उसी म एक प्रौढा स्त्री रहती थी, उसका पति था उसकी एकमात्र लडकी ब्याही हुई अपने घर सुखी थी। पति बाहर काम करने चला जाता तो पत्नी सारा दिन खाली बातें करने क लिए आदमी ढूढती रहती। यदि कोई न मिलता तो नौकर पर ही बरसना आरम्भ कर देती।

मीना को यह बातूनी स्त्री बिल्कुल पसन्द नहीं थी। वह कई मीन-मेख निकाल-निकालकर उसके पूर्व जीवन के बारे में कितना कुछ पूछती रहती। अपनी लड़की के बारे में, दामाद के बारे में, उसके घर वालों के बारे में न जाने क्या-क्या विस्तारपूर्वक बताना शुरू कर देती कि वह खत्म होने में ही न आता और मीना खीझ उठती। इसलिए जहाँ तक हो, मीना अपने आपको उस स्त्री की बातों की शिकार न बनने देती।

एक और परिवार था। उस औरत के सात बच्चे थे। उनकी आयु में एक-एक वर्ष का अन्तर था, सब चूँ-चूँ करते पीले मुरझाए हुए बच्चे। उनकी माँ सारा दिन खीझती कुढ़ती गुजार देती। उसके पास इतना समय कहाँ कि दो-चार क्षण बैठकर बात कर सके।

एक और परिवार था। दो ही सदस्य थे। पति-पत्नी दोनों ही नौकरी पेशा थे। शाम को दोनों इकट्ठे कभी पिक्चर चले जाते, कभी घूमते फिरते और कभी घर बैठे ही ताश खेलते रहते।

ऊपर की और नीचे की मंजिल पर और भी परिवार थे, किन्तु वह किसी को जानती नहीं, कोई इसे जानता नहीं।

आफिस से घर आकर वह अपने घर की चारदीवारी में फँस जाती, समाचार पत्र पढ़ती, कुछ पत्रिकाएँ और किताबें पढ़ती। उनसे भी दिल तंग आ जाए तो रेडियो लगा लेती। रेडियो से भी खीझ उठे तो बाहर बालकनी में खड़ी होकर नीचे सड़क पर आते-जाते लोगों को देखती रहती। यदि यह भी न कर सके तो रोती रहती, बस उसका मन हलका हो जाता।

पिक्चर वह जा नहीं सकती, अकेली लड़की पिक्चर जाए तो क्या लगता।

कहाँ घूमने वह नहीं जाती, अकेली कहाँ जाए?

भाई भाभी को भी मिलने कितनी बार जाए?

विवाह से पूर्व वह इसी शहर में रही है, बड़ी हुई है। उसकी सहेलियाँ हैं। कोई ब्याही गई, कोई बाल-बच्चों वाली है, घर गृहस्थी का बोझ है।

कहीं भी जाना उसे अच्छा नहीं लगता। उसके दिल में बात बैठ गई है कि उसके जाने पर कोई प्रसन्न नहीं होता। किसी के पास उसके जितना खाली समय नहीं कि कोई उसके साथ बात कर सके। कोई उस जैसा अकेला नहीं कि उसकी उदासी का अनुभव कर सके।

अब वह अपने में ही सिमटी सिकुड़ी रहती है।

केवल रतना है जिसे वह लगातार पत्र लिखती रहती है। रतना और मीना इकट्ठी पढ़ी हैं। कुछ वर्षों का मेल उन्हें एक दूसरे के बहुत समीप ले आई परन्तु मीलों की दूरी है। पत्रों द्वारा यह दूरी मिटती सी लगा करती मीना को। क्योंकि पत्रों द्वारा वह अपना मन खोल नहीं सकती। अपने मन के भाव बता नहीं सकती।

मीना का अकेलापन ही मीना का, उसके शरीर का, उसके मन का, उसके दिल को, उसके दिमाग को, उसकी आत्मा को खाए जा रहा था। उसे लगता था कि वह भीतर-बाहर से खोखली होती जा रही है।

वह अपना पुराना अलबम निकाल कर देखती। उस मीना और आज की मीना में कितना अंतर है। अलबम वाली मीना है रस भरा सेव, और आज की मीना है सेव का गमहीन भाग, उसका छिलका।

परन्तु अब तो रतना और उसके बच्चे आ रहे हैं। उसे दुनिया में किसी बात का यकीन है तो यही कि वह जब भी रतना को बुलाए वह आ जाएगी।

इन्हीं विचारों में मीना की आंख लग गई।

सपने में उसने देखा कि वह एक बाग में खडी है। उस बाग में लाल सुर्ख फूल हैं, फूल ही फूल। उन फूलों की ओर देख कर वह मुसकरा रही है। उन फूलों की कोमलता को अनुभव करने के लिये उनको स्पर्श करने के लिए वह हाथ आगे बढाती है तो सारा वातावरण हंसी की गुंजार से भर जाता है और वह क्या देखती है कि सारे लाल सुर्ख फूल लाल-लाल मुस्कराते बच्चों में बदल गए हैं। और सब बच्चे उसके इर्द गिर्द आकर घेरा डाल लेते हैं। एक गोल दायरे में खड़े एक दूसरे का हाथ पकड़े वे एक गीत गाने लगे। मीना उन सब के बीच मन्त्र मुग्ध होकर उस खेल में डूब गई। और उन लाल बच्चों की काशनी, बिल्लौरी कांचे, नीले भूरे नैनों में झांकती रही। उसके वक्ष में साई ममता मचल उठी उसकी छातियां दूध से भर उठीं और वह सब बच्चे उसके देखते देखते, दूध पीते नन्हे बच्चों में परिवर्तित हो गए। उसका मन चाहा कि इन सब बच्चों को एक साथ अपनी छाती से चिपका ले और वे दूध पीते रहें पीते रहें उसने अपना हाथ उन बच्चों की ओर फैलाया परन्तु उसके हाथ फैले ही रह गए। जैसे ही वह बच्चों के समीप आ रही थी बच्चे दूर ही रेंगते जा रहे थे दूर उसकी पहुंच से बाहर। वह हांफ कर बैठ गई उसने अपनी छातियां को अपने हाथों में दबा लिया उनमें से एक पीडा उठी और वह उस पीडा से कराह उठी।

उसकी आंख खुल गई थी। उसने अपने हाथों से छाती को दबाया हुआ था। उसे लगा कि वास्तव में ही वहां पीडा हो रही है।

उसने रतना और उसके बच्चों के आने की तयारी शुरु करदी। बिस्किट टाफियां खिलौने और न जाने कितना कुछ खरीद लाई। लाइब्रेरी के बाल विभाग से रंग बिरंगी तस्वीरों वाली किताबें निकाल लाई।

वह स्वयं तीन चार दिन चिड़िया कौवे रीछ शेर राजा रानी भूत, देव की कहानियां पढती रही जो वह टोनी और टीना को सुनाएगी।

और सचमुच ही रतना का तार आ गया कि वह आ रही है। मीना स्टेशन पर पहुंच गई वह बहुत प्रसन्न थी। आज उसकी आंखों का सूनापन, मुंह का पीलापन सब इस प्रसन्नता में छिप गया था।

गाडी रुकी, दूर एक दरवाजे में खडी रतना मीना को हाथ हिला रही थी। मीना भाग कर गई उसने जोर से रतना को बांहों में ले लिया।

तुम आ गई हो रत्नो मुझे पूरा यकीन था कि तुम आओगी।'

मीना तुमने यह क्या हाल बना रखा है ? हैरान हो रतना मीना की ओर देख रही थी। उसकी आंखें तरल हो गई थीं।

"अब तुम आ गई हो सब कुछ ठीक हो जाएगा।" मीना हँस पड़ी। उसने टीना टोनी को प्यार किया। अपने सीने से लगा लिया।

उस दिन उसने आफिस से छुट्टी ले ली थी। खाना पीना चलता रहा, गप्पें चलती रहीं छोटे छोटे मजाक होते रहे। रतना की हँसी से सारा घर चहक उठा। रतना अपने पति की, अपनी ससुराल की अपने गृहस्थ जीवन की दुःख-सुख की सब बातें मीना को बताती रही।

मीना ने अपने एकाकी जीवन के बारे में अपनी उदासी के बारे में, रतना को कुछ नहीं बताया। इस रौनक में, इस खुशी में वह उस सूनेपन को अब स्मरण नहीं करना चाहती थी।

दोपहर को उन्होंने पिक्चर देखी, शाम को बाहर घूमे खाना भी बाहर ही खाया और थक कर घर आ गई।

मीना बच्चों से तोतली-तोतली बातें करती हुई, उनको सुलाती सुलाती स्वयं भी सो गई।

रतना अभी जाग रही थी। वह कितनी देर मीना के सोए चेहरे को देखती रही, उसके एक ओर टीना थी दूसरी ओर टोनी था। दोनों को अपने साथ लगाए मीना गहरी नींद में सोई थी। एक ही दिन में दोनों बच्चे उसके साथ घुल मिल गए थे और अब उन्हें माँ की फिक्र ही नहीं था। टोनी अपने पिता के बिना सोता ही न था। सौ सौ जिदें करता था, टीना अपनी माँ के बिना कभी न सोई थी। इस मीना ने उन दोनों को माँ-बाप भुला दिए थे।

मीना ने यद्यपि रतना को कुछ न बताया था। परन्तु उसने उसकी आँखों से, उसके चेहरे से, उसके वातावरण से सब कुछ भाँप लिया था। सोई हुई मीना उसे एक बच्ची सी लगी। उसका दिल चाहा कि वह उसे छाती से लगाकर भींच ले।

कितनी देर रतना बैठी-बैठी मीना के एकाकी जीवन के बारे में, उसके वर्तमान और भविष्य के बारे में सोचती रही। उसका गला भर आया और वह कितनी देर मीना के लिए रोती रही।

सुबह हुई मीना आफिस चली गई।

'मीना जी आज आप बड़ी प्रसन्न नजर आ रही हैं।' उसके बास ने उसकी तरफ मुस्करा कर देखते हुए कहा जब वह किसी काम से उसके आफिस में आ गई थी।

मीना हैरान होकर बास की ओर देखने लगी। तो क्या यह भी मेरी उदासी खुशी को नोट करता है। मीना ने सोचा।

'मीना कल आप छुट्टी पर थीं। क्या बात है? ठीक तो हैं?' लंच टाइम पर लगभग सब लड़कियाँ उससे फिर यही पूछ रही थीं। जब से वह इस आफिस में काम कर रही है उसने छुट्टी कभी नहीं ली थी।

'मीना जी, आप के चेहरे पर आज बड़ी चमक है क्या कोई विशेष बात है?' एक और लड़की ने शरारत से आँख मटका कर पूछा।

मीना और भी हैरान हो गई। यह सब लड़कियाँ भी उसकी प्रसन्नता को भाँप

गई थी। क्या चेहरा वास्तव मे ही मन का दपण है। उसने स्वय तो कभी किसी से अपन वार म कुछ कहा नही। शायद ही कोई जानता हो कि वह इतनी उदास और शात क्या है।

सध्या समय छुट्टी होन पर वह जल्दी-जल्दी आफिस से निकल रही थी। आफिस के दो-तीन युवक उस सुना-सुनाकर कह रह थे—

'क्या दोस्त कल छुट्टी पर थे?' एक बोला।

'क्या दोस्त, आज बडे खुश दीखते हो?' दूसरा बोला।

और अनायास मीना के होठो पर मुस्कराहट खेल गई। उसने मुडकर देखा वे लडके झेंप स गए।

घर जाते समय रास्ते मे मीना सोच रही थी कि रतना तो केवल आठ दिन के लिए उसके पास आई है। चली जाएगी तो फिर ?

सारे रास्त म फिर ही प्रश्न चिह्न बनकर उसकी आखो के सामने घूमता रहा, चक्कर काटता रहा। वह बस म बैठ गई। उस लगा कि फिर प्रश्न' चिह्न का भी पहिए लग गए हैं और वह उस ऊपर चढाए आग ही लिए जा रहा है। इस बस की तो कही पर मजिल है, परन्तु उस प्रश्न चिह्न की मजिल का कोई ठिकाना नही।

उस प्रश्न चिह्न म से घुमड घुमड कर भिन भिन चित्र उसकी आखो के सामने घूमते रह। वह अकेली बठी रेडियो चला रही है। उस पर खीझ रही है। किताब पढ रही है। उसम खीझकर उनको भी पटक रही है। बालकनी म खडी लोगो को देख रही है। उससे भी तग आकर बालकनी स कूदने की सोच रही है। दीवारो से सिर टकरा रहा है और फिर रोए जा रही है।

और इसी अचेतन अवस्था म वह न जाने कब घर पहुच गई। घर म रतना थी उसके बच्चे थे। सारा घर भरा पडा था। उसके आन पर पाच सात मिनट के अन्दर ही सब बच्चे टीना-टोनी को लेकर भी बाहर चले गए।

रतना मीना का पीला मुरझाया चेहरा देखकर हैरान रह गई। उसकी आखें बावरी सी सूनी-सूनी न जाने क्या सोच रही थी। रतना को लगा कि मीना कुछ काप-सी रही है।

'मीनी, क्या बात है?' रतना घबरा-सी गई थी।

मीना काँपती जा रही थी।

क्या हुआ है मीना?' उसे अपने साथ लगाकर ममता से रतना न पूछा।

'रतना तुम चली जाओ कल सुबह ही चली जाओ।

'मीनी तुम्हे क्या हुआ है? पागल हो गई हो क्या? क्या क्या हुआ है? चली क्यो जाऊँ?

रतना भौचक्की हो गई थी।

रतना, तुम्हारे आने की खुशी मेरे लिए असह्य है तुम चली जाओ हाँ चली जाओ मुझे अपने एकाकी जीवन से स्नेह हो गया है। तुम्हारे यहाँ रहन से मेरी दिनचर्या म अन्तर आ जाएँगे। और उस अकेलेपन म मुझे फिर से संघर्ष करना

पड़ेगा । अपना स्थान बदलना पड़ेगी । अ
न मजार करेंगे फिर पूछेंगे आज तुम २
जाओगी ।

और न जाने कितनी देर पागलों की त
बाहर से टीनों के शोर की आवाज आ
थी । रतनी मीना की यूं ही छोड़ बाहर टीन
आवाज बन्द हो गई और फिर बाग पार स
माता ने उसी समय उठकर रेडियो लगाय
पन्द्रह बीस मिनट के पश्चात् वह बातचीत म
आकर रोने लग गई । उस बाद होश न थी f
अमर से छटा उसको यह सब हरकतें देख रही

पड़ेगा । अपनी स्टाल बन्द करना पड़ेगी । आठ दिनों के बाद आफिस के लोग फिर मुझ से मज़ाक करेंगे फिर पूछेंगे 'आज तुम उदास क्यों हो ?' तो फिर बताओ मैं क्या कहूँगी... ।

और न जाने कितनी देर पागलों की तरह मीना क्या-क्या बोलती रही ।

बाहर से टीना के रोने की आवाज़ आ रही थी । वह किसी बच्चे से झगड़ पड़ी थी । रत्ना मीना को यूँ ही छोड़ बाहर टीना के पास चली गई थी । उधर रोने की आवाज़ बन्द हो गई और फिर चारों ओर खामोशी छा गई ।

मीना ने उसी समय उठकर रेडियो लगाया और लेटकर एक पत्रिका पढ़ने लगी । पन्द्रह बीस मिनट के पश्चात् वह बालकनी में जाकर खड़ी हो गई । फिर कमरे में आकर रोने लग गई । उसे कोई होश न था कि रत्ना अपने दोनों बच्चों सहित उसी कमरे में बैठी उसकी यह सब हरकत देख रही थी ।